* जयजय सियाराम *

* जयजय सियाराम *

* जयजय सियाराम *

* जयजय सियाराम *

लेखक—सियारामरूपशरण 'सुहागलता'

* श्री प्रेमलतिकायै नमः *

॥ भूमिका ॥

सर्वप्रथम सर्गस्थित्यन्त कारिणी त्रिलोक जननी विधिहरिहरेन्द्र सुरासुरवन्दिता संततमनिन्दिता श्रीसाकेत विहारिणी आद्यापरामहाशक्ति श्री विदेह राजतनया जूके सहित परस्पर कटाक्षित सानन्दविराजमान दशस्यन्दननन्दन रघुनन्दन श्रीराघवेन्द्र जू महाराज परात्पर परब्रह्म श्रीरामजी के युगलचरणारविन्दचञ्चरीकायमान-श्री अञ्जनीनन्दन वीरभद्र श्रीहनूमन्तलाल जू महाराज को हृदय में स्मरण कर इस ग्रन्थराज की भूमिका लिखने के लिये श्री गुरु कृपा से -लेखनी उठाने का साहस कर रहा हूँ।

गुरु प्रभु की लीला अपरम्पार है। प्रभु यहाँ से लीला करके पधारते हैं तो अपने नाम, रूप, लीला, धाम रूपी चार सेतु भक्तजनों को अपने पास तक पहुँचाने के लिए छोड़ जाते हैं। उसी प्रकार गुरु देव भगवान जू के स्थूल शरीर के अभाव में उनका दिव्य ध्यान पूजा और उनका चरित्र ही भक्तजनों के लिये आधार भूत परम आश्रय और लक्ष्य की प्राप्ति कराने के साधन होते हैं। 'राम ते अधिक राम कर दासा'। भक्तमाल के चरित्रों को पढ़कर एक मार्ग का अनुसरण कर जिज्ञासू कल्याण पथ का पथिक बनता है।

'तुम्हतें अधिक गुरहिं जियजानी * सकल भाव सेवहिं सनमानी।'

के अनुसार गुरु महाराज का दर्जा प्रभु से बढ़कर ही होता है। क्योंकि

'बिनु गुरु भव निधि तरहिं न कोई * जो बिरञ्चि शङ्कर सम होई॥'

और इधर

'अस प्रभु हृदय अछत अविकारी * सकल जीव जग दीन दुखारी॥'

और

'राखे गुरु जो कोप विधाता * गुरु विरोध नहिं कोउ जग त्राता॥'

इसलिये गुरु शरण ही परम आश्रय और कल्याण कारी है। गुरु भक्ति से ही एक ही जन्म में प्रभु सामीप्यता प्राप्त हो सकती है, ध्यान गुरु का और नाम प्रभु का अवलम्बनीय है।

इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर यह सेवक श्री सदगुरू भगवान जू का चरित्र लिखने और प्रकाशन कराने की कर्तव्य परायणा-बुद्धि अग्रसर हुई। कुछ संक्षिप्त जीवन घटनाएँ भी महाराज जी के जीवन काल में ही सं० १९९७ वि० में उद्धृत हुई थीं। और तभी संकल्प किया गया था, कि बृहद् जीवन चरित्र फिर कभी प्रकाशित किया जायेगा। श्री महाराज जी की साकेत यात्रा २४ जौलाई सन् १९४१ ई० के श्रावण अमावस्या सम्वत् १९९८ वि० को हुई। इसके

पश्चात भाई साहब श्री सतगुरुरामशरण जी ने यह वृहद् चरित्र को लिखावने का प्रयास किया, और श्री मिथिला धाम के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री सीताराम दास जी द्वारा यह चरित्र कुछ लिखवाया गया। परन्तु दोनों की बीमारी के कारण अधूरा रह गया। भाई साहब के शरीर छुट जाने से यह काम अधूरा ही रह गया। वह लिखित चरित्र श्री सद्गुरु निवास सीतामढ़ी में आया। परन्तु फिर उसके दर्शन नहीं हुए, कहाँ गया। फिर भाई साहब सन्त शिरोमणि श्री सियारघुनाथ शरण जी की प्रेरणा और अनुकम्पा से उनके शिष्य विद्वान परिडत, महाराज जी के कृपा पात्र भक्त वर श्री जानकीनाथ शरण जी राँची निवासी ने संस्कृत में लिखा। सम्बत २००७वि०की मिथिला परिक्रमा में यह चरित्र संत समाज को सुनाया गया। सबने मुक्त कण्ठ से बड़ी प्रशंसा की परन्तु यह सम्मत दिया कि चरित्र भाषा में छपें, तो बहुत सुन्दर हो। भाव पूर्ण, सबको पढ़ने में सुलभ और समझने लायक हो। सब आचार्यों की जीवनी प्रायः भाषा में इसी कारण से पाई जाती हैं। बस सभा ने विशेषतः उक्त भाई साहब श्री सिया रघुनाथ शरण जी, श्री प्रिया प्रीतम शरण जी व श्री सीताराम शरण जी, अयोध्या वासी ने इस सेवक को आज्ञा दी, कि तुम यह कार्य्य वाहन कर सकते हो, करो। सेवक ने आज्ञा शिरोधार्य की। आशीर्वाद माँगा, और महाराज जी से विनती किया, कि इस महत कार्य को सांगोपांग विधि विधान पूर्वक लोकोपयोगी, सर्व हितकारी, प्रिय और शिक्षाप्रद बनवाने का सामर्थ प्रदान करें। अस्तु।

परिक्रमा से लौट कर काशी आकर शुभ मुहूर्त्त में यह कार्य्य प्रारम्भ हुआ। बीमारी में स्वप्न में श्री क़िले वाले महाराज जी दर्शन दिये, और चरित्र लिखने तथा कविता करने का आशीर्वाद दिये। कृपा अनुग्रह से चरित्र महाराज बहुत जल्दी ही प्रादुर्भूत हुए। (बी के० मित्रा गीता प्रेस गोरखपुर के आर्टिस्ट द्वारा कुछ चित्र निर्मान कराये गये, जो कि पुस्तक में दिये जाते हैं।)

चरित्र को पाँच खण्डों में बाँटा गया है, प्रथम खण्ड में गुरुपरत्व, द्वितीय में जन्म से गुरु प्राप्ति तक की कथा, तृतीय में शरणागति से सदगुरु निवास की स्थापना तक का चरित्र दिया गया है, चतुर्थ चमत्कार खण्ड में विशेष घटनाओं और चमत्कारों का उल्लेख, और पंचम खण्ड में संस्मरण— उपसंहार और साकेत यात्रा आदि प्रसंग रखे गये हैं। कुछ अन्तरङ्ग परिकरों का विवरण तथा सर्व व्याधिनाशक जन्त्र लोक हितकारी जान परिशिष्ट में दे दिया गया है।

महात्माओं की सम्मतानुसार श्री जानकीनाथ शरण जी कृत मूल चरित्र को पाठ करने के लिए आदि में दे दिया है, जिससे नित्य के अनुष्ठान करने वाले प्रेमियों को सुविधा हो।

आशा है कि सन्त, विद्वत्, भक्त, और जिज्ञासु, समाज इस ग्रन्थ को अपना कर २५००० नित्य नाम जपने का नियम लेंगे, तभी यह प्रयास का साफल्य होगा, और भक्त शिरोमणि नाम जापक परम विरागी वैष्णव धर्म दिवाकर नाम प्रचारक महात्मा का चरित्र-उपदेश सत्सङ्ग बचन देना सफली भूत होगा।

कहना नहीं होगा कि हमारे चरित्र नायक अपने समय के धुरन्धर, आचार्य—परम विरागी भजनानन्द, कवि और सिद्ध मूर्ति थे जैसा कि कविताई, भाव, उपदेश और चरित्र से प्रगट है। यह साक्षात् केलि कुञ्ज की यूथेश्वरी के अवतार थे, श्री किशोरी जी के परम अन्तरङ्ग सहचरी, उनकी इच्छा से ही जीवोद्धार करने, वेष व नाम का प्रचार और मिथिला धाम के तीर्थ और महात्म्य को पुनः उजागर करने को अवतिरत हुई।

यदि आपके चरित्र को पढ़कर पाठक भगवत शरणगति पूर्वक नाम जप के परायण नहीं हुए, तो कहना होगा उन्होंने श्रद्धा भक्ति और ध्यान पूर्वक ग्रन्थ को मनन नहीं किया, और हृदय उनका कठोर है।

अन्त में सहायक वर्ग को धन्यवाद देता हूँ विशेषतः श्री भाई साहिब सियारघुनाथ शरण जी श्री प्रेममञ्जरी जी को तथा सतगुरु कृपापात्र पं० जानकी नाथ शरण जी धन्यवाद के पात्र हैं, जिनका सहयोग, प्रकाशन भार, सलाह त्रुटियों की सम्भाल प्रशन्सनीय रही है। अर्थ सम्वन्धी सहायक गणों को जिनकी सूची परिशिष्ट में दी जाती है, सहायता प्रदान करने के लिये धन्यवाद। संस्मरण देने वाले व्यक्तियों को विशेषतः पं० उपेन्द्रनाथ जी मिश्र को इस प्रेम व परिश्रम युक्त उपहार के लिये वधाई है।

काशी
श्री गुरु पूर्णिमा
सं० २००८ वि०

विनीत—
सियाराम स्वरूप शरण
'सुहागलता'

विषय सूची

विषय पृष्ठ

"ॐ नमोगुरुभ्यो नमोहनूमते नमः सियारामनामाभ्याम्"

श्रीसद्गुरुचरितम्

'श्रीप्रेमलता वृहद् चारितामृतम्'

नाम

"चतुर्विंशति सर्गात्मकं महाकाव्यम्"

"सटिप्पणम्"

———*———

प्रणेता—

श्रीसद्गुरुचरण चञ्चरीकः

श्रीजानकीनाथ शरणः

उर्फ—मृत्युञ्जयनाथ शर्म्मा

"पिठौरिया" राँची निवासी

संकटमोचन काशी ।

ॐ नमोगुरुभ्यः

"निवेदनं किञ्चित"

विदाङ्कुर्वन्त्वत्रभवन्तोभवन्तो यदिदंग्रन्थरत्नं कीदृशम्प्रकोशितमिति, अत्रोच्यते, अस्ति-कश्चिद्बिहारप्रान्ते राँचीत्याख्यमण्डले, पिठौरिया नाम नगरम्। तत्रखलुशाकद्विपीयब्राह्मणकुलोत्पन्नः स्वपितुश्चतुर्षु पुत्रेषुद्वितीयोरामनाथमिश्राभिधः सञ्जातः। ह्यनिच्छन्नपि तद्विवाहः समभवत्, यथासमये वालश्चेकोमृत्युञ्जयनामधेयश्च। श्रोमथविगतेषुसम्वत्सरेषु "सियारामदासेत्याह्वयेन महात्मनोपदिष्टविरागः सन् सर्वान् त्यक्त्वा सद्गुरुमन्विष्यमाण स्तीर्थानिभ्राम्यन् काश्यामेव श्रीसद्गुरुमेतद् ग्रन्थनायकमवाप्तवान् ततश्चश्रीवैष्णवीयपञ्चसंस्कारान् श्रीसियाह्वयंनाथशरण—इत्या-नाम चावाप्य श्रीसद्गुरोः सेवायाञ्च कियत्कालं व्यत्येत्याखण्डफलाहारवृत्या, मौनावलम्बनेन च नित्यमेव सपाद लक्षमितं सियाराम नामस्मरणं कुर्वन् तीर्थानि भ्राम्यन्नपि स्वनियमं चकार। अथ श्रीचित्रकूटान्तिके वाँकेसिद्ध, इत्याह्वये, श्रीहनूमतः सिद्धपीठस्थलेऽखण्डनाम स्मरण नियमं कुर्वन्निराहारेण व्यत्येत्य, श्रीसीतारामयोर्दर्शनमवाप, तदाज्ञयाच, तस्मात्स्वदेशमागत्य भागवद्धर्मं (श्रीवैष्णवधर्मं) नाम संकीर्तनं हनूमतोध्वजोत्थापनादि प्रचारयन्, तत्रत्यान् बहून् जीवानुद्धारयामास। यस्यानुयायिनोभूरिशः एव समभवन्" तत्पुत्रस्तत्प्रसादादेवमृत्युञ्जयनाथ-शर्म्मेत्यपरनामधेयोजानकीनाथशरणः स्वपितुरेव पञ्चसंस्कारानवाप्य—पत्युर्मन्त्रंपितुर्मन्त्रं नोगृह्णीयात्कदाचन, इतिधर्मशास्त्र प्रमाणतस्तदाज्ञया श्रीसद्गुरुमेतद्ग्रन्थनायकमन्विष्यमाणो वाराणसीमागतस्तं साकेत गतमिति श्रुत्वा स्वपितुर्भ्रातृवर्य्यैः स्वामि श्रीसियारघुनाथशरणजीमहोदयैः समर्पितपञ्चसंस्कारः सन् जन्मान्तरमवाप, किञ्च व्याकरणायुर्वेद धर्मशास्त्रादि ग्रन्थान् पठन्नपि सत्सङ्गतेः प्रसादात् श्रीभगवतः नामस्मरणमेवेहजगतिसारमन्यत् सर्वमहङ्कारपोषकं भक्तिमार्गकण्टकमितिमन्यमानो विद्याध्ययनं हित्वा, नाम्नोऽनुष्ठान एव दत्तमना वर्त्तते, अनेनैवास्यहृद्यनुभव स्रोतस्विनीजागृता, महान्प्रमोदः समजनि मानसे, यः खलु वर्णनातीतः एव, इति तु ध्रुवमेव मन्तव्य विषयः सर्वेषांयन्नामस्मरणे-ब्राह्म वैष्णव-रौद्रैन्द्रादि विभूतिरपि सुलभा, किन्तु सद्गुरु विना तदसंभवमेवातः सद्गुरूणां महात्मनां सतां सङ्गः कार्य्योऽखण्डनामस्मरणञ्चेति—अथ विगतेषुवत्सरेषु श्रीसद्गुरोः कृपया नामस्मरणप्रभावाच्च, वहूनिसत्कार्य्याणि साधितानि, कवित्वशक्तिमवाप्यानेकेग्रन्थाः विरचिताः। श्रोमेकस्मिन् दिवसे, प्रातोनामस्मरणपूर्वकं पिठौरिया, ग्रामाद् वहिरुदिच्यांदिशि गच्छता मया यदैव पश्चिमाशामनुसृत्य दृष्टिर्नियोजिता, तदैवैकोऽद्भुतप्रकाशोदृष्टस्तत्र च जगद्गुरोर्भगवतः परमहंसजीवस्य स्वरुपं प्रत्यक्षीकृतम्, अथ दण्डवन्नमतोमकर्णेध्वनिरेकानुभूता, एतद्देशेनामप्रचारार्थं श्रीवैष्णवधर्मप्रकाशनार्थंञ्च त्वया श्रीरामार्चायज्ञः कार्य्योऽपरः सद्गुरुणां महात्मनाञ्चरित्राणिलेख्यानि, तच्छ्रुत्वाविस्मयाविष्टश्चतुर्दिक्षवद्राक्षं किन्तु कमपिनावलोक्य श्रीपरमहंसजीवस्यैवाज्ञेति विज्ञाय तस्मादेवदिनात्तत्कार्य्येदत्तचितस्तद्देशीयाञ्जनानुद्बोध्य श्रीरामार्चामहायज्ञाय प्रोत्साहना प्रदत्ता। श्रीसद्गुरुचरितं नामकाव्यमिदमन्यान् ग्रन्थाँश्चलेखने लेखनी धृता, श्रीसद्गुरोर्भगवतोमहात्मनां कृपया च विगतवर्षे श्रीरामार्चाभिधोयज्ञः, अयोध्यावासि-पण्डितवर श्रीसीतारामशरणस्वामिनः सद्गुरोर्महात्मनामन्येषाञ्चानुकम्पया पिठौरियाभिधेनगरे "राँचीमण्डले" सम्पादितः अपरञ्चेदं सद्गुरुचरितंनाम् ग्रन्थं रचयित्वा महात्मभिगुरुवर्य्यैर्दर्शयित्वा च तेषामाज्ञया,, श्रीसद्गुरोर्भाषाचरित्राग्रे प्रकाश्यते, एष एवास्यग्रन्थस्यावतरणक्रमोवर्त्तते, किञ्चास्य प्रकाशने ये खलु सहृदयाः भ्रातृवर्गाः साहाय्यं प्रदत्तवन्तस्ते भूयोभूयोधन्यवादार्हाः। प्रायेणमुह्यन्तिहि ये लिखन्तीति प्रमाणतः प्रमादवशादत्रयास्त्रुटयस्ताः क्षम्याः सद्भिरिति निवेद्यते— "श्रीसद्गुरुचरणचञ्चरीको जानकीनाथशरणः"

श्रीसद्गुरुचरितम्

"सटिप्पण" मूलग्रन्थकर्ता
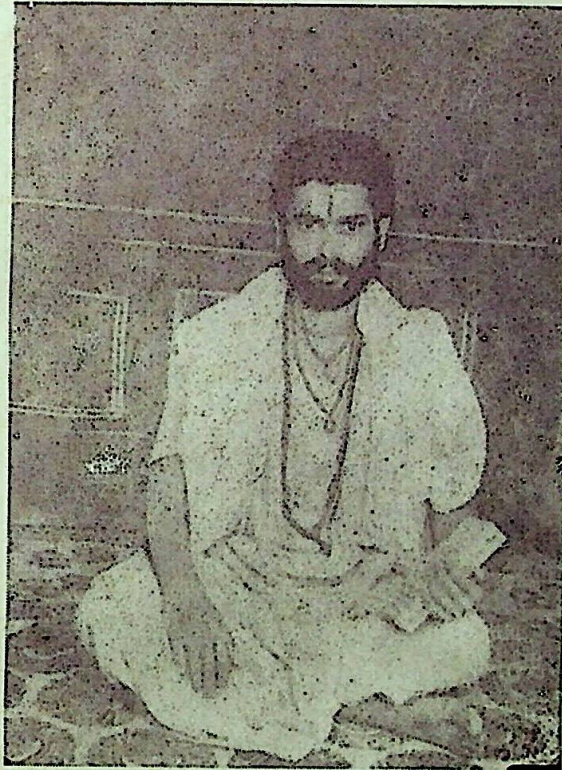
श्री जानकीनाथ शरण

"प्रेमअली"

संकटमोचन, बनारस

श्रीसद्गुरुचरितम् "श्री प्रेमलताचरितामृतम्"

सटिप्पण मूल ग्रन्थकर्त्ता—

जय सियाराम जय जय सियाराम
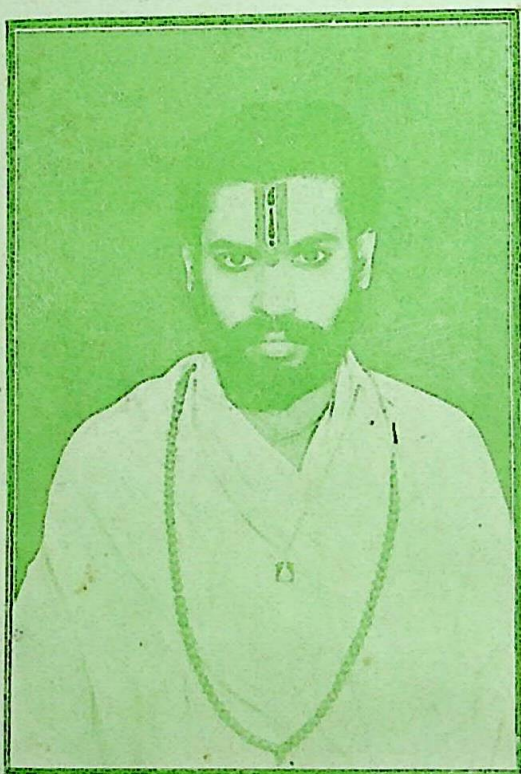
जय सियाराम जय जय सियाराम, जय सियाराम जय जय सियाराम

जय सियाराम जय जय सियाराम, जय सियाराम जय जय सियाराम

जय सियाराम जय जय सियाराम

श्री जानकीनाथशरण, 'प्रेमअली'

उर्फ

मृत्युञ्जयनाथ शर्मा,

पिठौरिया 'राँची, विहार' निवासी

संकटमोचन 'काशी'

श्रीप्रेमलतायैनमः।। ॐ नमोगुरुभ्यः-"नमोहनूमते" नमःश्रीसीताराम नामाभ्याम्।।

श्री सद्गुरु चरितम् "श्री प्रेमलताबृहद्चरितामृतम्"

(प्रथमः सर्गारम्भः)

(तत्रादौमङ्गलाचरणम्)

येनाकार्य्यशिला, शिलाऽजलमहो, वार्य्यम्बु हुतभुग्वनम्।
गेहं पङ्गुरपङ्गुको भवसरिन्नाथोऽपि गोष्पादवान्॥
माहात्म्यं नहि यस्य वक्तुमखिलं याताः विधीशादय--
स्तस्मै क्लिविषनाशनाय, सततं श्रीरामनाम्ने नमः ॥१॥

आदौ राममकारमीशमनघं विष्णुं वरेण्यं विभुं।
मध्ये श्रीजनकाधिराज तनयां मायामुकारात्मिकाम्॥
पश्चादेव मकाररूपमनुजं तत् पार्श्व-सञ्चारिणम्।
वन्देऽहं प्रणव-स्वरूपमखिलं तत्वत्रयं शाश्वतम्॥२॥

चन्द्राननां चन्द्रकलां चार्वङ्गीं चारुलोचनाम्। चारुशीलां विशालाक्षीं वन्दे सर्वेश्वरीं मुदा ॥३॥
यूथेश्वरीरहं वन्दे श्री-भूलीलादिकाश्चयाः। श्रीवैदेह्याः पराशक्तीः राघवेन्द्रानुमोदिताः ॥४॥
सीतारामौ समारभ्य रामानन्दार्य्य-मध्यगम्। अस्मदाचार्य्यपर्य्यन्तं नुमः श्रीसद्गुरूनपि ॥५॥
साम्बं शिवं हनूमन्तं गणपं भारतीं गुरून्। रामनामाम्बुधौमग्नान् प्रणमामिपुनः पुनः ॥६॥
श्रीपंक्तिस्यन्दनं वन्दे सपुत्रञ्चसपत्निकम्। अयोध्यां सरयूं शुद्धां तथातत्र निवासिनः ॥७॥
ततः सपरिवारञ्च जनकं मिथिलाधिपम्। वन्दे बुद्धि विशुद्ध्यर्थं ज्ञानिनं ज्ञानहेतवे ॥८॥
श्रीमद् युगलानन्य-प्रपन्नं तं जगद्गुरुम्। नत्वा वन्दे प्रपन्नेनजानकीवरमेवहि ॥९॥
श्रीरामवल्लभाशरणं(श्री) सियालाल-प्रपन्नञ्च। श्रीरघुनाथ प्रपन्नं वन्दे श्रीनाथ शरणंहि ॥१०॥
सीतारामाश्रयान् सर्वान् देवर्षिमानवान्खगान्। पशूँश्चापिनमस्कुर्म्मः स्थावराञ्जङ्गमानपि ॥११॥
मातरं पितरं देवान् पितृन् सर्वान् प्रणम्य च। गुरुकार्य्यंचिकीर्षुश्चाल्पज्ञोबालोरुणद्ध्यहो ॥१२॥
तथाशीर्दीयतां सर्वे भवन्तोजयदायिनः। लेखनीक-करोबालोहास्यत्वं नोव्रजेद्यथा ॥१३॥
विष्णु-ब्रह्म-महेश्वरेन्द्रगणप-श्रीवाक्-सहस्राननाःनोवक्तुं निगमागमाश्चसकलाःशक्तास्तदज्ञादयः॥
कृत्स्नं यस्ययशोऽमलं भगवतःश्रीसद्गुरोर्वैमहत्। चित्रं यत्प्रवदामि मूढ़धिषणोदुष्षड्विकारैरतः१४
ज्ञानंनास्ति न चास्ति बुद्धिरमला श्रीसत्यलोकेश्वरेशुद्धं नोऽपि मनाग्वदाम्यविरतंनानाम्यविज्ञोयतः
किन्तुश्रीगुरुदेव दिव्यकृपया श्रीजानकीशस्य सत्।साध्वेकं शरणं ममास्तिनिखिलेमोदप्रदानेवरम्। १५।

(श्रीप्रेममञ्जरी टिप्पण्यारम्भः) "तत्रादौमङ्गलाचरणम्"

पञ्चसंस्कार संयुक्तं पञ्चमुद्रा विधारिणम्। पञ्चकेशसमायुक्तं सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम् ॥१॥
ईषत् श्मश्रु युतं कूर्चं ईषत् केशावलम्बिनम्। ईषद्धास्य मुखं नित्यं सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम्॥२॥

(ग्रन्थक्रमः)

देशे ग्वालियराख्येऽस्ति नारेणाराभिधं-पुरम्। यत्रास्तिस्म द्विजेन्द्रैको मौञ्जीरामाभिधःसुधीः॥१६॥
वेद-स्मृति-सदाचार-दक्षः सद्धार्मिको व्रती। यशस्वी नीतिमान् शुद्धो निगमागम-पण्डितः॥१७॥
रामभक्तः सपत्नीको लब्ध्वापिसप्तकान्सुतान्। भावान्निर्वंशतां जातः कर्मणः पूर्वजन्मनः॥१८॥
पुत्राभावं समासाद्य शोकार्तश्चाति विह्वलः। नरकात्तारकः पुत्रोनोचेत्कोवांसमुद्धरेत्॥१९॥
इतिचिन्तां समारुह्य गत्वा श्रीराम मन्दिरम्। उभौतौदम्पर्त नित्यं तेपाथेपरमं तपः॥२०॥
निश्चिलं हि मनः कृत्वा निराहारेण नित्यशः। श्रीरामतारकं मन्त्रं जप्त्वाकालंविनिन्यतुः॥२१॥
एवं तयोश्च तपसा सन्तुष्टः श्रीनिकेतनः। व्योमवाण्याऽब्रवीद्रामो वरम्व्रूहीतिशोभनम्॥२२॥
तच्छ्रुत्वातौ वचोदिव्यं व्योमजातं प्रमोददम्। जगदुद्धारकं पुत्रंह्ययाचिष्टांततोह्युभौ॥२३॥
तथास्त्विति पुनः श्रुत्वा नमन्तौ पुलकान्वितौ। आजग्मतुर्गृहं स्वीयंमोदतोभक्तितत्परौ॥२४॥
कुर्वन्तौ यज्ञ-दानानि शृण्वन्तौ श्रीहरेः कथाः। पूजयन्तौ सुरान् विप्रान्भोजयन्तौस्थितौगृहे॥२५॥
तस्मिन्काले कलेर्भावान्मूर्तिमन्तोनिशाचराः। समजायन्त उद्दण्डाःगोरण्डाःयवनादयः॥२६॥
नास्तिकाश्च महाधूर्ताः वेदमार्ग-विदूषकाः। देव-तीर्थादि हन्तारो मन्दिराणांविभञ्जकाः॥२७॥
धर्म्महीना सदादीना पापाचाराकुलामही। विमुञ्चन्त्यश्रुधाराश्च ब्रह्मणः शरणंययौ॥२८॥
गत्वातत्र सुरेशाद्यैरावृतं चतुराननम्। दृष्ट्वाऽवदत् महत्कष्टं वेपमानास्वकं परम्॥२९॥

॥ ब्रह्मोवाच ॥

किंकर्त्तव्यं सुराः! येन दुःखमुक्ताभवेन्मही। इत्युक्ते ब्रह्मणिप्राह महायोगेश्वरः शिवः॥३०॥

॥ श्रीशङ्कर उवाच ॥

श्रीराम शरणं यामःस्तुत्वा प्राप्य च वाञ्छितम्। धरण्याश्च महाकष्टं त्वयंकुर्म्मोह्यसंशयम्॥३१॥

॥ ब्रह्मोवाच ॥

सत्यलोकेऽथवैकुण्ठेक्षीराब्धौयत्रलभ्यते। तत्रगन्तव्यमस्माकंद्रुतं निश्चिनुतांभवान्॥३२॥

॥ श्री शङ्कर उवाच ॥

तिष्ठत्यसौहि सर्वत्रव्याप्यमानश्चराचरे। तद् विहीनं नवैकिञ्चित्स्थानञ्चेतिमतंमम॥३३॥
यथादारु गतोवह्निः साधकैर्ज्वाल्यते मुदा। भक्तयाभक्तैस्तथारामः क्षमः प्रेम्णाप्रकाशितुम्॥३४॥
शङ्करोक्तं वचः श्रुत्वा साधुसाध्विति वादिनः। ब्रह्मादयः सुरास्सर्वेस्तुतिंकर्तुं समुद्यताः॥३५॥

॥ इति श्री जानकीनाथ शरणकृतौ श्रीसद्गुरुचरिते श्री प्रेमलताचरितामृते प्रथमःसर्गः समाप्तः॥

पीताभं पीत वसनं पीतं शय्यासनादिकम्। ऊर्ध्वं पुण्ड्रांकितं पीतं सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम्॥३॥
तुलसीदास शोभाढ्यं यज्ञसूत्रंलसद्गलम्। श्रीरामेति जपन्तं श्रीसद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम्॥४॥
रवितेजः समायुक्तं जानकी जयभाषिणम्। ब्रह्मानन्दाम्बुधौमग्नं सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम्॥५॥
भक्तार्तिघ्नं सदामोदं भवाब्धेस्तरणीतरिम्। श्रीमत्परमहंसं श्री सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम्॥६॥
सच्चिदानन्दवद्रूपं पूर्णं चन्द्रनिभाननम्। द्योतयन्तं दिशः सर्वाः सद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम्॥७॥
काशीस्थं हनुमत् पार्श्वे वैष्णवाचार्य्यभूषणम्।(श्री)रघुनाथ प्रपन्नं श्रीसद्गुरुं प्रणतोऽस्म्यहम्॥८॥

अथ द्वितीयः सर्गारम्भः

(मंगलाचरणम्)

।। देवा उचुः ।।

श्रीराम ! हे रघुपतेऽच्युत ! रावणारे ! राजेन्द्र ! भद्र ! जनतारण ! जानकीश !
वीरेन्द्र ! धीर ! भरताग्रजभद्रमूर्ते ! दीनाः वयं रघुपतेश्शरणागताःस्मः ।।१।।
श्रीशंभ्वक्षि-निर्गतहुताश-विनाशकारिन् ! अग्ने ! रवे ! पवन ! वारि ! धरण्यखण्ड !
आदित्यवंशजविभूषण ! कौशलेन्द्र ! दीनाः वयं रघुपतेश्शरणागतास्मः ।।२।।
सर्गान्त-पालन-चरणाम्बुजनेत्र ! जिष्णो ! मारीच-रामशिरदूषणताटकारे !
वन्द्यो विधे ! सुरगुरो ! दनुजान्तकारिन् ! दीनाः वयं रघुपतेश्शरणागताःस्मः ।।
सर्वस्वरूप ! करुणाकर ! हे चतुर्विंशत्यात्मरूपधृगरिष्टविनष्टशक्य ! ।।३।।
यूथेश्वरीभिरभितोनिजभार्ययासेव्योदीनाः वयं रघुपतेश्शरणागताःस्मः ।।४।।
सत्येश ! सर्वगत ! कर्मनिधे ! सुरेश ! सर्वेश ! शेष ! शुभवेष ! विशेष धामन् !
सिद्धः शिवोवर-वरेण्य शरण्य ! पाल ! दीनाःवयं रघुपतेश्शरणागताःस्मः ।।५।।
जयः जयप्रदो जेता जीवनो जन्मदायकः । जगत्कर्त्ता जगद्भर्त्ता जगतसाक्षी जगन्नुतः ।।।६।।
जय श्रीसत्यलोकेशः सदासेव्यः प्रतापमान् । शान्तः सिद्धेश्वरः सौम्यःसिद्धिदः श्रीनिकेतनः ।।७।।
वीरोवरेण्यको वन्धुर्वरो विज्ञोवृहस्पतिः । वेदज्ञो वेदमूर्तिश्च विद्या-बुद्धि-विशारदः ।।८।।
त्वमेव भुवन त्राता त्वमेव भूमिभार हृत् । ब्रह्मा विष्णुः शिवस्त्वंहित्वमिन्द्रस्त्वंदिशाम्पतिः ।।९।।
कालस्त्वं सर्वपालस्त्वं त्वमेवधर्मपालकः । ग्रहस्त्वं विग्रहस्त्वंहि त्वद्दतेनास्तिकश्चन ।।१०।।
सर्वस्त्वं सर्वरूपस्त्वं व्याप्यमानश्चराचरे । त्वमेव पूज्यसे लोकैस्तुभ्यं नित्यं नमोनमः ।।११
नमोलावण्य रूपाय श्री साकेत विहारिणे । सखीभिर्दिव्यरूपाभिः सेव्यमानायवैनमः ।।१२।।
नमोऽनन्तस्वरूपाय ज्योतिषाम्पतयेनमः । नमोनित्यं परंधाम्ने नमोनित्यं सशक्तये ।।१३।।
नमः पर ब्रह्मणेच सर्वलोकैक साक्षिणे । नमः सद्धर्म्म रूपाय भवाय भयनाशिने ।।१४।।
सर्वानन्द स्वरूपाय सर्व कल्याणकारिणे । नमोनमः प्रपन्नानाञ्जनानामार्तिनाशिने ।।१५।।
नमोदिव्य स्वरूपाय सर्वभूत स्थिताय च । नमो नमो नमोऽस्माकं सर्वेषाम्पतये नमः ।।१६।
इत्येतद् वदतां तेषां व्योमवाणी वभूव ह । युष्माभिः सुप्रसन्नोऽस्मि वरं ब्रूतयथेप्सितम् ।।१७।
तच्छ्रुत्वा विस्मिताः देवाः कथयामासुराशुतत् । कष्टस्तद्विनाशाय वरोनोदीयतामिति ।।१८।
अपरो भगवत्पादाम्भोजान्नोनोमनश्चलेत् । कथयन्तश्चते तत्र करवद्धाः मुदास्थिताः ।।१९।।
तथास्त्विति वचोदिव्यं सुश्रुवुर्व्योमजं पुनः । यथावः स्यात् शुभं कर्मध्रुवं कुर्य्यानसंशयः ।।२०।।
भवत्कष्टविनाशाय सद्धर्मस्थापनाय च । लीला नाम प्रकाशार्थे देवीं संप्रेषयाम्यहम् ।।२१।।
संवृते व्योम वाक्ये ते देवाः संतुष्ट मानसाः । संतोष्य धरणीं तस्मात्प्र जग्मुः स्वनिकेतनम् ।।२२।।
स्वस्मिन् स्थानेस्थिताःदेवाः धरण्यपिच सुस्थिता । सुमार्गेमृग्यमाणास्तेऽन्वहंश्रीमद्धरेःशुभम्।।२३।।

इति श्रीजानकी नाथ शरणकृतौ श्री सद्गुरुचरिताख्ये
श्रीप्रेमलता चरितामृते ग्रन्थे द्वितीयः सर्गः ।।

नं० श्रीप्रेममञ्जरी—जलन्धरस्येत्थं

तृतीयःसर्गारम्भः

(मङ्गलाचरणम्)

वन्दे प्रेमलतां शरद् विधुमुखीं संतप्तहेमप्रभां ।
श्रीसाकेत विहारिणींधरणिजाजानेःप्रमोदाकुलाम् ।
मुद्रां पञ्चविधारिणीं मधुरमामापञ्चसंस्कारिणीं ।
श्रीरामेतिपरेश नाम निरतां श्रीकेलिकुञ्जेश्वरीम् ॥१॥

॥ श्री साकेत वर्णनम् ॥

यत्र ॐ स्वर्णमयीभूमिः कल्पवृक्षैरनेकशः । वल्लरीभिः समाश्लिष्टैःफलैःपुष्पैर्विवर्द्धितैः ॥२॥
सौवर्णभवनैर्दिव्यमण्डपैर्मणिभूषितैः । स्थाने स्थाने वेदिकाभिर्वाटिकासुमनोहरैः ॥३॥

नं०१ "श्रीप्रेममञ्जरी,,:-जहाँकीॐभूमि दिव्य सुवर्णमयी है, अनेक २ कल्प वृक्षोंके ऊपर दिव्य अमरलताओंसे तथा सुन्दर पुष्प और फलोंसे सुशोभित हो रही हैं। स्थान २ पर दिव्य सुवर्णके ६-६ खण्डके प्रासाद-"मन्दिर" बने हैं, तथा बाटिकाएँ दिव्य मणियोंके मण्डप और वेदिकाओंसे सुशोभित हैं। सड़कोंके किनारे २ कल्पवृक्ष रसाल "आम्र,, अशोक कदम्ब, तमाल, नागकेशर आदिकी कतारें लगी हुईं, जिनमें अमरवेलि, अमर लताएँ लिपट रहीं हैं, सभी वृक्ष हरे भरे फूले फरे पृथ्वी स्पर्श कर रहे हैं। उक्त आम्रादि वृक्षोंमें किसीमें छोटे २ फल किसीमें कुछ बड़े और किसीमें सुन्दर पीले पक्के आम लटक रहे हैं। कोई वृक्षतो ऐसे हैं, कि जिनकी प्रत्येक शाखाओंमें ही भिन्न २ प्रकारके फल, फूल, मञ्जरी आदि लग रहे हैं। जिनमें बैठी हुई अनेक प्रकारके शुक पिक सारकादि पक्षियां विविध प्रकारकी वाणीसे उस दिव्य स्थलको झंकृत कर रहीं हैं। कोई कीर, तोते ऐसे हैं। जिनके सारे शरीर नीले हैं,

---

नं० २ श्रीप्रेममञ्जरी—ॐ

दो०.शेष महेश न सकहिं कहि महिमा प्रभु पुर केरि, वरणौं किमि मैं मंदमति बुद्धि विषय की चेरि।
नित्यधाम सियकेर यह सिय इच्छा अनुकूल, सिकुरत विकसत कमल सम सियरुख लखि सुख मूल॥

(चौ०) श्री साकेत नाम तेहिं केरा। गावहिं श्रुति जेहि सुयश घनेरा।
गऊ लोक के शिरो भाग पर। राजत श्री साकेत धाम वर॥
सब पर राजत केतु समाना। तेहि लगि श्रुति साकेत बखाना।
पीत वरन नभ जल थल रचना। अद्भुत अकथ न कहि सक वचना॥
सरित तड़ाग सुभग बहु बागा। देखत उपजत अति अनुरागा।
साठि हजार सरित शुचि वहहीं। दरश परस जिन्ह कर अघ दहहीं॥
मान सरोवर सोइ सुहाये। घाट मनोहर जात न गाये
मणिमय जटित ललित सोपाना। मज्जहिं निर्भय अलिगण नाना॥
सरित तड़ाग सुभग बहु वागा। देखत उपजत अति अनुरागा।

कूजद्भिःकोकिलाद्यैश्चगुञ्जद्भिर्भ्रमरैर्वरैः । शीतल-मन्द-सुगन्धैश्च वायुभिर्वारिशीकरैः ॥४॥
जलजन्त्रैरनेकैश्चाप्युद्वृत्तैर्दिव्यकन्दुकैः । मरुतान्दोलिताभिश्चदोलाभिः समलङ्कृता ॥५॥
भामिनीभिर्भ्रमन्तीभिर्गायन्तीभिस्सुशोभिता । वीणा मृदङ्गशङ्खाद्यैर्वाद्यैर्गीतैस्सुगुञ्जिता ॥६॥
वाटिकासु सवत्साभिश्चरद्भिः कामधेनुभिः । दिव्यैः सुवर्णसोपानैः सरोभिर्मानसैर्वरा ॥७॥
द्वियुक्सप्ततिद्वारैः कन्यकाभिः सुरक्षिता । नानारूपाणिवै धृत्वाखेलन्तीभिर्महोज्वला ॥८॥
सूर्य्येन्दु-वायु-दहन-निर्जरैर्वर्जितास्तिसा । देव्योयतः स्वरूपाणि चैषाधर्तुञ्चताः क्षमाः ॥९॥

नं० १किसीके पीले, किसीके लाल, किसीके काले किसीके आधे शरीर हरे, आधे लाल, जो पके, रसाल, बड़े बड़े आम्रफलोंके ऊपर बैठे हुए, चोंचसे फोड़ २ कर खा रहे हैं। भ्रमर बेलियोंसे, सुगन्धित दिव्य पुष्पोंकी कलियाँ टपक रही हैं, पुष्प स्तवकोंमें मधुकर समूह गुञ्जार कर रहे हैं। कहीं २ पर बड़े बड़े वृक्षोंमें रेशमके हिंडोर (झूले) लगे हैं, जिनपर दिव्य देवाङ्गनाएँ झूला झूल रही हैं, कोई बजाती, कोई नृत्य करती हैं,कोई गेंद उछालती,कोई दिव्य हरिणियोंसे खेलती तथा कतिपय, मणिमय सोपान निर्मित जलाशयोंपर विहार करती हैं। जहाँ पर शुक पिक सारिका राजहंसादि क्रीड़ा कर रहे हैं, तथा दिव्य पुष्पों पर भ्रमरावली गुञ्जार करती हैं, शीतल मन्द सुगन्धादि त्रिविध वायु बह रहे हैं। झरनोंसे जल प्रपात हो रहे हैं, जहाँ पर छोटी छोटी हरिणियाँ क्रीड़ा कर रही हैं॥ जगह जगह पर जल जन्त्रोंसे जलके फुहारे उड़ रहे हैं, तथा उसके ऊपर दिव्य सुन्दर २ गेंद उछल रहे हैं। बड़े २ ऊँचे वृक्षोंमें रेशमकी डोरी लगी हुई हैं, तथा झूले लगे हैं। स्थान २ पर वीणा, मृदङ्ग, शङ्ख, घंटादि वाद्य बजाती एवं सुन्दर रागिणियोंके द्वारा दिव्य गायन करती हुई, देव कन्याएँ विचरण कर रही हैं। वाटिकाओंमें हरे भरे दूर्वा घास चरती हुई, कामधेनु गण बछड़ोंके सहित विचरण कर रही हैं। कुञ्ज २ प्रति सुवर्ण सोपान विनिर्मित मान सरोवर विराजमान हैं, जहां दिव्य नील—

दो० विकसेउ पङ्कज रङ्ग बहु, गुञ्जत मधुप अपार, लताभवन सोहहिं विपुल, अलिगण करहिं विहार।

नं०२ चौ० मारग सकल स्वच्छ बहुतेरे। दोउ दिशि सुन्दर विटप घनेरे॥
फूले फरे हरे लहराहीं। विहरहिं ललना गण जेहि माहीं॥
ठाम ठाम जल यन्त्र फुहारा। चलत समय अनुकूल अपारा।
मारगविमल सुगन्ध सिंचाये। दोउ दिशि बेलैं विटप सुहाये॥
गलिनि गलिनि विरजा की धारें। कल्प तरुनि की लगी कतारें।
बन उपवन सर सरित सुहावन। अमल अनूप सोह बहु पावन॥
विपुल कुञ्ज सुख पुञ्जनिपूरे। मणि दीपक राजत बहु रूरे।
चहुँदिशि विविध विटप अमराई। विपुल जलाशय वरणि न जाई॥

दो० अष्टादश साकेत के, चहुँदिशि राजहिं कोट, अति उतंग पटुतेजमय, सवविधि अमल अखोट।
एक एक फाटक पर सखी, तैंतिस तैंतिस लक्ष, उमरमा सी राजहीं, बदलहिं एक एक पाख॥
कंचन के कोटिन भवन, विलग विलग चहुँओर, बने सुभग राजहिं तहाँ अलिगण अमित करोर

चौ० कञ्चन भवन जटित मणि सोहत। चित्रामणि लखि मुनि मनमोहत।
अति विशाल किमि कहौं उँचाई। अद्भुत रचना वरनि न जाई॥
मणिमय चित्र विचित्र अपारा। शोभित भीतिनि विविध प्रकारा।
दीपक मणिन केरि बहु भ्राजैं। भेरि शंख धुनि नौवत बाजैं॥

पाप पुण्ये न तत्रास्तो न चतुर्युग संभवः । न चापिलोक धर्म्मश्च व्यवहारो न लौकिकः ॥१०॥
लक्ष्मणा कमला वाणी वाशिष्ठी विरजावृतः सत्यलोकस्स यस्यांशाद् गोलोकाद्याः प्रतिष्ठिताः॥११॥
तन्मध्ये भवनं दिव्यं 'कनका' भिधमुत्तमम् । विद्युत्पुञ्जप्रभंशुभ्रं माणिक्याद्यैर्विभूषितम् ॥१२॥
रत्न सिंहासनं तत्र भातिरामाभिरावृतम् । यत्रास्ति भगवान् रामः श्री वैदेह्याकटाक्षितः ॥१३॥
ईषत् स्मिताननः शश्वत् किरीटकुण्डलान्वितः । श्याम पीताम्बर धरोनीलपद्मनिभेक्षणः ॥१४॥
पीत बिन्दुयुतश्चापि प्रियायाः श्याम बिन्दुना । रत्नाभरण संयुक्तोदेवस्त्रैलोक्यमोहनः ॥१५॥

नं०(१) कमल, श्वेत कमल, रक्त कमल, कल्हार, कुमुद, आदि पुष्प लगे हैं, जल पक्षीगण क्रीड़ा कर रहीं हैं, देव कन्याएं विहार करती हैं । जिस दिव्य धामके चतुर्दिक-चारों दिशाओंमें ७२ सिंहद्वार "अर्थात् प्रत्येक पूर्वादि दिशाओंमें १८-१८ सिंहद्वार लगे हैं" प्रत्येक द्वारपर ३३-३३ लक्ष देव-कन्याएँ श्री उमरमा, शची, शारदा,को मोहने वाली विराजमान हैं, उक्त देव कन्याएं ब्रह्मादि देवगणोंके रूप धारण कर क्रीड़ा किया करती हैं, एक २ द्वारमें १५-१५ दिवस रक्षार्थ नियुक्त रहनेके अनन्तर एक दूसरे द्वार पर इन सबोंका विपर्य्यय हो जाता है, अर्थात् बदल जाती हैं । वहाँ पर सूर्य्य, चन्द्रमा, वायु, आदि देवगणों की आवश्यकता नहीं पड़ती, कारण कि उक्त कन्यायें ही समयानुसार सूर्य्यादि देवगणोंके रूप धारण कर लेती हैं । वहाँ पर पाप पुण्य कृतयुगादि चतुर्युग, लौकिक व्रत, दान, यज्ञादि धर्म्म, एवं लौकिक व्यवहार नहीं होते ॥ वह धाम श्री लक्ष्मणा, श्री कमला, श्री सरस्वती

दो० विविध रङ्ग के जटित मणि परे झरोखनि जाल। कलश कँगूरा अमित शुचि शोभित सुखद विशाल
नं(२)चौ० महल मध्य सुन्दर सर सोहत । निर्मल नीर घाट मन मोहत ।
सावकाश चहुँदिशि फुलवारी । लगी ललित बहुभाँति सम्हारी ॥
दो० कनक भवन विख्यात जग राजहिंजहँ सियराम, तेहिकी उपमा योग नहिं अखिल लोक सुरधाम
(चौ०) पद्माकार सिंहासन चारू । लखिलाजहिं जेहि कोटिन मारू ।
तेहि पर सखिन सहित सिय सोहैं । बरनै छबि अस कवि जग कोहै ॥
एकइ पुरुष राम सब नारी । जहँ लगि दृष्टि परै तनुधारी ।
विरजा-पार होत अनयासा । सखी रूप पावत जन खासा ॥
दो० कोटिन भू-लीला-शिरी मंहारमा ब्रह्माणि। सेवहिं सियपद कमल नित अखिलेश्वरि जिय जानि॥
(चौ०) अखिल लोक लोकप प्रगटावै । ईश्वर ब्रह्म अनेक बनावै ।
आगहि ब्रह्म आपुही माया । बने एक ते रूप निकाया ॥
महलनि भीतर ते नहिं जाहीं । जिनके पुरुष भाव मनमाहीं ।
सखी भाव वारे श्रृङ्गारी । बसि महलनि सेवहिं पियप्यारी ॥
चन्द्र वदनि मृगलोचनि रमणी । रमहिं रामसँग रतिमद दमनी ।
कनक भवन के चहुँदिशि घेरे । इनके सदन बने शुचिनेरे ॥
दो० चन्द्रकला श्री लक्ष्मणा चारु शिला शशिभाल, हेमा, क्षेमा, यामुनी, मदनकला, रसमाल।
(चौ०) पद्मादिक गुणरूप निधाना । सियस्वामिनि की अलीं सुजाना ।
ये सब यूथेश्वरी सयानी । सेवहिं दम्पति पद प्रण ठानी ॥
चन्द्रकला श्री भरत सुजाना । चारुशिला जानहु हनुमाना।
ब्रह्मविष्णु शिव सुर मुनि भूपा । सेवहिं सियपद धरि अलिरूपा ॥

वेदैश्शास्त्रैरवेद्योऽसावुपमाभिर्विवर्जितः । स्वेच्छाचार परः श्रीमान् प्रसिद्धः पुरुषोत्तमः ॥१६॥
संजायन्ते विलीयन्ते ब्रह्मविष्णु-महेश्वराः । यस्यांशाद् यत्र चानन्ताः ब्रह्माण्डाः सचराचराः॥१७॥
परब्रह्मात्मको मायापतिर्भक्ताचिंभञ्जनः । देवीभिर्दिव्यरूपाभिः स्तुतश्चन्द्रकलादिभिः ॥१८॥
काश्चित्सेवापरास्तत्र काश्चिन्नृत्यपरायणाः । वीणा मृदङ्ग घंटानां काश्चिद् वादनतत्पराः ॥१९॥
आरातिंस्यं प्रकुर्वाणाः काश्चिन्माल्यान्करे धृताः।काश्चित्ताम्बूलपात्राणिचामरानछत्रकान्यपि॥२०॥
काश्चित्सौगन्ध्य-वस्तूनि गन्धपुष्पोद्भवानिहि । करबद्धाः स्थिताः काश्चित् श्रीसीतारामयोःपुरः ॥२१॥
स्नानं शृङ्गारकञ्चोपाहाराख्यं भोजनाह्वयम् । शयनंकेलि'हिंडोरौ'रासाख्यं शयनं शुभम्॥२२॥
अष्टास्वपिहि कुञ्जेषु स्नानादिषुपृथक् पृथक् । यूथेश्वर्यो विराजन्ते तासांनामानिवैशृणु ॥२३॥
कमलाविश्वमोहिन्यौ मन्मथाख्याकलात्मिका । विहारिणयुभयाख्यादौप्रोक्ता ज्ञानकलाशुभा ॥२४॥
ततःप्रीतिलता प्रेमलता श्री हेमवल्लरी । युगलाख्याप्रियाचेति यूथेश्वर्योमुदास्थिताः ॥२५॥
सर्वेश्वर्यौ चन्द्रकला चारुशीला ह्युभे स्मृते । वामे वामेतरस्ये श्रीसीतारामयोः पुरः ॥२६॥
रागिण्यः षट् सुरागाश्च वाद्यान्येवाखिलान्यपि । स्वरूपाणि गृहीत्वावै नृत्यगानपरायणाः ॥२७॥
जायतेयत्र वैरासः प्रमोदाख्ये वनान्तरे । तेषांनामानि हीमानि शृङ्गाराख्यं तमालकम् ॥२८॥
कदम्बश्च विहारश्चाप्यनङ्गोनागकेशरः । पारिजातोरसालश्च चम्पकश्चन्दनं तथा ॥२९॥
विचित्राख्योह्यशोकश्चारण्याण्युपवनान्यथ । वृन्दावनं यूथिकाच लवङ्गँकदलीवनम् ॥३०॥
चम्पाकुन्दं केशराख्यं वासन्ती सेवतीत्यपि । मागधीराज पुष्पाख्यं नेवारीति विराजते ॥३१॥

नं०(१) श्री सरयू, श्री विरजा आदि दिव्य देव नदियोंसे आवृत हैं । जिनका नाम श्री सत्यलोक श्रीसाकेतधाम है । जो स्वभावतः एक श्री सीतारामजीके इच्छानुसार वर्त्तते हैं । जिनके अंशांशसे अनन्त गोलोक आदिका निर्माण हुआ करता है, उसके मध्यमें श्री कनक भवन नामक दिव्य महल हैं जो "अनन्त कोटिविद्युत् प्रभा(बिजुलियों)के प्रकाशको भी तिरस्कृत करने वाले" अनेक पद्मराग नीलामणि हीरे आदिसे बने हुए हैं ।

नं०(२) नहि तहँ कर्म धर्म दम ज्ञाना । योग यज्ञ नहिं जप तपध्याना ।
जनम मरण नहि रोग वियोगा । नहिं तहँ पाप पुण्य कर भोगा ॥

नं० (३)चौ० केलि कुञ्ज की अद्भुत लीला । लखहिं नामरटिरसिक सुशीला ।
जो चरित्र मन वाणी पारा । कहि न सकत जेहि बदन हजारा ॥
दिखरावहिं कहि कहि मृदु बचना । अमित कोटि ब्रह्माण्डनि रचना ।
सप्तावरण भेद दिखरावैं । कोटिन शिवविधि विष्णु बनावैं ॥

नं० (४) जटित महामणि कञ्चन झूला । सब विधि सुखद प्रभुहिँ अनकूला ॥
तेहि पर हरषि चढ़े पियप्यारी । चहुँदिशि छाइ रही हरियारी ॥
दिये परस्पर दोउ गरबांहीं । झूलत भरे मोद मनमाहीं ॥
हरित शृंगार सुशोह समाजा । पहिरेउ नख-शिख सियरघु राजा ॥
दोउ दिशि पकरे ललना डोरी । देत सुपेंग बिहँसि मुख मोरी ॥
नाचहिँ अपर भरी अनुरागा । सब विधि अपन सराहहिँ भागा ॥

॥ श्रीराम एव पुरुषो ब्रह्माद्याः स्त्रिय एव च, (पद्म पुराणे, पाताल खण्डे —)

पूर्वोक्तेष्वष्टस्वरण्येषु रासोऽहिंडोरकोन्वहम्। सखीभिर्जायतेसाकं जानकी रामयोर्मुदा ॥३२॥
स्नानाख्ये कुञ्जके स्नानं शृङ्गारेऽसौततोऽपरे। उपाहारस्तृतीयेचापरे सुस्वादु भोजनम् ॥३३॥
पञ्चमेशयनं षष्ठे केलिर्भवति सर्वदा। हिंदोलः सप्तमे रासोऽष्टमे वै शयनं रहः ॥३४॥
रहस्याहैकदा षष्ठे कुञ्जे 'श्री' प्रेमलतां प्रभुः। केलि कुञ्जेश्वरीं देवीं मत्कार्य्यार्थंभुवंव्रज॥३५॥
सत्पुत्रार्थं तपः कर्तुं मौंञ्जीरामाभिधेगृहे। अवतीर्य्य भुवोभारं हृत्वावेदोक्तमुज्वलम् ॥३६॥
श्रीवैष्णवं परं धर्म्मं प्रभावं नाम-रूपयोः। लीलाधाम्नोर्जगन्मध्ये प्रसार्य्यागच्छसत्वरम् ॥३७॥
"निजपति-वर-वाक्यं संनिशम्याथदेवी, प्रियमथसुदधाना बद्धहस्ताब्जभूत्सा ॥"
पुनरपि युगलाख्ये पादपद्मे निपत्य, धरणितलमियेष ब्रह्मचर्य्या सुगन्तुम् ॥३८॥

॥ इति श्रीजानकी नाथ शरणकृतौ श्रीसद्गुरु-
चरिते श्रीप्रेमलता वृ० चरितामृते
तृतीयः सर्गः समाप्तः ॥

*रास इति कथनेन दृष्टान्तार्थं श्री चित्रकूटोद्भवः रासः महारामायणोक्तो वर्ण्यते,, तद्यथा-:

मुकुट पर्वत श्रेष्ठोमणिकाञ्चन चित्रितः। विराजते महादेवि ब्रह्मारुद्रादि पूजितः ॥१॥
मध्ये पर्वतराजस्य बहु योजन विस्तृते। वनानि नन्दनादीनि निर्मितान्यद्भुतानिहि ॥२॥
गिरिः श्री चित्रकटाख्यो यत्रमन्दाकिनीनदी। तयोर्मध्ये सुविस्तीर्णस्थलं त्रिंशद्धनुर्मितम् ॥३॥
धनुषाकारसंयुक्त धनुषोपरि संस्थितम्। एतत् क्षेत्रं प्रियतमे न कस्मैचित् प्रकाशितम् ॥४॥
रत्नसिंहासनासीनः श्रीरामः प्रिययासह। विराजते वरारोहे सखीभीरास तत्परः ॥५॥
सप्तावरण संयुक्ते मन्दिरे रत्नभूषिते। पर्वतस्यान्तराले वै विहारं कुरुते सदा ॥६॥
प्रथमावरणे चन्द्रकला चारुशिलादयः। श्रीसाकेतविहारिण्योर्भजन्ति ध्यानतत्पराः ॥७॥
द्वितीयावरणे नित्यं रमोमा वेदमातरः। महेन्द्राणि समायुक्ताः सेवन्ते जानकीपतिम् ॥८॥

नं० (२) जातिवर्ण नहिं आश्रम चारी। वेद पुराण न इन्दुतमारी।
कोटिन भवन विशाल सुहाये। जगमगात नहि जात सुहाये ॥

नं० (३) कबहुँ राम कृष्णादिक लीला। दिखरावहिं सब सखी सुशीला।
कबहुँ दिखावहिँ दश अवतारा। जेहि लगि भयेउ सो चरित उदारा ॥
कबहुँ उगावहिँ कोटिन भानू। कबहुँ करहिँ निशि तिमिर निधानू।
महा प्रलय कहुँ करि दिखरावैं। क्षणमह कोटिन अण्ड बनावैं ॥
दो० कबहुँ दिव्य प्राकृत कबहुँ अद्भुत अकथ सुख्याल, करहिँ अली आचरज मय अवलोकहिँ सियलाल॥

नं० (४) बोलहिं चातक दादुर मोरा। श्याम घटा छाई चहुँओरा।
कोकिल कीर सुबोलहिँ बानी। गुञ्जहिँ मधुप अमित सुखदानी ॥
हरित भूमि राजत चहुँओरी। सुषमा हेरि होत मति भोरी।
छाई लता तरुनि महि डारी। फूली फरी झुकी सुखकारी ॥
चमकहिँ तड़ित बलाहक बोलहिँ। बकनि पाँति जहँ तहँ नभ डोलहिँ।
झरना झरहिँ भामिनी गावहिँ। नाना विधि बाजने बजावहिँ ॥
सुषमा झूलन कुञ्ज सुकेरी। जानहिँ सोइ सपनेहुँ जिनहेरी।
दो० झींगुर शब्द सुनावहीं, उमड़े नदी तलाव, बादर धावत फिरत नभ झम झम बरसै आव ॥

(अथ चतुर्थः सर्गारम्भः)

(तत्रादौ मङ्गलाचरणम्)

नीलाम्भोजदलाभिरामनयनां नीलाम्बरालङ्कृतां,—
श्यामाङ्गीं द्विभुजां प्रसन्नवदनां विस्मेर बिम्बाधराम्।
कारुण्यामृतवर्षिणीं हरि हर ब्रह्मादिभि र्वन्दितां—
वन्दे भक्तजनेप्सितार्थफलदां रामप्रियां जानकीम् ॥

(ग्रन्थक्रमः)

देवीं प्रेमलतां पद्मामागच्छान्तीं विचार्य्यं हि ॥ शोभना धरणी जाता फलैः पुष्पैर्विवर्द्धितैः ॥१॥
गुञ्जद्भिर्भ्रमरैर्दिव्यैः कुजद्भि मुखरैः खगैः। शोभनैर्निर्मलैर्वातैः शीतमन्दसुगन्धिभिः ॥२॥

---

*तृतीयावरणे सर्वे ब्रह्मा विष्णु महेश्वराः। सखी रूपधराः नित्यं सेवन्ते रघुनन्दनम् ॥९॥
चतुर्थावरणे सर्वाः गंगाद्याः सरितोऽनिशम्। दिव्य रूपधराः सर्वाः दिव्याभरणभूषिताः ॥१०॥
जाह्नवी यमुना चैव नर्मदा श्री सरस्वती। कावेरी सरयू पुण्याभीमा भागीरथी तथा ॥११॥
गण्डकी चन्द्रभागाच तथा वेत्रवती शुभा। ससागराश्च सरित सखीरूपाः समाययुः ॥१२॥
पुलस्त्यः पुलहोव्यासः विश्वामित्रोऽङ्गिराभृगुः। ऋषिभिर्दिव्यरूपाभिः पञ्चमावरणेस्थिताः ॥१३॥
व्यासः पराशरः श्रृङ्गी वशिष्ठोनारदोऽत्रिजः। सखीरूपधरास्तत्र षष्ठावरण संस्थिताः ॥१४॥
विमला सुप्रभाचैवकान्ता कान्तिमतीशुभा। एतास्तत्रविहारिण्यः सप्तमा वरणेस्थिताः ॥१५॥
काचिद् वादयते वीणां मृदङ्गंचतथापरा। काचित्ताल्लं पूरयति काचिद्गानं करोतिहि ॥१६॥
काश्चिन्नृत्यन्ति चापर्णभामिन्यः प्रेमविह्वलाः। मण्डलं संप्रकुर्वाणास्तत्र क्रीडास्थलेशुभे॥१७॥

मन्दरपादप पराग विषिक्तमत्तैः भृङ्गावलीभिरुदितैश्च महाप्रमोदैः ॥
संसेवितं प्रमददं सुमरालमाल मञ्जीरनिः स्वनचयैः परिमृद्धगीतम् ॥१८॥
नृत्यन्ति दिव्यवनिताः परितो विबद्धरत्नावली लक्षित भास्वर वेदिकासु ॥
प्रामुग्धहास परिपेशलवक्त्रचन्द्र-पीयूष-पान-परिहूत-कुरङ्ग नेत्र्यः ॥१९॥
आवद्ध मौक्तिक मनेहर लोकमाला संशोभितेषु बदनेषु पुराङ्गणानाम् ॥
दिव्यन्ति गात्र शकलानि शुभानि तासां कल्लोलराजिषु मुखानि सकुंकुमानि ॥२०॥
नृत्यत्कपोलतटकुन्तल कान्तिभाजो भक्ताभजन्ति भगवच्चरणारविन्दम् ॥
श्री रामनाम निरताः परितोविशुद्धाः ब्रह्मेशविष्णु—परिसेवितमात्मरुपम् ॥२१॥
श्रीकान्ति कीर्तिगुणकीर्तनजातमोदास्प्रोच्चस्वरेण जयशब्द मुदीरयन्ति ॥
वाचामगोचरमनन्त विभूतिपूर्णमानन्द धामभगवत्पदम द्वितीयम् ॥२२॥

(महारामायणम्)

नं० २ राजहिं ललना गण तेहि माहीं। वृन्द वृन्द सिय की भुज छाहीं।
जब जब चरित करत प्रभु नाना। भक्तनि हित सियराम सुजाना ॥

शकुनैर्विविधैर्नित्यं वरं कालं सुशोचतुः । व्रताचारयुतौचोभौस्थितौ सद्धर्म्मतत्परौ ॥३॥
दृष्ट्वा सुशोभनां वेलांदेव्याः गर्भंप्रविश्य चः । दम्पत्यो मुंद मातन्वन्तीसा प्रेमलतास्थिता ॥४॥
सगर्भा सा ततोदेवी संस्मरन्ती हरेर्वरम् । प्रोत्फुल्लमनसापत्युश्चक्रे सद्धर्म्ममन्वहम् ॥५॥

वसु-द्वि-नन्दाङ्कमिते सुवर्षे श्रीवैक्रमीयेयशसश्च राज्ञः ।
धीरस्य वीरस्य महोज्वलस्य सद्धार्मिकस्यापि सुदानिनश्च ॥६॥
प्रावृड् ऋतौप्रौष्ठपदेऽसितेसद्भेरोहिणीमेप्यथ रौहिणेये ।
ग्रहेषुसर्वेषुचसद्गतेषु सीताभिधा देव्यजनिष्ट वालम् ॥७॥
सुशोभनोत्फुल्ल मुखारविन्दं दृष्ट्वा कुमारस्य महद्विचित्रम् ।
तेजोयुतं सद्विधिनाथ मौञ्जीरामोह्यकार्षीन्नवजात कर्म ॥८॥
गवान्नभू स्वर्णविनिर्मितानि दाननिप्रादात्खलुयाचकेभ्यः ।
संपूज्यदेवानथ भूमिदेवान् पितॄंश्चसर्वान्कुल पूजिताँश्च ॥९॥
मुदंदधत्सद्दशमे दिने स्ववालस्य नामापि दधार भद्रम् ।
श्री वालरामेति सुशोभनं सचक्रे सुकर्म्माणितदुत्तराणि ॥१०॥
सर्वेऽपितन्मण्डलवासिनोये वालश्चतं ददृशुरेकवारम् ।
देवातारं ह्यपि मन्यमानास्तत्तेजसातेमुमुहुर्वरेण ॥११॥
पिताहिं निर्माय सुजन्मपत्रं वालस्य शीघ्रं गणकैर्विचित्रम् ॥
दृष्ट्वाऽद्भुतं लक्षणमस्य विष्णोर्वचश्च संस्मृत्य मुदं दधार ॥१२॥
ससिद्धवालोऽसि सुवाल वृन्दैः संक्रीड़नार्थं व्रजतिस्मनित्यम् ॥
विद्याभिलाषी धनुषश्च मल्लस्याचार्ययुक्तः खलु कंदुकानाम् ॥१३॥
द्रष्टुंच पौराः कुशलं सुवीरैर्वालैः सदैनं परियोजयन्ति ॥
सम्यग् जितं चापिविलोक्य नित्यं मिष्टान्नपानैः परितोषयन्ति ॥१४॥

नं० (२) तत्र तत्र ते धरि रूप अनूपा । प्रगटहिं सङ्ग सुरुचि अनुरूपा ।
गुरु पितु मातु बन्धु परिवारा । वनहिंसदा दासादि अपारा ॥
लीला करहिं अमित तन धारी । ललना सियपिय सुरुचि निहारी ।
खग मृग भूषण वसन सुवासन । हय गज धेनु रथादि सुखासन ॥
अमित रूपधरि अलिसिय पियकी । जुगवति रहहिं सदा रुचि जियकी ।
तिन्ह के आनँद अकथ अतीवा । जानहिं रसिक न प्राकृत जीवा ॥
सदन सदन सुर तरु सुरगाई । आलिनि के सुख बरणि न जाई ।
कुञ्ज कुञ्ज महँ सिय रघुराई । निवसहिं एक एक ढिग सुखदाई ॥
झुण्ड झुण्ड मिलि कौतुक केली । करहि विविध विधि नारि नवेली ।
आलिनि कर आनन्द अपारनि । कहिन सकहिंश्रुति शेष हजारनि ॥
दो० कामधेनु चिन्तामणि, घरघर सुरतरु राज।सुर दुर्लभ सुख करहिं अलि पुरहिं सकल मनकाज ॥

("बृहद् उपासना रहस्यम्")

आजन्मनोऽस्याद्भुतमाशुशक्तिं धर्मानुरागं निगमागमेषु ॥
काव्येषु सद्धर्मयुतेषु सत्सु दृष्ट्वाऽवतारं हृदि मेनिरे ते ॥१५॥
पिता च वालस्य चकार कर्म यज्ञोपवीतादिकमाशु तस्य ॥
सिद्धस्य विज्ञस्यमहोज्वलस्य श्रीलाल वालस्य निजात्मजस्य ॥१६॥
दत्वासुवाले सकलं स्वतेजोहित्वा ययौतज्जनकश्शरीरम् ॥
श्रीसत्यलोकं विमलं सुरम्यं पञ्चाङ्कितो पञ्चगतिंदधानः ॥१७॥
माता च शोकं प्रचुरंदधाना चकार कर्म्माणि तदुत्तराणि ॥
ससिद्धवालोऽपिच पैतृकं यत्कृत्यं सशोकस्स चकार योग्यम् ॥१८॥

॥ इति श्री जानकीनाथशरणकृतौ श्री सद्गुरुचरिताख्ये
श्रीप्रेमलता वृ० चरिताष्टते चतुर्थसर्गःसमाप्तः ॥

——:-※-:——

(पञ्चमः सर्गः)

(मङ्गलाचरणम्)

वज्राङ्गं पिङ्गनेत्रं कनकमयलसत् कुण्डलैः शोभनीयं—
सर्वापीठाधिनाथं करतल विधृतं पूर्ण कुम्भंदृढाङ्गम् ।
भक्तानांमिष्टकार्य्यं विदधति च सदासु प्रसन्नंहरिशं—
त्रैलोक्य त्राणकामं सकल भुविगतं रामदूतंनमामि ॥

(ग्रन्थक्रमः)

पितुरनन्तरमन्वयुतश्सुधीर्बुधवरैर्निजगोत्र कुटुम्बकैः ।
न्यवसदेत्य हरेश्शरणान्तिकंसहदैवसहिष्णुरसौशिशुः ॥१॥
एकस्मिन्दिवसे माता गणकेनास्य कुण्डलीम् । दर्शयित्वा शुभान्यस्याऽपृच्छद्यान्यङ्कितानिहि ॥२॥
सम्यग् विचार्य्यं देवेज्ञश्चित्रंमत्वामहद्धृदि । संभाव्यतेऽवतारोऽयमिमिति होवाच तां प्रति ॥३॥
यदि सप्तदशाब्दश्च त्रिंशत् क्राम्येदयंशिशुः । पूर्णायुषंसमावाप्यमहर्षित्वं व्रजेद् ध्रुवम् ॥४॥
लब्ध्वानगद् गुरुत्वञ्च जीवान् सन्तारयिष्यति । सिद्धानाञ्चमहर्षीणांग्रहास्सन्त्यत्र सुस्थिताः ॥५॥
तच्छ्रुत्वाऽल्पायुषोयोगं बालस्याद् भुतकर्म्मणः । शोचन्त्युपायं पप्रच्छकथंशान्तिर्भविष्यति ॥६॥
दैवज्ञःप्राह बालश्चेद् भगवद्भक्तिमाचरेत् । तदा योगो विनष्टः स्याच्छ्रीहरेः कृपयास्यहि ॥७॥

श्रुत्वेदं वचनं तस्य मातरं बहु दुःखिताम् । दृष्ट्वाऽपृच्छन्मुदावालोभगवद्भक्ति-सद्विधिम् ॥८॥
सतां सङ्गाच्चसालस्या तेनोक्तं स कुमारकः । संतोष्य मातरंशीघ्रमन्वेष्टुं सद्गुरुं ययौ ॥९॥
श्रीहरेःकृपया श्रीमद्बलदेवाभिधं गुरुम् । प्राप्यतस्मै निजं वृत्तं कथयामास गह्वरे ॥१०॥
महात्मापि भविष्णुं च बालंदृष्ट्वाविचार्य्यहि । सीतारामेति सन्मन्त्रंनामाख्यं प्रादिदेशह ॥११॥
तत्रस्थं श्रीहनूमन्तं चोक्तं मन्त्रमहर्निशम् । संश्रावयितुमेकान्ते प्रैरयद्बालमद्भुतम् ॥१२॥
बालः श्रीबालरामोऽपि सीतारामेति नामकम् । संश्रावयन् स्थितस्तत्रहनूमन्तमहर्निशम् ॥१३॥
द्वादशाब्दात्मको बालो नियमं स चकारह । नाम्नःपाठस्यसत्संगस्यापि तद्दर्शनस्य च ॥१४॥
आगत्य प्रत्यहं तस्मादेकवारं सुभोजनम् । कुर्वन्स्वनियमं कृच्छ्रंचकाराद्भुतसिद्धिदम् ॥१५॥
दिनैकस्मिन् गुरुं प्राहसद्विद्यां पाठयस्वमाम् । तेनोक्तं सिद्धिदेद्वारे प्रवेशस्तावकोऽस्तिहि ॥१६॥
विचार्य्यैवं हनूमन्तं प्रार्थनां पाठनाय सः । चकार मनसा वाचा कर्मणा विधिनाऽन्वहम् ॥१७॥
परस्मिन् दिवसे शुद्धे मङ्गले मङ्गलाह्वये । ब्रह्मचारी स्वरूपधृग् हनूमाँस्तत्रचाययौ ॥१८॥
उर्ध्वपुण्ड्रं दधद्भाले तुलसीमालिकांगले । पीतवस्त्रैर्यज्ञसूत्रैश्शोभितं पुस्तकं करे ॥१९॥
दृष्ट्वा तेजस्विनं पादौ प्रणिपत्य च सादरम् । मन्यमानो हनूमन्तं बालो मोदंसचाप्तवान् ॥२०॥
ब्रह्मचारीस तन्मूर्ध्नि संस्पृश्याशीर्वचोब्रुवन् । अब्रवीत् शोभनं वाक्यमगमँस्त्वाञ्चपाठितुम ॥२१॥
नोचद् ब्रूयास्त्वमन्येभ्यस्तदाहं मङ्गले दिने । तवान्तिकं समागत्य मध्याह्ने पाठयाम्यहम् ॥२२॥
तच्छ्रुत्वा विस्मयाविष्टः प्रणिपत्यच सादरम् । स्वीकुर्वन्स पपाठासौरहः पाठेनचाखिलम् ॥२३॥
प्रथमे वा परे वापि तृतीये मङ्गलेह्नि सः । पुस्तकं पाठयामास स्वरादीनां गिरर्थिने ॥२४॥
चतुर्थे मङ्गले रामायणं चानीय सादरम् । पाठयन् सुन्दरंकाण्डं दिव्यश्चदत्तवान् वरम् ॥२५॥
भूयास्त्वं पण्डिताधीशोह्यखिले निगमागमे । रामायणमिदं कृत्स्नं वेत्स्यसीतिब्रवीम्यहम् ॥२६॥
श्रीरामनामतः कृत्स्नां सिद्धिप्राप्यसुवाञ्छितम् । सत्कवित्वं प्रयाहीति चापरंमद्वचः शृणु ॥२७॥
तच्छ्रुत्वाशोभनंवाक्यं मोददं शान्तिदायकम् । तत्पादौ प्रणिपत्याह पाहि पाहीतिमांसदा २८॥
बालमाभाष्य सद्वीरोहनूमान् भक्तवत्सलः । अन्तर्दधौसबालोऽपि सुमनाः गृहमाययौ ॥२९॥
नामरटन् सत्यमनाः रामहरेः प्रेमभजन् । वीरमणेर्भूरि पुरः सह्यमवन्मोदयुतः ॥३०॥

(इति श्री सद्सद् गुरुचरिते श्रीप्रेमलता
चरितामृते ५ सर्गः समाप्तः ।)

(षष्ठः सर्गः)

(मङ्गलाचरणम्)

वामेभूमिसुता पुरस्तु हनुमान् पृष्टे सुमित्रासुतः। शत्रुघ्नोभरतश्च पार्श्वदलयोर्वाय्वादिकोणेषुच ॥
सुग्रीवश्च विभीषणश्च युवराट्तारासुतोजाम्ववान्।मध्येनीलसरोज कोमलरुचिं रामंभजेश्यामलम्॥

(ग्रन्थक्रमः)

"चरित-नायको बालकस्ततो,. रहसिसोह्यभून्नामतत्परः ॥
पवन-नन्दनाग्रे वसन् सदा,, नियमसंयुतोगतविकारकः ॥१॥

नामानौ स्वर्णकारौ गोपालनन्दकिशोरकौ। आस्तान्तस्मिन् शुभेग्रामे निजकर्म विशारदौ ॥२॥
धनिनां महतां स्वर्णराजतानामनेकशः। अलङ्काराः सुनिर्मातुमायान्तिस्मदिने दिने ॥३॥
एकस्मिन्दिवसे चौराः ह्यलङ्कारस्य पेटिकाम्। जहु स्तेदुष्ट कर्माणोविपन्मूलं प्रदायिकाः ॥४॥
शोकार्त्तौ तौ समागत्य कथयामासतुः स्वकम्। कष्टं चरित्रनाथं श्रीसिद्धवालं विधानतः ॥५॥
ताभ्यां प्रोवाच श्रीरामनामप्रेम्णात्र्यहं मुदा। हनूमन्तं श्रावयस्व तदा सर्वंहिप्राप्स्यथः ॥६॥
इति तद्वचनं श्रुत्वात्र्यहं श्रीरामानामकम्। अञ्जनीनन्दनाग्रे तौ श्रावयामासतु मुंदा ॥७॥
तूर्य्येऽह्नि वीरभद्रस्य प्रसादात्तस्कराश्चते। राजदूतैस्ताड़िताश्चददुः सर्वंहृतञ्चयत् ॥८॥
प्रसन्न वदनौ चोभौ पादयोः पेततुस्तथा। सिद्ध वालस्य तौ दिव्यं शरणञ्चवभूवतुः ॥९॥
तस्मादारभ्य तौ श्रीमद् रामनामानुकीर्त्तनम्। कुटुम्बिभिस्सहस्राख्यैः कुर्वन्तौ नामजापकौ ॥१०॥
महात्मनां सतां सङ्गात् दिव्यांभक्तिञ्चप्राप्यतौ। सदामोदान्वितौ लब्ध्वा हरेर्धाम ननन्दतुः ॥११॥
काशीनाथ इतिख्यातोद्विजश्शास्त्र विशारदः। तस्मिन्नेवशुभे ग्रामेह्यासीत्काव्यगुणान्वितः ॥१२॥
मुग्धो वालस्य सद्भावे छन्दसांरचनासुच। सुविचारेषु वैतस्य चरित्रनायकस्य सः ॥१३॥
समस्याञ्च दढांदत्वा तूर्णं प्राप्यसुपूर्तिकम्। मनस्यहर्निशं चित्रं प्रयातिस्म दिने दिने ॥१४॥
सुविचार्य्य दृढं दिव्येऽद्भुते तस्यचकर्मणि। देवानामवतारं तं मन्यमानो मुदास्थितः ॥१५॥
दुष्टेनैकेन केनापि पण्डितस्सद् गुणान्वितः। परस्त्रीगमनस्यैव लाञ्छनं प्राप्यनीतिगात् ॥१६॥
भवनाद्भयभीतोऽसौ वालस्य शरणंययौ। तमूचे बोधयन् वालो 'यत्रसत्यंजयोध्रुवम् ॥१७॥
माखिदत्वञ्चश्रीरामनाम नित्यं जपस्वहि। तथाकृतेसदुष्टोहिभूत्वोन्मत्तः स्वभाषितम् ॥१८॥
असत्यंस्व वचःकुर्वन् न्यायाधीशायवोधयन्। शरणंह्ययायौ तस्यपण्डितस्यमहात्मनः ॥१९॥
पण्डितो पि महच्चित्रं मत्वाश्रीरामनामकम्। जप्त्वाप्राप्यपरांसिद्धिं लेभे भक्तप्रसादतः ॥२०॥
राधालालेन विदुषा प्रार्थितस्सतदुत्तरम्। ददातिस्महि तेनासौ तुष्टोयातिस्मनित्यशः ॥२१॥
निजवृत्तिसु सम्मुग्धं धनिकञ्चसुदर्शनम्। भाव श्रीरामनाम्नश्चाऽदिश्यानन्दमदाद्धृदि ॥२२॥
योगमभ्यस्यतद्वृत्ते सुविज्ञोऽभून्महात्मभिः। पठित्वातत्प्रणीतांश्च ग्रन्थान् रामायणादिकान् ॥२३॥
कथाश्चकथयित्वा सौरस्याः रामायणस्य च। मानसे विदुषां चित्रंचत्तेस्म कृपया हरेः ॥२४॥
सुविद्वांसश्चते चापि ह्यनेनेवेतुसत्कथाः। कथयामासुरानंदाद् वारं वारं प्रयत्नतः ॥२५॥

इति श्री जानकी नाथ शरण कृतौ श्री सद्गुरु-
चरिते श्री प्रेमलता चरिता मृते-
षष्ठः सर्गः समाप्तः।

[सप्तमः सर्गः]

मङ्गला चरणम्

श्री राम हृदयानन्दं भक्त कल्प महीरुहम् ।
अभयं वरदं दोर्भ्यां कलये मारुतात्मजम् ॥

(ग्रन्थक्रमः)

एवं दिनान्यगमयत् श्री रामेति- जपन्सदा । सदाचार रतोदिव्यं कुर्वन् सत्सङ्गकं शुभम् ॥१॥
शतमष्टोत्तरं प्रेम्णा श्रीमद्रामायणस्यहि । नवाह्निकं चिकीर्षुश्चाल्यायुषोयोगमाप्तवान् ॥२॥
प्रवाहिका-रुजं लब्ध्वा सक्थिमात्रं स्थितश्वसः । कृत्यं च दैहिकंसर्वं स्वेनैवापि चकारह ॥३॥
सन्तोष्य जननीं वृद्धां निजदुःखेन दुखिताम् । श्री रामेति परैर्मन्त्रैर्हनूमन्तं न्यवोधयत् ॥४॥
तच्छ्रुत्वा वीरभद्रोऽपि "बलदेव" स्वरूपधृक् । समागत्य च तत्पार्श्वे शिरःस्पृश्याऽब्रवीद्वचः ॥५॥
वत्स ! तुभ्यं प्रसन्नोऽस्मि भद्रं वत्सवंगतामयः । विस्मर्तव्यं न श्री रामनामाहं संव्रजान्यहम् ॥६॥
इत्युक्त्वा तारकं ब्रह्ममन्त्रं दत्वाऽब्रवीद् वचः । गुरुणा लप्स्यसे सम्यक् ततश्चान्तर्दधे पुनः ॥७॥
वासरान् पञ्चषान् पश्चान्निरुजत्वान्निजंबलम् । सम्प्राप्य दर्शनार्थञ्च बलदेवमुपाययौ ॥८॥
वृत्तं तदखिलं तस्मै गुरवे प्राह सादरम् । विस्मयं परमं लब्ध्वा श्रीगुरुः प्राह तं प्रति ॥९॥
त्वत्सकाशंनगतवान् जानामीदं नचाखिलम् । धन्योसिरक्षितोऽसि त्वंभद्र एवहनूमता ॥१०॥
जीवनं सफलंमन्ये त्वदीयं रामनामतः । तस्मै चेत्यभिधायासौ श्रीरामेति जपन्स्थितः ॥११॥
प्रणिपत्यगुरुं वाक्यं श्रुत्वातत्र गुरोर्मुदा । जाताह्लादोन्यवात्सीत्स गत्वावै स्वगृहंशुभम् ॥१२॥
वृद्धायाश्च जनन्याश्च मनस्तीर्थाटनात्मकम् । विज्ञाय चभ्रस्मँतीर्थं ह्यनूपनगरंययौ ॥१३॥
काशीनाथस्यविदुषोभवने संस्थितो मुदा । श्रीमद्भागवतीवार्ता सत्सङ्गं स चकारह ॥१४॥
हरिद्वारं जिगमिषुश्चमहामारी भयाद् गृहम् । समातृकस्समागत्य जपन्नस्तिस्म नामकम् ॥१५॥
एतस्मिन् दिवसे माता मुक्त्वास्वीयं शरीरकम् । जगाम भुवनदिव्यं श्रीसाकेतं सुशोभनम् ॥१६॥
आजन्मनो हरेस्साक भावं शृंगारकं वरम् । दधत्स पञ्चकेशांश्च पीतवासांस्यतोऽन्वहम् ॥१७॥
क्षौरकर्मभयान्मातुर्दाह संस्कारमन्तिमम् । नाकृत्वाऽकारयद्दुर्गा प्रसादेन कुटुम्बिना ॥१८॥
कारयित्वाचतच्छ्राद्धं भोजयित्वा द्विजान्वरान् । स्वीयं वित्तञ्चतत् सर्वं कुटुम्बेभ्योह्यदान्मुदा ॥१९॥
विवाहाथ प्रयत्नाश्च कृतास्तेनिष्फला ययुः । ह्यस्मै श्रीमद्वैष्णवाय श्रीरामनाम सेविने ॥२०॥
श्रीरामशरणं लब्धुं निर्गत्य ग्रामतो वहिः । पौर्वं स्थानं समागत्य श्रीरामेति जपन् स्थितः ॥२१॥
वीरभद्रं हनूमन्तं श्रावयन् रामनामकम् । श्रीमद्रामायणञ्चापि तपः कृच्छ्रं चकार ह ॥२२॥
धृत्वा वाचंयमत्वं स कुर्वन्निन्द्रियनिग्रहम् । निराहारत्वमासाद्य मासान्तं विनिनाय हि ॥२३॥
कदापि विल्वपत्राणि दूर्वाश्चापि यदा कदा । निम्बं पत्रञ्चकन्दं वा भुक्त्वानामपरोऽभवत् ॥२४॥
भ्रमन्नुपत्कायां स दासान्तं वल्लभाह्वयम् । महात्मानमुपागत्य नत्वाऽतिष्ठत्पुनस्ततः ॥२५॥
स्मरन्नित्यंनाम जनकतनयेशस्य चतया । मुखाद्व्याचार्य्येण विहित नियमोनाम जपताम् ॥
मिताहारेणासौ जितरस विकारोह्यहरहोऽनुरक्तोऽभून्नाम्नि विगतदशदोषस्सुमनिमान् ॥२६॥

इति श्री जानकीनाथ शरण कृतौ श्रीसद्गुरु-
चरिते श्रीप्रेमलता चरितामृते
सप्तमः सर्गः समाप्तः

[अष्टमः सर्गारम्भः]

(मङ्गलाचरणम्)

यत्र यत्र रघुनाथ कीर्तनं, तत्र तत्र नतमस्तकाञ्जलिम्।
बाष्पवारि परिपूर्ण लोचनं, मारुतिं नमत राक्षसान्तकम्॥

(ग्रन्थक्रमः)

हनूमदग्रे नामरटन् गुर्वनुरक्तो मोदयुतः॥
नान्य-मनोरक्तोयञ्चहरेः कामयमानोदर्शनकम् ॥१॥

वृत्तिंमहात्मनो दृष्ट्वा भूयसीं नामसाधिकाम्। पञ्चसप्तत्युत्तरेण लक्षं श्रीरामनामकम् ॥२॥
प्रसन्नोभून्महाँस्तेन स्थितस्तत्र कुमारकः। रहस्यं परमं लब्ध्वा रामनाम्नः सुशोभनम् ॥३॥
एकदा तञ्च पप्रच्छ सिद्धबालो मुदान्वितः। श्रीरामदर्शनं केन प्रकारेण भविष्यति ॥४॥
उचेऽसावशनं वारि शयनं त्रीणिसंत्यज। यावन्नो दर्शनं तावच्छ्रीरामेति जपस्वचेत् ॥५॥
तद्दर्शनं ध्रुवं प्रेम्णा लप्स्यसे नात्रसंशयः। इत्थंतद्वचनं श्रुत्वाऽनुष्ठानं कृतवाँश्च सः ॥६॥
दिनानि त्रीणि तेनैव व्यतीयुस्तत्क्रमेणहि। मध्याह्ने स चतुर्थेऽह्नि निद्रामीषत्सलब्धवान् ॥७॥
ह्यवस्थायाञ्च तस्यां वैकोटिसूर्य्यद्युतिंदधत्। दृष्ट्वा तत्रमहत्तेजोविशिष्टाद्वैतसंयुतम् ॥८॥
सीतारामौ लक्ष्मणाञ्चाऽपतद्भूमौ तदन्तिके। श्रीराम प्राह तं तत्र पतितंपादयोः पुरः ॥९॥
कष्टं मा कुरु मन्नामगृह्णन् जीवान्समुद्धर। प्रकाशयँश्च मन्नामजयश्रीरामनामकन् ॥१०॥
समीपस्थं च मांविद्धि हीत्युक्त्वाऽन्तर्दधेततः। निद्रां विहाय स मोदं लब्ध्वा नाम जपन्स्थितः॥११॥
हरेर्लीलां स्वरूपञ्च नाम्नो भावं प्रकाशयन्। चचार पूर्ववत्तत्र जपन् श्रीरामनामकम् ॥१२॥
एकस्मिन् दिवसेऽयोध्यावासिनाऽनन्त श्रीभृता। स्वामि श्री युगलान्य शरणेन प्रणोदितः ॥१३॥
स्वप्ने ऽशृणोत्प्रसन्नोऽस्मि तुभ्यं श्रीनामनिष्ठया। दृढीकर्तुं प्रदास्यामिभावंमत्पुस्तकंमहत् ॥१४॥
श्री सीतारामनाम्नश्च प्रकाशाभिधमुत्तमम्। येनाखिलं दधन्मोदं सदात्वं यास्यसीष्टकम् ॥१५॥
स्वप्नादुत्थाय स प्रातः केनापि ब्राह्मणेनहि। पुस्तकं प्राप्य तत्प्रोक्तं साङ्गोपान्तं पठन्स्थितः ॥१६॥
नाम्नः सद्भावकं लब्ध्वा जिघृक्षन्मन्त्रराजकम्। पुस्तकस्य प्रणेतारं गुरुं कर्त्तुं व्यचारयत् ॥१६॥
स्वप्ने मारुतिना सम्यङ् मन्त्रराजं गृहाण हि। गत्वाऽयोध्यां चगुरुणोपदिष्टोमोदमाप्तवान् ॥१७॥
तत उत्थाय सतूर्णंतकृत नित्य क्रियो मुदा। प्रोत्फुल्लमनसा नाम स्मरन् स्वकर्मचिन्तयन् ॥१८॥
चित्रकूटं गन्तुमिच्छन् हनूमन्मन्दिरं ययौ। प्रार्थयामास तं स्वामिन् सदा मां रक्षसीति च॥१९॥
भूयान्मनोरथो मे तु सफलं वाञ्छितञ्चयत्। श्रीरामनामसन्मन्त्रो विस्मर्तव्यो मया न च ॥२०॥
इत्युक्त्वा दण्डवद्भूमौ प्रणम्याथ पुनः पुनः। मिलित्वा नगरस्थैश्च सर्वैः स विनिवेदितः ॥२१॥
न त्याज्यामातृभूरेषा भवताभूतिमिच्छता। न्यषेधीत्ताँश्च वैराग्यंदर्शयन् त्वंसमर्पयन् ॥२२॥
सुप्रमाणं ददत् तेभ्यः कर्मणः पूर्वजन्मनः। विकिरन् विरहं रामोवनञ्चजिगमिषुर्यथा ॥२३॥
समये समये देव दर्शनं दीयतामिति। केचिद् ब्रुवन्तो रुरुदुः शोकार्ताः ग्रामवासिनः ॥२४॥
नत्वा श्रीमद् हनूमन्तं जन्मभूमिञ्चमातरम्। पितॄन् गुरूँश्च सर्वांश्च चलितो धूमयानतः ॥२५॥
जय श्रीरामनाम्नश्चध्वनिनाऽपूर्य्यंतत्स्थलम्। व्यजीगमच्चित्रकूटं बालकोऽसौजगद्गुरुः ॥२६॥

इति श्रीजानकी नाथ शरणकृतौ श्री सद्गुरुचरिताख्ये
श्रीप्रेमलता चरितामृते ग्रन्थे अष्टमः सर्गः समाप्तः

[नवमः सर्गः]

(मंगलाचरणम्)

पद्मराग मणिकुण्डलत्विषा पाटली कृतकपोल मण्डलम् ।
वासिनंञ्च कदली वनान्तरे भावयामि पवमान नन्दनम् ॥

(ग्रन्थक्रमः)

व्रजद्भिः सद्भिरेवासौ श्रीरामनाम संस्मरन् । रटन् संकीर्तयन् प्रेम्णा जानकी कुण्डके स्थितः ॥१॥
दृष्ट्वा सिद्ध-शिशोश्शीलमाकृष्टास्तत्र सज्जनाः । स्थातुं भोक्तुं प्रार्थितस्तैरीषन्नस्वी चरकारह ॥२॥
तेषां प्रदर्शिते मार्गे कामदाख्यं गिरि ययौ । यज्ञवेदीं ततो मंदाकिन्याः रामाह्वयेतटे ॥३॥
स्नात्वाऽययौ सु वैदेह्या कुण्डके नामसंस्मरन् । जयरामप्रपन्नेनतत्रस्थेनस्थितोऽन्वहम् ॥४॥
प्रसादं प्राप्य सानन्दः प्रार्थितस्तेन नित्यशः । श्री रामेति रटन् नाम कुर्वन् सत्सङ्गकंरहः ॥५॥
अल्पेनैव सुकालेन भवद्भावाद्विरागतः । विस्मिताश्च महात्मानस्तत्राऽयांन्तिस्म सादरम् ॥६॥
सत्सङ्गार्थं समायाताः लज्जिताःह्यस्यभावतः । मन्यमानाः हरेरेनमवतारात्मकं गुरुम् ॥७॥
श्रीरामनामतोऽन्यस्मिन् मनोनासीद्यतोगुरोः । आजऽमुभूं रिशो नित्यं भवन्तस्तत्रसज्जनाः ॥८॥
प्रपञ्च-वर्द्धनं दृष्ट्वा स्वेमनस्याकलय्यसः । ययौ श्री हनुमद्धारां रात्रौतत्रस्थितस्ततः ॥९॥
सीतायाः पाकशालातः कोटितीर्थास्सुराङ्गणाम् । सिद्धात्सुगह्वरात्प्राप्तःशिलाश्चस्फटिकाह्वयाम् ॥१०॥
अत्रिपत्नीं ततो गत्वा तस्मादेक-प्रियं हरेः । भक्तं प्राप्य सु तेनैव चरणकस्य सुचूर्णकम् ॥११॥
मन्दाकिन्यास्तटे चोभावकार्षीत्करपट्टिकाम् । संस्मृत्य (श्री) युगलानन्य-शरणस्यसुपद्धतिम् ॥१२॥
सानन्दो बुभुजे तेत सद्गुरुं प्रार्थ्यं सादरम् । श्रीरामेति रटन् प्रेम्णा रात्रौ तत्र स्थितोमुदा ॥१३॥
ततोये पञ्चषाः विप्राःह्यत्रिपत्निं समागताः । द्रष्टुँस्ते सुमहात्मानं नयन्तःसहवैगताः ॥१४॥
श्रुत्वा तेभ्यश्च तीर्थानां महात्म्यं विस्तृतं महत् । स्थित्वारात्रौततःप्रातो गुप्तगोदावरीं ययौ ॥१५॥
कैलाशञ्च ततः कूपं भरताख्यं ययौ ततः । दर्शनं प्राप्य श्रीरामशय्यां गत्वास्थितो मुदा ॥१६॥
एवं परिक्रमँस्तत्र श्रीरामेति जपन्सदा । मन्दाकिन्यास्तटेऽवात्सीद्विश्रामस्थानकेऽन्वहम् ॥१७॥
कम्बलेनैव चैकेनहिमतुं विनिन्नायह । प्रसन्न वदनोऽतिष्ठच्छ्रीरामदर्शनोत्सुकः ॥१८॥
दृष्ट्वा तस्यपरां निष्ठां व्योमवाणी वमूह । गत्वाऽयोध्याञ्चसंस्कारान् देहस्यकारयस्वचेत् ॥१९॥
तदा मद्दर्शनं क्षिप्रं लप्स्यसेनात्र संशय ।ःतच्छ्रुत्वा जातविश्वासोऽयोध्यांगन्तुं समुत्सुकः ॥२०॥
प्रातरेव प्रेषितोऽसावेकेनापि दयालुना । साधुभक्तेन पृष्ट्वा सुचलितो धूमयानतः ॥२१॥
महोवे स्थानकं प्राप्य तस्मात् क्रौञ्च पुरंययौ । तत्रस्थंभगवद्भक्तं गणेशीलाल नामकम् ॥२२॥
लब्ध्वा तेन प्रेषितः श्री अयोध्या मागतस्तदा । नात्वा श्री सरयूलब्ध्वादर्शनं श्रीहरेःस्थितः ॥२३॥
तत्र राघवदासेन महान्तेनाखिलं निजम् । वृत्तं निवेदया मास स्थितश्चतेन एवहि ॥२५॥
अन्विष्यन् सद्गुरुं श्रीमद्युगलानन्यकं हरेः । प्रपन्नं दर्शनं यस्य सदनेऽस्तिस्मलब्ध्वान् ॥२६॥
तं साकेतं गतं श्रुत्वा तत्रस्थैःसज्जनैर्वरैः । कष्टं प्राप्य महत्तत्रव्यचरन्नाम नैष्ठिकः ॥२७॥
शृण्वन् कथांरघुपतेर्जनिकात्मजायाः । सत्सङ्गतिञ्चनिखिलैः खलु रामभक्तैः ॥२८॥
कुर्वन्नसौ गुरुवरं मृगमन् स्थितः षट् पङ्क्त्या गुणेनं सहितं विचचार मोदात् ॥२९॥

इति श्री जानकी नाथ शरणकृतौ श्री सद्गुरु चरिते नवमः सर्गः समाप्तः ॥

(अथ दशमः सर्गारम्भः)

(मङ्गलाचरणम्)

यो वारांनिधिमल्प पल्वलमिवोल्लंघ्य प्रतापान्वितो, वैदेही घनशोकतापहरणो वैकुण्ठभक्तिप्रियः
अत्तादूर्जित राक्षसेश्वर महादर्पापहारी रणे, सोऽयं वानर पुङ्गवोऽवतु सदायोऽस्मा न्समीरात्मजः
सदानामचेष्टं वरेण्यं वशिष्ठं ह्यभिष्ट-प्रदं सद्भिरास-प्रतिष्ठम् ।
तमेकं शरण्यं वरं सद्गुरुं सद्गुरौ भक्तिपात्रं भजे शिष्टमिष्टम् ॥ १ ॥

(ग्रन्थ क्रमः)

महान्तेन च सम्प्रार्थ्य गह्वरं सरयू तटे । ज्ञात्वा स्थानञ्च सर्पस्थं तत्रोवास जगद्गुरुः ॥२॥
श्री रामेति जपँस्तत्रदृष्ट्वा सर्पौ भयङ्करौ । रात्रौ फुं फुं प्रकुर्वन्तौ देवर्षीतावमन्यत ॥३॥
दण्डवत्प्रणिपत्याह कुर्वन् तौ प्रार्थनाम्वराम् । यत्रकुत्राऽपि वस्तव्यं भवद्भ्यामत्रवासिनौ ॥४॥
मह्यं देयमिदं स्थानं युवामन्यत्र गच्छताम् । नाऽस्माकमेक एतस्मिन्स्थाने भूयास्त्थितिर्यतः ॥५॥
परिश्रमादिदं स्थानं यथाऽस्मि प्राप्तवाहनम् । तथा नतौ भवन्तौह्यत्र वँश्चित्रं स दृष्टवान् ॥६॥
परिक्रम्य त्विमं क्षिप्रमुभावन्तर्हितौ ततः । सिद्धवालोऽपि श्रीरामनाम प्रेम्णारटँस्थितः ॥७॥
ज्ञात्वा वृत्तमिदं कृत्स्नं मुदातत्र निवासिनः । आजग्मुरस्य वैराग्यं भक्तिंद्रष्टुं दृष्टां ततः ॥८॥
सम्यग् दृष्ट्वा विस्मिताश्च मेनिरे महदद्भुतम् । अतस्ते तस्य पार्श्वेतु ह्यायान्तिस्म दिनेदिने ॥९॥
गुरुमन्विष्यमाणस्य मासो यासो वितिष्ठतः । नाप्तवान् किन्तु तावद्धि मनोयुक्तं स सद्गुरुम् ॥१०॥
अथकैदा कथांश्रोतुं गतोरामायणस्य च । श्री रामरघुवीरस्य यत्राऽयान्तिस्म साधवः ॥११॥
तेषु चैकं महात्मानं दिव्यं दृष्ट्वा समागतम् । स्थिरीकृत्यमनःसद्भिरपृच्छत् तत्कथानकम् ॥१२॥
श्रीमतो युगलानन्यशरणस्य महात्मनः । पौत्रं शिष्यं वतं श्रुत्वाचिकीर्षुश्सद्गुरुंमुदा ॥१३॥
पञ्चसंकार लाभार्थं गत्वा तन्निकटेऽब्रवीत् । भगवन्नत्र मां दीनं प्रणिपत्याब्रवीद्वचः ॥१४॥
तमब्रवीद् गुरुस्तात ! मद्वाक्यं सन्निबोधय । जटायाःव्यवहारोमे कुलेऽवेहित्वमस्तिनो ॥१५॥
तच्छ्रुत्वा तद्वचोजात—विश्वासः सरयूतटे । गत्वाचोत्पाट्यामास जटाःसर्वाःशिरस्थिताः॥१६॥
परस्मिन् समये मोदात्सद्गुरोःसदनंययौ । असिद्धवालःश्रीरामनाम-प्रेम्णा जपन्मुहुः ॥१७॥
दण्डवन्नमतस्तस्य रक्ताक्ते मस्तके करौ । स्पृशतश्च गुरौरार्द्रौ जातौचित्रंसनब्रवीत् ॥१८॥
किंकृतं हन्त ! हे ! तात त्वयानैवाभिजानता ! । कलंकःस महाराज ! त्वदुक्त्यासरयूं गतः ॥१९॥
नापितेन कथं ताश्छेदनं नोकृतं त्वया ! । सौभाग्यशालिनीवाला कथं तत्कर्मचाचरेत् ॥२०॥
सद्गुरुः पुनरूचे स पञ्चसंस्कार कामिना । तीर्थे मनस्तदादौ त्वं कुरुष्व ! नेतिचोत्तरम् ॥२१॥
महान्तस्य पदस्येच्छाह्यति ! नेतिश्रुमुत्तरम् । याचनंकिं प्रकुर्यास्त्वं ! नैवदेवेतिचोत्तरम् ॥२२॥
भजनंजीवनं यावत् करिष्यस्यामितिश्रुतः । सुविचार्य्य ददौ ह्यस्मैमन्त्रराजंषडक्षरम् ॥२३॥
गुर्वादीनाञ्च सर्वेषां नाम्नोमेदं महोज्वलम् । पञ्चसंस्कारकं दिव्यं सियालालेतिनामकम् ॥२४॥
प्रपन्नेन युतं "प्रेमलता" नाम सचात्मनः । दत्वाभावं दिदेशाऽसौ श्रृङ्गारस्य रसस्यहि ॥२५॥
प्रसन्नोऽस्यत्रवीद्वाक्यं नाम्नोऽनुष्ठानतस्तव । अतोऽधिकारोदास्यामि प्रेम्णातुभ्यंममाखिलम् ॥२६॥
तच्छ्रुत्वासद्गुरोःपादौ नत्वा लब्ध्वाखिलं ततः । श्रीरामेतिजपन् प्रेम्णास्थितः सद्गुरुणाचितः॥२७॥

इति श्री जानकी नाथ शरण कृतौ श्री सद्गुरुचरिते श्री प्रेमलता चरितामृते ग्रन्थे दशमः सर्गः समाप्तः ॥

[एकादशः सर्गः]

(मङ्गलाचरणम्)

श्रीरामदूत शरणागतदीनबन्धो ! वज्राङ्गदेह करुणाकर रुद्रमूर्ते !
श्री रामनाम इति जापकृतात्म शक्त श्री रामदूत ! सततं हनुमन्न मस्ते ॥

(ग्रन्थः क्रमः)

गुरुमूर्तिञ्च संस्थाप्य चरित्राख्यद्भुतानिहि । नाम्नोऽनुष्ठानकं कुर्वन् सेवायां सद्गुरोःस्थित ॥१॥
मासमेकं निनायाथौसद्गुरु प्रणिपत्य च । जिगिमिषां चित्रकूटाय गुरुर्वेद्यनिवेदयत् ॥२॥
लब्ध्वाज्ञाञ्चततः कैश्चित् सद्भिर्गत्वा प्रयागकम् । तीर्थराजंमाधवाख्यं वेणींस्नात्वाददर्शह ॥३॥
तदेवाल्पायुषोयोगोद्वितीयोऽस्य समागतः । तृतीयकज्वरग्रस्तोऽभवत्तस्माच्च साधवः ॥४॥
त्यक्त्वामुं गतवन्तश्च स्वकं स्थानं स्थितोह्ययम् । मूर्च्छितो गतचेष्टःसन् विह्वलोह्यभवन्महान् ॥५॥
ह्यवस्थायाश्चतस्यांवै दृष्ट्वा दूतान् समागतान् । रक्षाहनूमतोऽयाचीत् भयार्तो सद्गुरुश्वसः ॥६॥
तदा विशालकाय धृग् हनूमाँस्तत्रचाययौ । हूँ कृत् गदाकरं दृष्ट्वा दूतास्ते प्रययुर्भयात् ॥७॥
सचागत्या ब्रवीन्मूर्ध्नि न्यस्य वामेतरं करम् । गतभीर्विचरत्वंहि रोगोन्मुक्तो भवद्र तम् ॥८॥
गतस्तेऽल्पायुषोयोगो द्वितीयोप्यति दुस्तरः । परिक्रमञ्जगन्मध्ये श्रीरामेति प्रकाशय ॥९॥
तच्छ्रुत्वा पादयोस्तस्य प्रणिपत्य विधानतः । वीरभद्रस्य सप्रेम्णा सद्गुरुर्नै हनूमतः ॥१०॥
हनूमानपि चाश्वास्य दत्वावैशक्तिमुत्तमाम् । अन्तर्दधौ ततःशीघ्रं क्षुधार्तःसचचालह ॥११॥
सायंवने स्थितिं लब्ध्वा हनूमन्मन्दिरेवरे । महात्मनःस चैकस्य निकटे तस्थिवाँश्चह ॥१२॥
नायाचीत्तत्रसभावं ज्ञात्वाऽमुं क्षुत्पिपासितम् । कृशरा हण्डिकामेकां लब्ध्वींनिष्कास्य सोह्यदात् ॥१३॥
अपर्य्याप्तं तदन्नञ्च दृष्ट्वा संकुचितस्तदा । रम्भापत्रं प्रसार्य्योभौ बुभुजाते मुदान्वितौ ॥१४॥
तस्याःनिष्कास्य पूर्णञ्च दृष्ट्वाताममतिविस्मितौ । पूर्णंचभोजनं लब्ध्वास्वा द युक्तं महत्परम् ॥१५॥
श्री रामेति जपन्तौ स्वादु भोजनतःपरम् । प्रमोदं लभमानौ हि यामिनीं तां विनिन्यतुः ॥१६॥
प्रातोनित्यक्रियःसम्यक् श्री रामेति जपस्ततः । चचाल तुलसीदास पुरं राजापुरं शुभम् ॥१७॥
कालिन्द्याश्चतटे घोर'ऽरण्यान्यस्ति सु तत्रहि । संध्यायाता गतवतःप्रेतानां यत्र संस्थितिः ॥१८॥
दारु विक्रयिणाकेनाप्येकेन प्रार्थितोऽपिसः । ग्रामं गन्तुञ्च दूरस्थमीषन्नस्वीचकार ह ॥१९॥
रात्रावत्रस्थितःकश्चित् प्रेतैर्नत्यज्यते क्वचित् । इत्यप्युक्तेऽब्रवी द्वाक्यं साधूनांच भयंकुतः ॥२०॥
तदाद्यौ किङ्करौ दत्वा जगाम नगरं प्रति । तावपि प्राप्य कालंहि प्रेतभीत्या प्रचेलतुः ॥२१॥

सद्गुरुदेवःकामयमानो रामजानकीदर्शनकञ्च ।
नामरटन् सन् प्रेमभजन् सन् तत्रातिष्ठत्प्रीतियुतोऽसौ ॥ २२ ॥

॥इति श्री जानकीनाथ शरण कृतौ श्रीसद्गुरुचरिते-
श्रीप्रेमलता चरितामृते एकादशः सर्गःसमाप्तः ॥

—:❀:—

[द्वादशः सर्गः]

(मंगलाचरणम्)

वन्दे वानरसिंहसर्परिपुवाराहाश्वगोमानुषै—
युक्तं सप्तमुखैः करैर्द्रुम गिरिं चक्रं गदां खेटकम् ॥
खट्वाङ्गं हलमंकुशंफणिसुधा कुम्भौशराब्जाभया—
च्छूलं सप्तशिखं दधानममरैः सेव्यं कपिं कामदम् ॥१॥

(ग्रन्थक्रमः)

तमिस्रायाञ्चतस्यान्ते प्रेताश्चाद्भुत दर्शनाः । महाभयङ्कराः शब्दान् प्रकुर्वाणाःविचित्रकान् ॥२॥
नरमुण्डधराःकेचिद्दन्तान् कटकटाय्य च । सकूथ्यस्राःकोटराक्षाश्च पीनाःक्षीणाःह्यनेकशः ॥३॥
हस्तैःपादैर्युताः केचित् सहस्रमुण्डमालिनः (१) । केचित्तद्रहिताः क्षीणमस्तकाःशवपाणयः ॥४॥
दुद्रुवुस्ते चतुर्दिक्षुमहात्मानं जगद्गुरुम् । श्री रामनामनिरतं संसारार्णव-तारिणम् ॥५॥
तत्रस्थ मभयं दिग्भ्यः उर्ध्वाधश्चैव सन्मुखात् । तद्रहस्यञ्च विज्ञाय श्रीरामेत्युच्चकैःस्वरैः ॥६॥
चीत्कुर्वंस्ताँश्च निघ्नन् स नामास्त्रेण जगद्गुरुः । अयुध्यत हि तैःसार्धंकौतुकेनापि विस्मितः ॥७॥
तेचापि मूर्तिमन्तश्च सर्वादिक्षु कृतश्रमाः । हन्तुमेनं महात्मानमाजग्मुस्तान्निवारयन् ॥८॥
नामास्त्रेण चतुर्दिक्षु परावृत्य द्रुतं द्रुतम् । एवं तेभ्योह्यभूद्युद्धं उषःकालमितं गुरोः ॥९॥
श्रान्तस्तदाऽह्वयत् तत्र वीरभद्रञ्चरक्षितुम् । शान्तास्तत्स्मरणादेवोपद्रवाः प्रेतकल्पिताः ॥१०॥
कृतनित्यक्रियः प्रातर्यदासीन्नाम तत्परः । विस्मतः सन्तदाऽयातःसमीधोविक्रयी ततः ॥११॥
अब्रवीज्जीवितं दृष्ट्वा नत्वा सिद्धगुरुं त्विमम् । केनो पायेन भवता स्थितोरात्रौ तदुत्तरम् ॥१२॥
लब्ध्वावरं प्रयाचेऽसौ तच्छान्त्यै सोह्यदान्मुदा । प्रहृष्टश्चाऽब्रवीदत्र प्रेतव्याधा न यास्यति ॥१३॥
इत्युक्त्वा चलितस्तस्माद्राजापुर मगौमुदा । गत्वा विप्रगृहेयोध्याकाण्ड-मात्रंददर्शह ॥१४॥
गोस्वामी तुलसीदास हस्तेनोल्लिखितं शुभम् । ततोगत्वा चित्रकूटं नियमंह्यकरोदयम् ॥१५॥
यावन्नो दर्शनं कुर्य्यां श्री सीतारामयोर्मुदा । तावन्नान्यत्र गच्छामि चित्रकूटं विहाय च ॥१६॥
इति संचिन्त्य विचरंस्थितस्तत्र जगद्गुरुः । श्री रामनामनिरतः मन्दाकिन्यास्तटेशुभे ॥१७॥

इति श्री जानकी नाथ शरण कृतौ श्री सद्गुरु-
चरिते श्री प्रेमलता चरितामृते-
द्वादशः सर्गः समाप्तः ॥

[त्रयोदशः सर्गारम्भः]

(मङ्गलाचरणम्)

प्रतप्त जाम्बूनद दिव्यभासं, देदीप्यमानाग्निविभासुराक्षम् ।
प्रफुल्लपङ्केरुह शोभनास्यं, ध्याये हृदिस्थं पवमानसूनुम् ॥

(ग्रन्थक्रमः)

एकस्मिन्दिवसे मन्दाकिन्यास्तीरेऽत्रिभामिनीम् । गच्छता गुरुदेवेन दृष्टं तेजोऽद्भुतं महत् ॥१॥
तत्रैकं सुमहात्मानं ज्वलन्तमिवपावकम् । दीर्घतत्रोद्भवन्तं तत्पादयोः स पपात ह ॥२॥
ततो द्वावेकवृक्षस्योपविश्याधः स्थितौ मुदा । वार्त्तालाप प्रकुर्वन्तौ नामरूपात्मकं रहः ॥३॥
श्री सद्गुरुमिमं प्राह महर्षिमंद्वचः शृणु । या प्रतिज्ञा कृता पूर्णांमिथिलायां भविष्यति ॥४॥
ज्ञानकूपान्तिकेस्थित्वा जप्त्वा श्रीरामनामकम् । दर्शनं लप्स्यसे सौम्य ! श्रीसीतारामयोर्मुदा ॥५॥
धन्यासा मिथिला यत्राऽवतीर्णा जानकीशुभा । श्री रामस्यपरा शक्तिस्तस्यै नित्यं नमोनमः ॥६॥
सिद्धजीव, इतिख्यातस्तत्र श्रीजानकीप्रियः । ज्ञात्वातेनाखिलं वृत्तं लप्स्यसे दर्शनं शुभम् ॥७॥
इत्युक्त्वाऽनंद-संमग्नोमिथिले ! मिथले ! ब्रुवन् । मौनमालम्ब्य तत्रस्थोविस्मरन्स्वशरीरकम् ॥८॥
दृष्ट्वातं प्रेममग्नं श्री सद्गुरुरब्रवीन्मुदा । कृपालो ! भगवन् ! ब्रूहि, वृत्तंमह्यं स्वकीयकम् ॥९॥
इति तत्प्रार्थितेऽवोचदत्रिरस्मीतिसादरम् । तच्छ्रुत्वा पादयोस्तस्य पपात श्री जगद्गुरुः ॥१०॥
दत्वाशीर्नामधाम्नोश्च तथालीलास्वरूपयोः । श्री रामोपासनायाश्च भेदमुक्त्वास्विमं प्रति ॥११॥
दत्वा वरानूह्यभीष्टप्रपूरकानभिनंद्य च । अन्तर्दधौततस्तेजः स्वकं चाकृष्य शोभनम् ॥१२॥
ततः श्रीजानकीकुण्डं ययावेक-महात्मना । दिवा करेण दासेन मिथिलां गच्छता सह ॥१३॥
ततः श्रीलक्ष्मणातीरे श्री सीतामठमुत्तमम् । सिद्धाश्रमं गतः क्षिप्रं मिथिलायाः प्रमोददम् ॥१४॥
'श्री'सिद्धजीवोऽपितस्मिन् वै कालेरामायणस्येच । नवाह्निकं सुनियमंनाम्नः कुर्वन् हरेः स्थितः ॥१५॥
श्रीरामेति सहस्रस्य पञ्चविंशोत्तरस्य हि । लक्षस्यैकस्य नियमं कुर्वन्नासीत्स्वकीयकम् ॥१६॥
दृष्ट्वासिद्ध गुरुं नामस्मरन्तं भक्ति पूर्वकम् । दण्डवत्प्रणिपत्याह सद्गुरुः पाहि मां सदा ॥१७॥
दृष्ट्वेमं सुप्रपन्नं श्रीसिद्धजीवो महामनाः । उत्थाप्याशीर्ददद् दिव्यंमपृच्छत्कुशलादिकम् ॥१८॥
सिद्ध जीवस्य नियमंयोऽप्यासीत्सोऽस्यएवहि । उभयोर्नियमं दृष्ट्वा चोभौस्वान्तेननन्दतुः ॥१९॥
वैराग्याद् भजनाद् नित्यं श्रीरामनाम कीर्तनात् । उभाभ्यामुभयोः प्रीतिरवर्द्धत महोज्वला ॥२०॥
सिद्ध जीवस्य सेवाञ्च सद्गुरुस्स चकारह । श्री रामेतिजपन् प्रेम्णा सदासद्विधिनाऽन्वहम् ॥२१॥
सिद्धजीवोऽपि तं नित्यंमिथिलायाः प्रमोददम् । प्रदर्शयति जानक्याः विहारस्थलमुत्तमम् ॥२२॥
एकस्मिन् दिवसेऽयाचीद् वृत्तिं मधुकरीं शुभाम् । उष्णीषादींश्च तेनासौजानकीं प्रार्थयाऽब्रवीत् ॥२३॥
तथाकृते तमूचे श्री मैथिल्यस्यै प्रदीयताम् । सर्वस्वंमम आल्यै त्वं सिद्धजीवंविधानतः ॥२४॥
मदीच्छयाऽवतारोऽस्याः नाम लीलाप्रकाशितम् । श्रुत्वेदंवचनं प्रादात्सर्गं यत्तन्निवेदितम् ॥२५॥
दुग्ध मत्यास्तथाविद्याज्ञानकूपान्तिके सदा । विचरत्वं च श्रीराम नाम गृह्णन्नहर्निशम् ॥२६॥
सिद्धाः मनोरथाः सन्तु तथास्तु रामदर्शनम् । इत्युक्त्वा प्रेषितस्तस्मात्पुरीं श्रीजनकाह्वयाम् ॥२७॥
सद्गुरुं संस्मरन्नामरटन् प्रेम्णाऽन्वहं मुदा । आजगाम ततः शीघ्रं-श्रीरामदर्शनोत्सुकः ॥२८॥
स्मारं स्मारं हरेर्नाम नित्यं सिद्धस्थलेष्वटन् । दर्शनादींश्चकारासौ मुदा पूर्यां स्थितोगुरुः ॥२९॥
रत्नार्णवेऽग्नि कुण्डेच विहाराख्ये सुकुण्डके । सद्रहस्यं सदापश्यन् प्रेम्णा नामस्मरन् स्थितः ॥३०॥
कथं स्याद्दर्शनं तस्य इति चिन्तातुरो महान् । विद्याकूपे दुग्धमत्यां भ्रमन् पौर्वस्थलेष्वपि ॥३१॥

(इति श्रीजानकी नाथ शरणकृतौ श्री सद्गुरुचरित्राख्ये
श्रीप्रेमलता चरितामृते ग्रन्थे त्रयोदशः सर्गः समाप्तः)

---:※:---

चतुर्दशः सर्गः

(मङ्गलाचरणम्)

वन्देऽहं हनुमन्तमात्तरिपुभिद्भूभृत्तरु भ्राजितं
वालाद्वालविवद्धवैरिनिचयं चामीकराद्रि प्रभम्।
रोषाद्रक्त पिशङ्ग नेत्रनलिनंभ्रूभङ्ग-भङ्ग-स्फुर-
त्प्रोद्यच्चण्ड मयूख मण्डल मुखंदुः खापहं दुःखिनाम् ॥१॥

(अन्थक्रमः)

सायं सचैकदा नामस्मरन्नासीद् जगद्गुरुः। ज्ञानकूपान्तिके प्रेम्णा जगतस्तारकाभिधम् ॥२॥
एकान्ते विजनेऽद्राक्षीत्सहस्रमणिमण्डितान्। सौवर्णान् सद्गृहान्शुभ्रान्नवखण्डविनिर्मितान् ॥३॥
जातोऽऋतुर्वसन्तश्च गुञ्जद्भिभ्रमरैर्वरः। सुवृन्तैर्वल्लरीभिश्चफलैः पुष्पैर्विवर्द्धितः ॥४॥
पेपीयन्ते मरन्दं मधुकरनिकराः वर्द्धतेचन्द्रकान्तिः,
शब्दायन्तेन्यपुष्टाः स्फुटतिकमलिनी संक्रमन्ते हरिण्यः ॥
कामिन्यः कामसेवां निज निजभवने संप्रकुर्वन्तियत्ना,
जातस्तस्मिन् क्षणे वै ऋतुवर-सहितः पञ्चबाणः स कामः ॥५॥
दिव्याभूमिः सुवर्णाभा मणिमाणिक्य भूषिता। शीतादयस्समीराश्च ववुः सौगन्धिका ह्यपि ॥६॥
सरितोनिर्मलाः याताः स्वर्णसोपान-मण्डिताः। गेहेभ्योभामिनीनाञ्च सुरागः श्रूयते स्म ह ॥७॥
तस्मिन् क्षणे दुग्धमरयाः पार्श्वतोऽसौददर्श ह। तेजोऽब्धं तञ्च तन्मध्ये देवीभिर्वेष्टितां शुभाम् ॥८॥
ताभिः सेवापरांमश्च धृतामिश्छत्रचामरान्। श्रीसीतारामयोः शश्वद्दिव्य श्रृङ्गारितां छविम् ॥६॥
ईषत्स्मितानानं तेजोयुक्तामानन्दवर्द्धिनीम्। अन्योन्याश्लिष्टहस्तां श्री सद्गुरुस्सददर्श ह ॥१०॥
ततोऽपतत्तदग्रे सुब्रह्मानन्दान्वितो गुरुः। विस्मरन् स्वशरीरस्यगतिं त्रायस्व मांब्रुवन् ॥११॥
प्रपन्नं पादयोर्वीक्ष्य तमुत्थाप्य सुसादरम्। श्रीरामः प्राह मद्रूपं पश्य त्वं प्रिययायुतम् ॥१२॥
पिपासार्तोऽस्यतोरूपपीयूषस्यचिरान्महान्। तच्छ्रुत्वा मोहिनीं मूर्त्तिमपश्यन्निर्निमेषस्त्यजन् ॥१३॥
कोटि कन्दर्प लावण्यं प्रपन्नानां प्रमोददाम्। विधीशानविष्णु-वाणीभिर्नुतां मोदप्रदायिनीम् ॥१४॥
श्री वैदेह्यब्रवीत्तञ्च मस्तकं स्पृश्यसुस्मिता। तुभ्यं नित्यं प्रसन्नास्मि वाञ्छितंप्रददाम्यतः ॥१५॥
विचरत्वं सुखेनैव मिथिलायामहर्निशम्। जीवानुद्धारयन् सर्वान् श्रीरामेतिप्रचारयन् ॥१६॥
धाम्नो माहात्म्यकं सर्वंलिखत्वंसु रहस्यकम्। कष्टं माकुरु मां पार्श्वे स्थितां विद्धि सदैव हि ॥१७॥
इत्युक्त्वान्तर्दधेदेव्याकृष्य तेजोस्वकं महत्। चित्रं मत्वास्थितस्तत्र श्री रामेति जपन् गुरुः ॥१८॥
काव्यशक्तिवरां तस्माद्दिनाछन्ध्वालिलेखह। श्री सद्गुरु कृपायुक्तं प्रकाशाभिधमुत्तमम् ॥१६॥
ग्रन्थमष्टोत्तरैर्दिव्यैः प्रसङ्गैर्भावगुम्फितैः। नाम्नोधाम्नश्चरूपस्य लीलायाः जानकीपतेः ॥२०॥
षट्त्रिंसत्क सहस्राणिरचयित्वा ह्यदान्मुदा। पद्यानि सुरहस्यानि प्रपन्नेभ्यो विधानतः ॥२१॥
यदा कदा दर्शनार्थे सिद्धजीवस्य सद्गुरोः। श्रीसद्गुरुः प्रयातिस्म श्री सीतामठमुत्तमम् ॥२२॥
लीलारूपधरान् नित्यं सत्यं श्री रामवद्ध्रुवम्। कुरुतेस्मापितैः सार्द्धं प्रेम्णासंभाषणादिकम् ॥२३॥
काशीतो रामलीलायाः मण्डल्येकाऽजगामह। अनेनह्यब्रवीद्रामस्तत्रस्थः सादरं वचः ॥२४॥
काशीमागच्छतां प्रीतिर्निश्चलास्यात्तदैवहि। वर्षे वर्षे शुभांलीलां द्रष्टुंसाक्षाद्धरेर्वराम् ॥२५॥

स्वीकृत्याऽमुञ्चतद्वाचं जिगिमषुस्स जगद्गुरुः । सिद्धाश्रमं गतः सीतामठं श्रीलक्ष्मणा तटे ॥२६॥
मास्याषाढ़े स्थितं तत्राऽब्रवीत्सिद्धगुरुं मुदा । जिगिमषां काशिकायाश्च करबद्धो जगद्गुरु ॥१७॥

(सिद्धगुरुरुवाच)

गच्छ तात ! सुखं काशी शम्भोर्नामाभिधांपुरीम् । त्वद्रक्षां सम्प्रकुर्वीत हनूमान् भक्तवत्सलः॥२८॥
ततस्त प्रणिपत्यासौकाशीमागत्य सादरम् । गङ्गास्नानञ्च कृतवान् विश्वनाथस्य दर्शनम् ॥२९॥
एवं दशाश्वमेधाख्ये तटे श्रीनाम तत्परः । स्थितः संसेवितोनित्य महादेवेन केनचित् ॥३०॥

इति श्री सद्गुरु चरिते चतुर्दशः सर्गः समाप्तः

(पञ्चदशः सर्गः)

(मङ्गलाचरणम्)

वन्दे विद्युद्वलयलसितं ब्रह्मसूत्रंदधानं,
कर्णद्वन्द्वे कनकवलये कुण्डले धारयन्तम् ।
सत्कौपीनं कटिपरिहृतं कामरूपंकपीन्द्रं,
नित्यं ध्यायेदनिलतनयं वज्रदेहं वरिष्ठम् ॥

(ग्रन्थ क्रमः)

बुभुक्षितःस चैकस्मिन् दिने नक्तंदिवं महान् । अन्नपूर्णां शिवं प्राहोद्दिश्यकाका जगद्गुरुः ॥१॥
श्रूयते केऽपि नो युष्मन्नगरे क्षुत्पिपासिताः । तिष्ठन्ति तद्वचोमिथ्या यतोह्यस्मि बुभुक्षितः ॥२॥
एवं ब्रुवति तस्मिन् वै शिवो वृद्धस्वरूपधृक् । सक्तूनाम्रातकञ्चापि दत्वा तस्माच्च चालह ॥३॥
तदन्नं देवतुल्यञ्च भुक्त्वाऽश्चर्यं ययौ महत् । तस्मिन्क्षणेऽन्नपूर्णापि वृद्धारूपागताऽब्रवीत् ॥४॥
धैर्य्यं नो धार्य्यते किञ्चिद्विलम्बेऽत्रस्थितैर्जनैः । वृद्धेनापि शिरःखर्जन्ती सा चान्तर्दधे ततः ॥५॥
विस्मतःसद्गुरुश्चापि स्थितः पंक्त्यश्वमेध के । तटेऽसौ राजसंस्थाने मन्दिरेषु यदाकदा ॥६॥
केशवाख्ये वासुदेवाह्वये देव्याश्चमन्दिरे । श्रीरामेति जपन् प्रेम्णाऽजीगमँस्तद्दिनांनिहि ॥७॥
एकदा कालिका देव्याःमन्दिरे नाम तत्परः । अर्द्धरात्रौ पुरोऽद्राक्षीत्प्रकाशांश्चताड़ित्प्रभान् ॥८॥
तन्मध्ये कालिकादेवी मुण्डमाला विधारिणी । विमानस्था ललज्जिह्वा खड्ग खर्पर-धारिणी ॥९॥
चण्डीभिर्भीम रूपाभिःपार्श्वतः परिवारिता । आगताभी रसंख्याभिर्दृष्टा सद्गुरुणाऽद्भुता ॥१०॥
पुरःस्थितमिमं दृष्ट्वा याह्यन्यत्रेतिवादिनीम् । वारयन्त्यब्रवींच्चैनं सुखं तिष्ठभयं नहि ॥११॥
कालिकाऽस्म्यन्न पूर्णायाः सेवातोविनिवृत्यह । आगमिष्याम्यहं भद्र मद्राज्येनास्तितेभयम् ॥१२॥
श्रीरामेति जपँस्तिष्ठ यतोनाम प्रियं मम । इत्युक्त्वान्तर्दधेदेवी ततःस्वशक्तिभिस्सह ॥१३॥
सस्नातः कृत संस्कारः श्रीरामनाम तत्परः । परस्मिन् दिवसे यातःक्षुधार्तस्तावदेवहि ॥१४॥
अद्राक्षीद्भाल-तिलकां तुलसीदाम भूषिताम् । तेजस्विनीं समायान्तीं वृद्धामेका निजाग्रतः ॥१५॥
करपात्रा च साऽगत्य ब्रवीदेनं जगद्गुरुम् । महात्मन् मत्प्रसादंत्वं गृहाण क्षुद् युतोयतः ॥१६॥
तथाकृते स्वादु युक्तं महद्विज्ञाय विस्मितः । कात्वं कुतःसमायाता इत्यपृच्छन्मुदान्वितः ॥१७॥

(देव्युवाच)

गंगादेवीति मां लोकाः ब्रुवन्त्यत्रवसाम्यहम् । महात्मनाञ्चभवतां सेवायां तत्पराऽनिशम् ॥१८॥
महात्मनेत्विदं वाक्य वदन्त्यन्तर्दधे ततः । जाताह्लादोन्यवात्सीत्स तत्र श्रीनाम तत्परः ॥१९॥

एकदा स कुरुक्षेत्रं काशीतःप्रययौ मुदा । तत्र श्रीरामदासस्य कुर्वन् सेवामहर्निशम् ॥२०॥
स्थित्वा तत्र कियत्कालं श्रीरामेति प्रकाशयन् । मोदं दधत्पुनःकाशीमाजगाम जगद्गुरुः ॥२१॥
संकष्टमोचन स्थानेस्थितः श्रीरामतत्परः । श्री वीरेन्द्रं हनूमन्तं श्रावयन् रामनामकम् ॥२२॥
प्रत्यहं संस्थितस्तत्र शीतवातातपादिषु । कालेस्वपि सदा प्रेम्णा श्रीरामेति जपन्वरम् ॥२३॥
कुर्व्वन्नित्यञ्चरित्राणि श्रीरामदर्शनान्यपि । मग्नोनाम्नि हरेर्धाम्नि लीलायां रूपके स्थितः ॥२४॥
लीलायां रामनगरे काशीराजस्य वै पुरे । राघीये मिथिलायां सोप्ययोध्यायां महोत्सवे ॥२५॥
परिक्रमात्मके काले चित्रकूटे जगद्गुरुः । न्यवात्सीन्मोदसंयुक्तः सदा श्रीनाम तत्परः ॥२६॥

अहर्निशं नामरटन्मुदा सन् ययौ-विजित्येन्द्रिय सौख्य मुग्रम् ।
काशीमयोध्यां मिथिलां सुचित्रकूटं भ्रमन् सद्गुरु णोपदिष्टः ॥२७॥

इति श्री जानकीनाथ शरण कृतौ सद्गुरु चरिते
श्री प्रेमलता चरितामृते पञ्चदशः सर्गः समाप्तः ॥

षोडशः सर्गः

(मङ्गलाचरणम्)

ध्याये द्बालदिवाकरद्युतिनिभं देवारि दर्पापहं,
देवेन्द्र प्रमुख प्रशस्य यशसंदेदीप्यमानंरुचा ।
सुग्रीवादि समस्त वानरयुतं श्री रामनामप्रियं,
संरक्तारुणलोचनं पवनजं पीनाम्बरालङ्कृतम् ॥

(ग्रन्थकमः)

हरि रसिक ललामी, प्रत्यहञ्चाष्टयामी । सगुरु चरणक मी, नामरूपाभिरामी ।
जगतिनिरतवामी, सिंहतुल्यानुभामी । गुरुवरवरमार्गे नामप्रेम्णारतोऽभूत् ॥१॥

चित्रकूटान्तिकेऽरण्ये भ्राम्यन्सचैकदागतः । हनूमन्मन्दिरे रात्रौप्रेतानांयत्र संस्थितिः ॥२॥
ते चैनं वाधितुं सर्वे मिलित्वाऽद्भुत दर्शनाः । यत्नाँश्चक्रु र्भयंदातुमेनं शक्ताः न वैगताः ॥३॥
यस्याः दिशः समायान्ति तस्याः श्रीरामनामकम् । वाणमुत्सृज्य चाहत्य जर्जरीकृत्यताँ स्थितः ॥४॥
एवं युद्वा हितैस्सार्द्धं परिभाव्याखिलाँस्ततः । श्री रामेति जपन् प्रातः कृत्यं चासौ चकार ह ॥५॥
स्थित्वा तत्र कियत्कालं मिथिलामागतांमुदा । विहार कुण्डके स्थाने स्थितः श्रीनाम तत्परः ॥६॥
तत्रागतश्चित्रकूटात्साधुरेको गुरोः पुरः । द्रष्टुं श्रीरामनाम्नश्च निष्ठांचास्याद्भुतां ततः ॥७॥
स्थितोरटन् हरेर्नाम पार्श्वे श्रं मज्जगद्गुरोः । नक्तं दिवं ययावेवं नावास्तं किन्तु भोजनम् ॥८॥
चित्रं मत्वामहच्चैतद् वृत्तौनत्वापुनः पुनः । परिक्रम्य ययौस्वीयं स्थलं प्रातः परेऽह्नि सः ॥९॥
एकदा सुस्थितस्तत्र श्रीरामेति जपन्मुदा । हृतः केनापि मञ्जूषां तिलकानांनिजान्तिकात् ॥१०॥
स्नातः प्रातो न तां वीक्ष्यसजातः खिन्नमानसः । 'कोहरिष्यति मञ्जूषां श्रियोधाम्निमदन्तिकात् ॥११॥
इतिचिन्ताकुलस्तत्र प्रतिज्ञां सु चकार ह । यावन्नप्राप्नुयां तावत्तिलकन्नकरोम्यहम् ॥१२॥
न चाप्यन्नं जलं नैवग्रहजाम्यन्यत्रयामि नो । एवं सन्ध्या समभवत् स्थितेतत्रजगद्गुरौ ॥१३॥

एतस्मिन्नन्तरे चैकोबालस्तत्राऽजगाम ह । मञ्जूषां तां करे गृह्णन्कश्चिच्छ्रीश्यामसुन्दरः ॥१४।

(बालउवाच)

महात्मँस्त्वं गृहाणेमां मञ्जूषांमत्सकाशतः । कस्यास्त्येषा मया लब्धाचेत्युक्त्वाऽन्तर्दधौततः ॥१५॥

लब्ध्वानिजाश्वमञ्जूषां नत्वा तं श्यामसुन्दरम् । कृत-नित्यक्रियः सम्यक् श्रीरामेति जपँस्थितः ॥१६॥

दुग्धमत्यास्तटे भ्राम्यन् सोपवासमभूद्दिनम् । तावदेका समायता वृद्धादिव्यप्रभोज्वला ॥१७॥

दध्ना चिप्टान्न संयुक्ताऽब्रवीदेनं जगद्गुरुम् । बुभुक्षितोऽसिमद्दत्तं गृहाणेमंक्षुधां जहि ॥१८॥

(जगद्गुरु रुवाच)

कात्वं कुतः समायता प्रेषिता केन मत्पुरः । क्षुधार्तं मां कथं वेत्सि ब्रूहि मां देवि! सादरम् ॥१९॥

(वृद्धोवाच)

मिथिलेति च मां लोकाः ब्रुवन्त्यत्रवसाम्यहम् । सेवायां भवतां नित्यं स्थिता संदर्शनोत्सुका ॥२०॥

इत्युक्त्वान्तर्दधे देवी पश्यतः श्रीजगद्गुरोः । धन्योऽहमममंस्तासौ भुक्त्वा चान्नं सुधासमम् ॥२१॥

एकदा तमुपाजग्मुर्भ्रातरो गुरुबान्धवः । रुग्णास्तेष्वेक एवासीन्महामारी समुद्भवः ॥२२॥

गतचेष्टोऽपतद्भूमौ मूर्छितोह्यति विह्वलः । दृष्ट्वाद्भुतं च तद्रूपं तेऽभूवन्खिन्नमानसाः ॥२३॥

धाम्नि वैवेऽपिदोषः स्यादितिमत्वासुतूर्णकम् । मृदो मध्यादग्रहीच्च स विद्याज्ञान कूपयोः ॥२४॥

मिथिलेन्द्रसुतां स्मृत्वा चषकास्थेजले क्षिपन् । वस्त्रपूतं जलं प्रादात्तन्मुखे नाम संस्मरन् ॥२५॥

तथाकृते समायातचेष्टः सजीवितोह्यभूत् । श्रीरामेति ब्रुवँस्तत्र महानन्दयुतोऽभवत् ॥२६॥

तत्रस्थितमृदोज्ञात्वा सु प्रभावं महाद्भुतम् । मञ्जूषायामतः किञ्चिज्जग्राहाथ जगद्गुरुः ॥२७॥

रात्रौस्वप्नेऽब्रवीद्देवी मैथिलीतंमृदं जहि । सिद्धस्त्वं नो व्रजत्वंहि चेत्युक्त्वाऽन्तर्दधेततः २८॥

प्रातः सविस्मितस्तत्र प्रक्षिप्यासौ मृदं ततः । अपराध क्षमां तस्याः ह्ययाचीद् वै पुनः पुनः ॥२९॥

ततोरटन्नाम हरेर्मुदान्वहं वसन्स्थितो दुग्धमतीतटेऽमले ॥
विदेहपुत्र्याश्च विहारकुण्डके जगद्गुरुः क्षीरसरित्पतौच तु ॥३०॥

इति श्रीजानकी नाथ शरणकृतौ श्रीसद्गुरु चरिते श्री प्रेमलता-चरितामृते ग्रन्थे षोडशः सर्गः समाप्तः

(सप्तदशः सर्गः)

(मङ्गला चरणम्)

वन्देऽहंत्वा सुपूर्णंतड़िदिवसुतनु सेवितं देववृन्दैः वन्दे वन्दारुमीश श्रिय उतनियतं श्रीमदावन्दतीर्थम् । वन्दे मन्दाकिनी सत्सरिदमलजलासेक साधिक्यसंङ्गं ।वन्देहं देवभक्त्या भवभयदहनं सज्जनान्मोदयन्तम्

(ग्रन्थ क्रमः)

सुमण्डपे स्वर्णविनिर्मिताभिधे-रत्नार्णवे सन्निषु कूपयोर्द्वयोः ।
कृताह्निकाचारविधिर्विवेकतः पश्यँश्चरित्राणि सदा मुदाह्यसौ ॥१॥

अथैकदाज्ञान कूपान्तिके तिष्ठन् शुशोचह । लप्स्यते दर्शनं दिव्यं मिथिलायाः कथं शुभम् ॥२॥

एवं मनसि सञ्जाते तन्द्रायां नाम तत्परः । ज्ञानकूपाभ्यन्तरेऽसावगच्छन्मोद संयुतः ॥३॥

त्रेतायुगोद्भवं चैकं पुरुषं च ददर्शह । कुक्षिकां लम्बमानाञ्च दधद्दस्ते जगद्गुरुः ॥४॥
असावेनं सुविज्ञाय मैथिलीवल्लभास्वपि । दण्डवन्नमनंकृत्वा पादयोर्गिरमब्रवीत् ॥५॥
स्वागतं भगवन्नत्रागच्छ तञ्चाब्रवीद्गुरुः । पुरोदृष्ट्वा सुवर्णस्य महाद्वारं मनोरमम् ॥६॥
स्थानञ्चेदं किमाख्यातं तच्छ्रुत्वाऽमुं वचोऽब्रवीत् । द्वारोऽयं मिथिलायाश्च कथ्यतेह्युत्तराभिधः ॥७॥
उद्घाटयेतिचोक्तेऽसौ विमंप्राह गवाक्षकम् । दर्शयामि नगच्छेश्चेदन्तो ह्याज्ञांनचास्त्यतः ॥८॥
उद्घाटिते गवाक्षेऽसावद्राक्षीद् दृश्यमुत्तमम् । रामायणानुसारंच सुदिव्यं महदद्भुतम् ॥९॥
अपश्यत्सद्गृहान् रथ्यान् मणिमाणिक्य भूषितान् । नवखण्डोद्भवान् दिव्य-वाद्यैर्गीतैःसुगुञ्जितान् ॥१०
वाटिकाश्च फलैःपुष्पैर्युक्ताःसुकूजिताःखगैः । कल्पवृक्षोद्भवाःवातैस्त्रिभिर्दिव्यैःसमीरिताः ॥११॥
दृष्ट्वा चक्रेमनस्तत्रगन्तुं सोह्यरुणद्धिमा । कुरुष्वेत्थं तदा नेत्रौ प्रोन्मील्य प्रमदोऽभवत् ॥१२॥
तन्मनाःमिथिला भूति-प्रकाशमलिखमुदा । ग्रन्थं मुदास्थितो नित्यं श्रीरामेति परायणः ॥१३॥
गच्छन्तं सद्गुरुंचैक दिवसे स्वर्ण मण्डपम् । साधुरेकोऽब्रवीद् वाक्यं पश्चादाहूय सादरम् ॥१४॥
पथिभिर्गम्यते नैवानयोर्नास्ति दया कथम् । बालयोःकष्ट मुदवीक्ष्य कृषिमार्गे सकण्टके ॥१५॥
श्रुत्वा पश्चात्सचाऽद्राक्षीद् बालकौ श्यामसुन्दरौ । श्रीराम लक्ष्मणौ नत्वाऽब्रवीन्मैवं कुरुष्वहि ॥१६॥
कथितेऽन्तर्हितौ तत्रस्थितोऽसौ नाम तत्परः । तस्मादागत्य सुप्रेम्णाऽवसुद्घमतीतटे ॥१७॥

इति श्री सद्गुरु चरिते सप्तदशः सर्गः समाप्तः ॥

(अष्टादशः सर्गः)

(मंगलाचरणम्)

भजन्तियद्विष्णु शिवस्वयम्भुवोलक्ष्म्या दिवैकुण्ठचराश्चनित्याः ।
तदेव तत्वंच मुनींद्रयोगिनां श्रीरामनामामृतमाश्रयं मे ॥१॥
मुक्ति-स्त्रीकर्णपूरौ मुनि-हृदयवयःपक्षतीत्तीरभूमिः ।
संसारा पारसिन्धोः कलिकलुषतमस्तोम सोमार्कबिम्बौ ॥
उन्मीलत्पुण्यपुञ्जद्रुमदलितदले लोचने च श्रुतीनां ।
कामं रामेतिवर्णौ शमिह कलयतां संततं सज्जनानाम् ॥२॥

(ग्रन्थ क्रमः)

संकटमोचनस्थाने काश्यां श्रीनामतत्परः । सद्गुर्वंसौस्थितो मोदात्तच्छिष्यास्तमुपाययुः ॥१॥
मिथिलातश्चते गन्तुं जगन्नाथाभिधां पुरीम् । हिद्धवः समायाताः प्रेम्णा श्री सद्गुरोःपुरः ॥२॥
दण्डवत्पतिताः प्राहुर्जिग्मिषां गुरवे मुदा । जगन्नाथपुरीं देव ! देह्याज्ञां गमनाय नः ॥३॥

(श्री सद्गुरु रुवाच)

किंकारणं व्रजध्वं हि ब्रूहि मह्यं सुपृच्छते । स्वेष्टं धाम त्यजँतश्च द्रष्टुं देवान् विरूपकान् ॥४॥

(शिष्या उचुः)

भगवन्किं वयं कुर्मः प्रतिज्ञाताश्च वै मुदा । तद्दर्शनस्यनोज्ञात्वा स्वेष्टं रूपमवोधतः ॥५॥

(श्री सद्गुरु रुवाच)

गच्छेत नैवचेद् यूयं कारयिष्यामिदर्शनम् । तत्रस्थानाञ्च देवानां यामिन्यामद्यमोदतः ॥६॥

व्रजध्वं नाम सेवध्वं साम्प्रतं हनुमत्पुरः । तद्दर्शनञ्चार्द्धरात्रौ मत्सकाशेकरिष्यथ ॥७॥
श्री सद्गुरुवचःश्रुत्वा प्रोत्फुल्लमानसाश्चते । धन्याःवयं वदन्तश्च प्रणेमुः पादयोर्गुरोः ॥८॥
यद्यत्रदर्शनं लप्स्यामहे देव! सुशोभनम् । नयास्यामि वयं स्वेष्टं धामत्यक्त्वा कदाचन ॥९॥
एवं विचार्य्य ते तत्रस्थिताःसंदर्शनोत्सुकाः । श्री सद्गुरोःपुरः सीतारामनाम जपँस्ततः ॥१०॥
तमिस्रायाञ्चतस्यां वै सद्गुरोःपार्श्ववर्तिनः । ददृशुःपरमं तेजोदधद्रूपं स्वकं गुरोः ॥११॥
किरीट कुण्डलैर्जुष्टं मणिमाणिक्यभूषितम् । चमत्कृतैश्च मुकुटैर्द्योतयन्तं मुखाम्बुजम् ॥१२॥
जगन्नाथोद्भर्षा मूर्तिं बलेनैव सुभद्रया । दृष्ट्वा श्री सद्गुरोःरूपं पेतुस्तत्पादयोर्मुदा ॥१३॥
चक्रुःस्तुतिंततोदेव ! पाहि पाहीति नःप्रभो । जगन्नाथ स्वरूप धृक् प्रपन्नार्ति विभञ्जनः ॥१४॥
नमःसद्गुरवे तुभ्यं नमः सद्धर्म्मधारिणे । नमो जगत्तारणाय श्रीरामनामसेविने ॥१५॥
इति स्तुत्वोस्थितास्तत्र गुरोरग्रे मुदान्विताः । मूर्त्तं यःसम्प्रविष्टास्ते सद्गुरावलोक्यहि ॥१६॥
मद्दचित्रं मन्यमानाः दण्डवत्पतिताःपुरः । प्रातः स्वीयं समर्प्याथ गुरवे तययुर्गृहम् ॥१७॥

इति श्री जानकीनाथशरणकृतौ श्री सद्गुरुचरिते
श्री प्रेमलताचरितामृते ग्रन्थे अष्टादशःसर्गः समाप्तः ।

(उनविंशः सर्गः)

(मंगलाचरणम्)

अं अं अं अङ्कजातोप्यतिशय चकिता मातुरङ्कान्नितान्तम् ।
तूर्णञ्चोत्प्लुत्य भानुं कृतफलसदृशं भक्षणं वीरभद्रम् ॥
सत्यं सेव्यं सुरैन्द्रैर्विधिहरहरिभिः सर्गपालान्तकैकं ।
वन्दे नित्यं वरेण्यं गिरिवरवपुषं रामदूतं कपीन्द्रम् ॥१॥

(ग्रन्थक्रमः)

श्री रामनगरम्ये लीलां द्रष्टुं समुत्सुकः । चीरार्णवाह्वये स्थानेह्यासीन्मोदान्वितो गुरुः ॥१॥
कृतनित्यक्रियःसम्यक् श्री रामनाम तत्परः । अद्राक्षीत्तत्तटे हस्तावद्धजालान् निषादकान् ॥२॥
मीनान् सरःस्थितान् हन्तुं कृतभूरिश्रमाँश्चसः । दैवात्तत्रस्थिताःमत्स्याःजालैर्बद्धाह्यनेकशः ॥३॥
तथा विधाँश्चतान् दृष्ट्वा गत्वातत्राऽब्रवीद्गुरुः । भोनिषादाः इमान् हित्वागलेे गच्छत वै गृहम् ॥४॥
कथं त्यजेम भोदेवाऽस्माकं कर्मास्तिहीदृशम् । वृत्त्याऽनयावयंनित्यंस्वबन्धून् पालने क्षमाः ॥५॥
इदं कर्मास्तिवै मह्यं सृष्टं वै विश्वकर्मणा । भवन्तो नामरटनं कुर्व्वंतो निजकर्महि । ६॥
तेषां तद्वचनंश्रुत्वा विषण्णःस्वगतं गुरु । स्थातव्यो न मयात्रेति व्रजामिमिथिलामितः ॥७॥
यतो न धार्मिकःकश्चिद् यथा राजा तथा प्रजा । नामास्ति रामनगरं जनाःपापपरायणाः ॥८॥
लीलाऽत्रस्याच यानित्यंकार्य्यते किल्विषान्वितैः । द्रष्टुयोग्या न सचास्तिमिथिलांतद्व्रजाम्यहम् ॥९॥
प्रातर्यास्याम्यहं क्षिप्रं नैवास्त्यत्र प्रयोजनम् । मनस्येव विचार्य्यासौ श्रीरामेति जपँस्थितः ॥१०॥
लीलायां नैवगत्वाऽपि रात्रौ शोकान्वितोऽभवत् । अशृणोद् वचनंदिव्यं व्योमजातं मनोहरम् ॥११॥
खिद्यसे त्वं कथं तात ! लीलात्येषाहरेःशुभा । तेनैव रचितं सर्वं जगदेतच्चराचरम् ॥१२॥

पाल्यते सृज्यते तेन तेन संह्रियतेऽपिच । निषादास्तेनवै सृष्टाःमत्स्याश्च तेन एवहि ॥१३॥
सृष्टा गौस्तेन सिंहोऽपि बिडालो मूषिकोऽथवा । छागाश्च घातकाश्च पि त्रिदिवो नरकोऽपिच ॥१४॥
निर्जराःराक्षसाश्चापि पिशाचाःमानवाःपुनः । धार्मिकाःवैष्णवा म्लेच्छाःपापाचार परायणाः ॥१५॥
स्वकर्म भुञ्जते तात ! सर्वे सर्वंशतास्त्वतः । स्वकर्म साधनीयंहि हित्वा सर्वाश्रयं व्ययाम् ॥१६॥
शंकानैव प्रकर्त्तव्या श्री हरेःकर्मसु क्वचित् । तदाज्ञया विना वायुर्वाति नैव कथञ्चन ॥१७॥
तप्तुं सूर्यो हिमांशुश्च शक्तो नैव प्रकाशितुम् । वह्नि र्ज्वालयितुं सम्यक् शमनो दंडितुं नहि ॥१८॥
अतः स्वीयश्रयत्कर्म हरे नाम जपात्मकम् । श्वासोच्छ्वासमितं तत्रानिशं भवपरायणः ॥१६॥
इति श्रुत्वा वचोदिव्यं व्योमजातं प्रमोदम् । आश्चर्यं मन्यमानोऽसौ धन्योऽहमममंस्तह ॥२०॥
जपन् श्रीरामनामेति रात्रावेवाऽलिखत् त्विदम् । यद्व्योमजातं वचनं नाम्ना विश्वविलासकम् ॥२१॥
तदाऽरभ्य मुदालीलां द्रष्टुं यातिस्म सादरम् । श्रीरामनाम निरतःसद्गुरुःसज्जनैर्वृतः ॥२२॥
ततो वसन् सुजाह्नवीतटे व्रजन् यदा कदा । सदा मुदा रटन्नटन्नितस्ततश्चनामकम् ॥२३॥

इति श्री जानकीनाथशरण कृतौ श्री सद्गुरुचरिते
श्री प्रेमलता वृहद् चरितामृते महाकाव्ये
उनविंशः सर्गः समाप्तः ॥

[विंशः सर्गः]

(मङ्गलाचरणम्)

कं कं कं कोटिकाल द्युतिजितवपुषंकोटिसूर्य्यच्छटाभं,
कोटींद्वाभं सुशीतंजनमनसिगतं कोटिवात प्रवेगम् ।
कोट्यग्न्याभंसुदिप्तथा धरणिजलनिधिभ्यां क्षमापात्रमेकं,
वन्देनित्यं वरेण्यं गिरिवर वपुषंरामदूतं कपीन्द्रम् ॥१॥
महामणीन्द्राच्च प्रकाशतेऽधिकं नृणांसुजिह्वासुविराजितं सताम् ॥
आभ्यन्तरध्वान्त-निवारण क्षमं श्रीराम नामाहमहर्निशं भजे ॥१॥

(ग्रन्थक्रमः)

श्री सद्गुरुवाचेदं शिष्येभ्यः शृणुताऽधुना । मदुक्तंशतसंख्याकं वचनं सर्वसिद्धिदम् ॥२॥
सदामोदान्वितस्तिष्ठेद्रामतेजो विभावयेत् । सर्वयोनिषु तच्चिन्तामग्नोलीनोहरेर्गुणे ॥३॥
भरणं पोषणं नित्यं तदाधीनं प्रकल्पयेत् । नृणामाशां परित्यज्य सङ्कल्पादीन्परित्यजेत् ॥४॥
त्रिषुदेहेषु वै भिन्नं स्वरूपं स्वं प्रकल्पयन् । सत्सङ्गं सम्प्रकुर्य्याच्च सीतारामे रसोन्यसेत् ॥५॥
अहङ्कारं मनो बुद्धिं चित्तं रामे समर्पयेत् । मन्त्रराजं जपन्नर्थं मनस्यपि विभावयेत् ॥६॥
मिथिलेन्द्रसुतायाश्चसखी भावन्यसेन्निजे । भक्तिं ज्ञानञ्च वैराग्यं मुमुक्षुत्वं विवर्द्धयेत् ॥७॥
षत् सम्पत्तिं विजानीयात्तथाषट्शरणागतिम् । श्री सद् गुरोर्भगवतो जानीयादर्थं पञ्चकम् ॥८॥
लब्ध्वानिरभिमानित्वं भार्य्याभावं हरेर्भजन् । दयापरश्च सर्वेषु सदाऽहिंसां समभ्यसेत् ॥६॥
क्रोधद्रोहौ परित्यज्य सर्वदा सर्व योनिषु । सुख-दुःखेऽपमानित्वं सोढुं नत्यं क्षमोभवेत् ॥१०॥
सत्यं प्रेम्णा वदेद् वाक्यं षड् विकारविवर्जितः । परोपकारकोधीमान् तिष्ठेदाचार-संयुतः ॥११॥

सदेच्छा रहितो लोके व्रजेन्नैवाविधिक्रियाम् । मुखरो न चकार्य्येषु कुर्य्यान्नैवापि संग्रहः ॥१२॥
शान्तस्वभावोह्यलाशी मौनीस्यात्कलहेष्वपि । भेदमन्यत्रनोब्रूयान्निज वृत्तं कदाचन ॥१३॥
स्थानं वस्त्रं सुपात्रञ्च शरीरञ्च मनोऽपिच । शुद्धं कुर्वन् सदातिष्ठेत् धारयन्सपवित्रताम् ॥१४॥
संभाषणस्य कालञ्चस्वल्पंस्वप्नस्य कारयेत् । एकान्तःस्थोधैर्य्यवाँश्चसर्वमित्रो निरालसः ॥१५॥
नाम्नि धाम्नि स्वरूपे सु लीलायां निरतोहरेः । सदापरायणस्तेषु व्यर्थकालं न यापयेत् ॥१६॥
सजातीयाँश्च सद् ग्रन्थान् पठन्सत्सङ्गतिंभजेत् । विजातीयाँश्चतान्हित्वाचरेत्सम्भाषनादिषु ॥१७॥
वाह्याभ्यन्तरतः शुद्धः सचेष्टः सर्वदैवहि । देह भोगमनित्यञ्चजानीयान्मोदसंयुतः ॥१८॥
नाम्नि धाम्नि सुगायत्र्यां मन्त्रेदिव्येषडक्षरे । भावनायां सदातिष्ठेदनन्यो नित्यमेवहि ॥१९॥
तथा रूपे गुरोस्तस्य सेवायांरसकेऽनिशम् । पादामृते प्रसादे च पञ्चसंस्कार कर्मणि ॥२०॥
इत्याज्ञायां सत्गुरोस्तिष्ठेन्निवसेदिष्टधाम्न्यपि । सीतारामश्रयान् सर्वान् ज्ञात्वानिन्दांनचाचरेत् ॥२१॥
नवोत्कपठाप्रकुर्याच्च श्रीरामदर्शनाय च । श्रीराम स्नेहिभिर्नित्यं स्नेहः कार्य्योह्यतन्द्रितः ॥२२॥
इच्छन्नात्मस्वरूपन्तु मननंतत्रचाचरेत् । उदारः सर्वदाभूयाद्वासनामीषणां त्यजेत् ॥२३॥
तिस्त्रः षडुर्मीर्मनसाषड्विकारान्सदैव हि । वस्त्रपूतंजलं दुग्धं गृह्णीयाद्राममर्चयन् ॥२४॥
स्वादुत्वं संपरीक्ष्यादौ प्रसादं हरयेऽर्पयेत् । अभक्ष्यान् संत्यजेत्सर्वान् पलाण्डुलशुनादिकान् ॥२५॥
गृञ्जनान् कवकान्येव वृन्ताकान् गोमिकामपि । मकारान् पञ्च मद्यानि मादकादीनिचत्यजेत् ॥२६॥
नान्यदेवमुपासीत तुलस्या हरिमर्चयेत् । आरार्तिकं हरेर्नित्यं गुरोः कुर्यात्सुपूजनम् ॥२७॥
तिलकं मुद्रया कुर्यात् जप्त्वामन्त्रंसुलौकिकम् । नो तर्जन्या स्पृशेन्मालां नामरुपं प्रचारयेत् ॥२८॥
मरणान्नो विभीयाच विभीयाद्भजन न चेत् । हरौ गुरौ च दीनः स्याद्विषयिभ्यःकदापि नो ॥२९॥
विद्या रूपं धनं जातिर्यौवनंभक्तिकण्टकम् । मत्वामदँस्त्यजेत्तेषु श्री रामेत्यनिशंजपत् ॥३०॥
सुकृत्यं नो वदेत् केभ्योस्वीयंपापंप्रकाशयेत् । रामोत्सवे विवाहादौ सुमिलित्वाजनैश्चरेत् ॥३१॥
भगिनीव चरेत्स्त्रीषु मातेव दुहितेव च । रामेपतिव्रतास्त्रीव निजंप्रेम्णा समर्पयेत् ॥३२॥
तदिच्छयाऽनिशंतिष्ठेद्व्रतं कुर्यान्ननिन्दयेत् । सतां प्रसादतः पादामृतात्तु स्येत्सदैव हि ॥३३॥
स्वस्थानं श्री हरेर्नाम्ना भूषयेदायुधैर्वरैः । गृह्णीयात्तुलसीमालां भूषणान्यपितत्सदा ॥३४॥
पीताम्बरं पीतवस्त्रं भूषणं तिलकादिकम् । धृत्वा च तुलसीमालां सहस्राख्यांजपेत्सदा ॥३५॥
लक्षं सपाद लक्षंवा श्रीरामनाम उत्तमम् । जपेत् प्रहर्षितः सद्भिर्वैष्णवैर्नामतत्परैः ॥३६॥
गार्भं वृत्तं स्मरन्नित्यंश्वासोच्छ्वासप्रमाणतः । जपेत् योनिषु यत्कष्टं दृष्ट्वानित्यंदृढोभवेत् ॥३७॥
श्रीराम स्मरणे नित्यं लीलारुपादिचिन्तने । चिन्तयेत्स्वस्वरूपञ्चमायारुपं हरेस्तथा ॥३८॥
नमनं पूजनं कुर्य्यान्मूर्तौ श्रीशंकरस्य हि । लिङ्गंनैवार्चयेद्धीमान्ज्योतिर्लिङ्गं विहामच ॥३९॥
अवैष्णवान्नकं नैव ग्राह्यंचान्य समर्पिकम् । निजार्थे भोजनं वस्त्रं याचेत नो धनान्यपि ॥४०॥
गुरुभ्यः प्रार्थयेन्नैवनान्यं नाम विहायच । मृत्युतुल्यं महाकष्टं विजानीयात्कृतेतथा ॥४१॥
भक्तिन्वद्वादशी शुद्धांवैराग्यंत्यागमेवच । वीरतां धारयेत्सम्यक् पञ्चसंस्कार संयुतः ॥४२॥
ज्ञात्वा पञ्चस्थान् सम्यक् श्रृङ्गारैर्णार्चयेद्धरिम् । सुस्पष्टं तिलकं गृह्णन्निर्हियोनोत्यजेत्कदा ॥४३॥
श्रीवैष्णवाद्धरेर्धर्मान्नान्यान्धर्मान्प्रकल्पयेत् । देहसम्बन्धिनश्चैव वाकृत्यधर्मेनियोजयेत् ॥४४॥
तेभ्यः श्रीगुरुणासम्यक् सम्बन्धं दापयेन्मुदा । त्रिभिःसप्ताष्टचाङ्गैस्तुदण्डवन्नमनंचरेत् ॥४५॥
गुरुभ्यो हरयेनित्यं वैष्णवेभ्यो मुदान्वितः । जन्मन्यस्मिन् हरेर्भक्तिं प्रेमाख्यैवपरांभजेत् ॥४६॥
दशनामापराधाँश्च हित्वानामान्यहं जपेत् । रामायणं पठेन्नित्यं प्रेम्णानामायनंसदा ॥४७॥

नाम्नोभेदान् नवाष्टौसुविधानंषट्प्रकारकान् । रीतिञ्च षोडशाख्यांवैजानीयाद्गुरुणामुदा ॥४८॥
सेवायां श्रीहरेर्नित्यं द्वात्रिंशदपराधकाः । यायन्तेतान् परित्यज्य श्रीरामेत्यन्वहंजयेत् ॥४९॥
चतुर्विंशतिचिह्नैश्चसीताराम पदाम्बुजम् । ध्यायेदहर्निशं श्रीमान्वैष्णवो रसिकाग्रणीः ॥५०॥
श्रीवैष्णवं परंधर्मं भजन् सद्ग्रन्थमुत्तमम् । पठन्सन्मनन कुर्य्याद्भावे गम्भीरकेऽनिशम् ॥५१॥
आरार्तिकं गुरोर्नित्यं हरेश्चैव हनूमतः । नाम्नः प्रकार्तयेद्भक्त्याप्रेम्णा श्रीनामतत्परैः ॥५२॥
ऋणंनाम्नोनचोद्धर्तुं शक्तश्चान्यैः सुकारयेत् । महात्मभिर्वैश्चनित्यं श्रीनामतत्परैः ॥५३॥
श्वासोच्छ्वासंजपेन्नामनित्यं लक्षमितं सदा । सपादलक्षकं वापि चतुर्थांशं विधानतः ॥५४॥
भवत्येव हरेस्साक्षात्कारोब्दे द्वादशेशुभे । लीलायां श्रीहरेर्नित्यं स्नेहः कुर्य्यादतन्द्रितः ॥५५॥
मिथिलामायोध्यायां काश्यां वा चित्रकूटके । परिक्रमसदा तिष्ठेतत्तद्भवे सुमहोत्सवे ॥५६॥

(इति श्रीजानकी नाथ शरणकृतौ श्रीसद्गुरु चरिते श्री प्रेमलता- चरितामृते ग्रन्थे विंशः सर्गः समाप्तः)

एकविंशः सर्गः

(मङ्गलाचरणम्)

स्वर्णाभामम्बुजकरां रामालोकन तत्पराम् । ध्यायेत् षट्कोण मध्यस्थ-रामाङ्कोपरि शोभिताम् ।

(ग्रन्थक्रमः)

श्री सद्गुरौ गुणाह्यासीत् षट् त्रिंशत्काःमुदान्विताः । नामनन्य गतिस्त्वेकोऽन्तर्य्यामित्वं ततोपरः ॥१॥
सत्कवित्वं तृतीयश्च चतुर्थः सर्वदेशगः । पञ्चमो वेदशास्त्राणां तत्वज्ञानात्मको महान् ॥२॥
षष्ठो बालब्रह्मचर्य्यःसप्तमः सर्वजित् गुणः । अष्टमो मृतकप्राणदातृत्व गुण उच्यते ॥३॥
नवमो मारणं प्रोक्तः दशमो मोहनं तथा । वशीकरणकश्चैकादशश्चद्वादशस्ततः ॥४॥
उच्चाटनं त्रयःपंक्तिर्विद्वेषः कथ्यते ह्यनु । गुणश्चतुर्दशः ख्यातःनाम्ना चाकर्षणंत्विति ॥५॥
नाम्नः प्रचारकं पञ्चदशो वै षोड़शोमहान् । देव दर्शनको जातो गुणः सप्तदशोऽपरः ॥६॥
हनूमतो दर्शनञ्च चरित्रं पठनादिकम् । साक्षात्कारोऽष्टादशश्च श्रीसीतारामयोश्चयः ॥७॥
षट् सम्पतिर्गुणाःषट् तु षोढ़ा च शरणागतिः । षड्विकार विजेतृत्वं षट् त्रिंशत्कागुणा इमे ॥८॥
एते मुख्याःगुणाः प्रोक्ताःइतरे चापि सन्त्यहो । को वर्णितुं क्षमस्तांश्च जायेत क्षितिमण्डले ॥९॥
वन्दे सद्गुरु-पादपद्ममलं मोहान्धकारान्तकं, यन्मध्ये मधुरं परागममलं वर्वर्ति सर्वोत्तमम् ।
यल्लुब्धा भ्रमरर्षभाःसुरसिकाःसन्तःसदाऽऽयांतिहि,सेवन्तश्चपरांगतिजगतियांचिन्ततितां यान्तिहि॥१०॥

इति श्री सद्गुरु चरिते एकविंशः सर्गः समाप्तः ॥

(द्वाविंशः सर्गः)

(मङ्गलाचरणम्)

वाञ्छा कल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च । पतितानाम्पावनेभ्यः श्रीवैष्णवेभ्यो नमोनमः ॥

(ग्रन्थः क्रमः)

कचित् काश्यामयोध्यायां चित्रकूटे कचित्। मिथिलायां विशेषेण वासोऽकार्षीज्जगद्गुरुः ॥१॥
श्री सियारामाभिधं नाम जयशब्द प्रपूर्वकम्। प्रचारितं जगन्मध्ये दिव्यं सद्गुरुणा मुदा ॥२॥
श्री सीताजन्म भूमौ श्रीसिद्धजीवस्य धीमतः। निकटे तस्थिवाँस्तेनाद्यादशाब्दं जगद्गुरुः ॥३॥
श्री जानकी जन्मभूमेश्च जनकाख्यपुरस्य च। परिक्रमा समारब्धा याऽवरुद्धाऽभवत्पुरः ॥४॥
साम्प्रतं क्रियते याहि प्रत्यब्दं सज्जनैर्मुदा। नामोच्चारपरैर्लक्षैः शुद्धाचारैः पदातिभिः ॥५॥
शिष्यास्त्वनन्ताः संयाताः येषु यासु सहस्रशः। श्रीसियारघुनाथाख्यः प्रपन्नाग्रस्तुकथ्यते ॥६॥
लिखितं येन वै ग्रन्थं सद्गुर्वाज्ञामवाप्य ह। श्रीसद्गुरु कृपायुक्तं प्रकाशाभिधमुत्तमम् ॥७॥
अष्टोत्तरशतंदिव्यं प्रसङ्गाख्यं समुज्वलम्। स्मृतं नाम स्वसङ्ख्याकं युग्मं तत्प्रीतिहेतवे ॥८॥
प्रपन्नः सद्गुरु-रामः सद्गुरोः सेवको महान्। शिष्योऽद्वितीयः सञ्जातः महान्तपदलाञ्छितः ॥९॥
यस्योद्योगेन श्रीसीतामठे श्री लक्ष्मणातटे। श्रीसद्गुरुनिवासाख्यं स्थानं वैनिर्मितंशुभम् ॥१०॥
वासोयत्राऽभवत्प्रेम्णाऽन्वहं श्रीसद्गुरोर्मुदा। चरितानि चरित्राणि चित्राणिश्रेयसानि हि ॥११॥

इति श्री श्री सद्गुरुचरिते द्वाविंशः सर्गः समाप्तः

[त्रयोविंशः सर्गः]

(मङ्गलाचरणम्)

चलद्वालघाताद् भ्रमचक्रवालं कठोराट्टहासात्प्रभिन्नाब्जमण्डम्।
महासिंहनादाद् विशीर्णत्रिलोकं भजेत्वाञ्जनेयं प्रभुं वज्र कायम्॥

(ग्रन्थक्रमः)

कुर्वन्नित्थंचरित्राणि शिष्यैर्युक्तो जगद्गुरुः। श्रीसद्गुरु निवासाख्ये उवास नाम तत्परः ॥१॥
प्रसार्यापि जगन्मध्ये सियारामेतिनामकम्। नाम प्रचारकत्वं सद्गुरुणोऽसौ लब्धवान्रहः ॥२॥
आबाल ब्रह्मचर्यं त्वं पालयन् व्रतमुत्तमम्। यातः परमहंसत्वं विख्यातः क्षितिमण्डले ॥३॥
जीवानुद्धारयामास पतितान् वै भवार्णवे। ख्यातश्च परमाचार्य्यः सद्गुरुः स जगद्गुरुः ॥४॥
रागिणीभ्यः कीर्तनानि सुमृदून्यमितान्यपि। श्रीसियाराम नामश्च कीर्तितानि सु तेन हि ॥५॥
स्वसन्मुखागतान् जीवान् वेदमार्गवहिष्कृतान्। सन्मार्गे योजयामास दत्त्वादिव्यवरान् शुभान् ॥६॥
अभूवन् रोगमुक्ताश्च कियन्तो रोगिणो मुदा। अशोकाः शोकसंतप्ताःगत्वा सद्गुरु सम्मुखम् ॥७॥
चिकीर्षवश्च शास्त्रार्थान् आगता ये गुरोःपुरः। पराजिताश्चतेचापि ह्याकृष्टाश्च सुधर्म्मसु ॥८॥
इत्यादिनि चरित्राणि जातानि चाद्भुतानिहि। श्री सद्गुरोर्भगवतो वक्तुं तानि क्षमश्चकः ॥९॥

हत्वा वै भूमिभारन् धरणि तलगतान् नास्तिकान् मर्दयित्वा,
दत्वा दिव्यामृतं वै युगलमथ सियारामनामेति शुद्धम्।
कृत्वा कार्य्यं वरेण्यं निखिलपरिकरेभ्यश्च दत्त्वेष्टकानि,
श्री साकेतं गतः श्रीऋषिवर ममलस्तंच भूयो नमामः ॥१०॥

वसुनिधि नवचन्द्र-वत्सरे वैक्रमीये, उषसि गुरुदिनेऽमायां तिथौ श्रावणेऽसौ।
वरुणतटमवाप्यकाशीकायाश्चयोऽगाद् भुवनमथनुमस्तं प्रेमवल्ल्यावतारम्॥ ॥

॥ इति श्री सद्गुरुचरिते त्रयोविंशसर्गःसमाप्तः ॥

[चतुर्विंशतिः सर्गः]

(मंगलाचरणम्)

वन्दे संसारसारं सुखनिधिममलं शान्तिदं सौख्यसारम्,
सम्बन्धेनाद्यनन्त प्रमुदितहृदयाः शाश्वताः शान्तियुक्ताः ।
अज्ञानांज्ञानरूपं गतिमगतिगतां भावनं भावुकानाम्,
नीतिज्ञानां सुनीतिं रसमरसविदां श्रीगुरोः पादपद्मम् ॥
भवतु भव्यमतस्तव साम्प्रतं यदिगुरोरवलम्बन मानसे,
हृदि विकाशतयासुखमद्भुतं विगत मानमसारमवाप्यते ॥
हे ! कल्याण निधे ! मनाश्रय ! विभो ! श्रीजानकीशप्रद !
हे ताप त्रय पापनाशन कृपापीयूष पूर्णाम्बुधे ॥
हे ! दीनानार्तिमहान्धकारखवितमाया मनुष्याकृते,
मह्यं दीनहृदे मलीनमतये प्रीतिंस्वकीयां दद ।
नमः सुन्दरेशं परेशं महेशं प्रकृत्यान्धकारघ्न प्रोद्यद्दिनेशम्,
सदाये भजंतीह भक्त्या भवन्तं मनोऽभिष्ठमापूर्णतांतूर्णमेति ॥

(ग्रन्थक्रमः)

आदौ पृथ्विभयं निरीक्ष्य निखिलैर्देवैः हरिःसंस्तुतः ।
मौञ्जीराम तपोनिदानममलंदृष्ट्वा च साऽज्ञापिताः ॥
देवी प्रेमलता प्रमोदजननी श्री केलिकुञ्जेश्वरी ।
पुत्रत्वेन समागता सुभवने श्रीबालरामात्मकः ॥१॥

संस्कारान्तरतः पितुर्हरि भुवं दृष्ट्वा प्रयाणं ततः । मातुःप्रेम वशाच्च तद्धितमनाःगुर्वंशयानामकम् ॥
प्रेम्णाश्रीहनूमन्तकं ह्यहरहः सुश्रावयामास ह । प्रीतोऽसौ सुपपाठतेनसुदिनःवेदादिकाः साङ्गकाः॥२॥
जाते मातरि सद्गुरुः सुविमले साकेतके धाम्निसः, हित्वामातृभुवंजगाम रुचिरं श्रीचित्रकूटंमुदा ।
तस्मात् दाशरथींपुरीञ्चगतवान्श्रीसद्गुरुं प्र.सवान्, सेवायांस्थितवान्गुरोश्चहि ततःश्रीचित्रकूटंययौ ३
तत्राऽत्रेर्मिलनं ततश्चमिथिलामागत्यमोदान्वितः, आदेशाच्च ऋषेरवाप्य विमलश्रीसिद्धजीवंततः ।
तेनप्रेषितआगतो जनकजाया(श्री)विहारेस्थले, यत्रश्रीसहितः प्रभुर्भजनतः प्रत्यक्षभूतोऽमुना ।४॥

तस्मात्काशीञ्चगत्वानव नवचरितान्याकृतान्यद्भुतानि ।
प्रत्यक्षं कालिकायाः अपिचगुरुहरस्याऽन्नपूर्णात्मिकायाः ॥
गंगायाः वीरभद्रस्य च पवनशिशोर्दिव्यनाम्नः प्रयोगात् ।
सिद्धत्वं प्राप्य सिद्धिं परिकर सकलैः येह्यदासोऽवतान्नः ॥५॥

(इति श्रीसद्गुरुपादपद्माश्रित जानकी नाथ शरणकृतौ
श्री सद्गुरुचरिताख्ये श्रीप्रेमलता चरितामृते
ग्रन्थे चतुर्विंशः सर्गः समाप्तः)

ग्रन्थोऽयं श्रीसद्गुरुदेव करकमलार्पणमस्तु

"जय सियाराम जय जय जय–
सियाराम ।

श्रीसद्गुरुचरिते परिशिष्ट विभागः

अथ श्रीप्रेमलता मानसी पूजा पद्धतिः।

स्नानादि नित्य क्रियासे शुद्ध होकर आवाहन पूर्वक श्रीमहाराजजी का ध्यान निम्नाङ्कित मन्त्रसे करे,

आवहनं-ध्यानञ्च—ॐ आवाहयाम्यहं देवि, श्री प्रेमलतिकाम्बिके, पूजांगृहाण देवेशि सियालाल स्वरूपिणि॥ ॐ वन्दे 'श्री' प्रेमलतां शरद् विधुमुखीं संतप्तहेमप्रभां, श्रीसाकेत विहारिणीं धरणिजा जानेः प्रमोदाकुलाम्। मुद्रांपञ्चविधारिणीं मधुरमामापञ्चसंस्कारिणीं श्री-रामेतिपरेशनामनिरतां श्रीकेलिकुञ्जेश्वरीम्।

आसनम्—सौवर्णमासनं दिव्यं नानालङ्कार भूषितम्। गृहाणत्वं महादेवि! मनसाय-त्प्रकल्पितम्। इति मन्त्रेणस्वर्ण सिंहासनं समर्पयामि, श्रीप्रेमलतायैनमः। तदन्तर निम्नाङ्कित मन्त्र से पाद्य अर्घ्य आचमन स्नान करावे।

पाद्यं अर्घ्यं स्नानञ्चेति आचमनं—ॐ लक्ष्मणा कमला, वाणी, वाशिष्ठी विरजोद्भवं, पाद्यार्घ्याचमनस्नानान्यर्थे वारिप्रगृह्यताम्। इत्यनेन पाद्यार्घ्याचमनस्नानान्यर्थें, शुद्ध वरि समर्पयामि श्रीप्रेमलतायै नमः।

पीताम्वरादि भूषणानि—पीताम्वरं सुवर्णाभं सौवार्णभूषणान्यपि, गृहाण, कुण्ड-लादीनि मद्दत्तं रामवल्लभे! इस मन्त्रसे पीताम्वर कञ्चुकी मुकुट कुण्डल, कंकण, किङ्किणी नूपूरादि अर्पण करै। इमानि पीताम्वरादि भूषणानि श्रीप्रेमलतायैनमः। तदनन्तर निम्न मन्त्रसे पञ्चमुद्रातिलक एवं सिन्दुरादि अर्पण करै।

तिलकं सिन्दूरञ्च—ॐ पञ्च मुद्राङ्कितं-दिव्यं-तिलकञ्च सभूषणम्। गृहाण राम रजसा सिन्दूरं रामभामिनि! अनेन मन्त्रेण पञ्चमुद्राङ्कितं सभूषणं तिलकं ससिन्दूरं श्रीप्रेमलतायै नमः। इसके पश्चात् सुगन्धित पुष्पमाला अर्पण करे।

पुष्प माल्यानि—नीलश्वेतारक्तपद्मपरिजाजोद्भवानिहि! तुलसीमल्लिकाराजपुष्प माल्यानि धार्य्यताम्॥ अनेन पुष्पादिमालां समर्पयामि श्रीप्रेमलतायै नमः। तदनन्तर-धूप और दीप देवै चन्दनागुरु कस्तूरीसमुद्भतं सुगन्धकम्। धूपं गृहाण दीपञ्च शतवर्ति समन्वितम्॥ अनेन धूपं दीपं समर्पयामि श्री प्रेमलतायै नमः। तत्पश्चात् नैवेद्यार्पणकरे—

पक्वान्नादिनैवेद्यं फलानिच—मिष्टान्नाऽपूपकं दिव्यं पायसं गोघृताञ्चितम्। गृहाण देविकदलीचूतादीनि फलान्यपि। अनेन नैवेद्यान पक्वान्नादि फलानिच श्रीप्रेमलतायै नमः। तद-न्तर आचमन और ताम्बूल देवै।

आचमनं ताम्बूलञ्च—लक्ष्मणा कमला जातं वारिणाचमनीयकम्। एलालवङ्ग संयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम् तत्पश्चात् आरती नीराजन पुष्पाञ्जलि प्रदक्षिणा कर दण्ड-वत्प्रणाम करे।

*** आरार्तिकं नीराजनं पुस्पाञ्जलिं प्रदक्षिणां दण्डवन्नमनञ्च**—आरार्तिक-मिदं नीराजनं युग्मां प्रदक्षिणाम्। पुष्पाञ्जलिं दण्डवत्प्रणतिं कुर्य्यां वरानने! अनेन मन्त्रेण

---

* आरती,, स्वा० श्री सियारघुनाथ शरणजी कृत (लावनीचाल)

आरती सद्गुरुकी करिये, ध्यान नख शिख लौ उर धरिये।

आरार्तिकं नीराजनं पुष्पाञ्जलिं प्रदक्षिणां दण्डवन्नमनञ्च । श्री प्रेमलतायै नमः तदन्तर अपराध क्षमा करावै ।

अपराध क्षमापनं—अपराधक्षमांकृत्वा भक्तिं प्रेमाम्परांहरेः! सियारामाभिधंनामरटनं, देवि ! दीयताम् । निर्हेतुकी कृपाकार्य्या त्वया मातर्म्ममोपरि, पादाम्भोजान्नचान्यास्तु गतिर्मे शरणं प्रदे ! अनेनापराधः क्षमापयेत् ।

— —

(श्री प्रेमलताष्टकम्)

केलिकुञ्जकामिनीं, गजेन्द्र तुल्यगामिनीम् । सुतप्तकाञ्चन प्रभां, भजामि मोदवल्लरीम् ॥१॥
पद्ममुद्रिकाङ्किता तथा सुपञ्चसंस्कृताम् । सुरासुरैर्नमस्कृतां भजामिमोदवल्लरीम् ॥२॥
किरीट कुण्डल-त्विषोल्लसत्सुगण्ड मण्डलाम् । सुभालचन्द्रिकोज्वलां भजामिमोद व० ॥३॥
विधीश विष्णुभिनुतां, निजप्रियेणसंयुताम् । सुभूषणैश्चभूषितांभजामिमोद० ॥४॥
विनाशसर्गपालनाक्षमां क्षमवन्तीं वराम् । विदेहकन्यकाप्रियां भजामिमोद० ॥५॥
अशेषवेधारिणीमशेषकर्मकारिणीम् । अशेषधर्मधारिणीभजामिमोद० ॥६॥
निजप्रपन्नपालिनीं कराब्ज मञ्जुमालिनीम् । सदैव कीर्तिशालिनीं भजामिमोद० ॥७॥
जनेप्सितार्थदायिकां भजामि रामनायिकाम् । यशोऽमलं प्रदायिकां भजामिमोद० ॥८॥
पठेत यः स्तवंस्त्विदं सुमोद-आलिकोद् धृतं । लभेत राम नाम धाम रूपकञ्च लीलया ॥९॥

॥ श्री प्रेमलताकवचम् ॥

शिरः प्रेमलतापातु भालं श्रीप्रेममञ्जरी । प्रेमाहशः श्रुति, पद्माघ्राणं श्री प्रेममल्लिका ॥१॥
जिह्वां प्रीतिप्रदापातुदशनं परमार्थिका, । कंठं पातु पतिप्राणा, वाहू पुण्य प्रकाशिका, ॥२॥
हृदयं पुण्यदापातु ह्युदरं परमेश्वरी, । उरू मे परमानन्दा जंङ्घे पृथ्वीसुतानुगा ॥३॥
पीताभापातु पादौ मे पातु प्रेमाखिलंवपुः । पंचसंस्कारसंयुक्ता, दिग्भ्यः पातु सदैवहि ॥४॥
एतां प्रेमलतोपेतांरक्षांयस्तु पठेत्सुधीः । त्रिकालोद्भव-भीर्नैव जायते तस्य निश्चितम् ॥५॥
षड् विकारोद्भवं कष्टं नष्टंस्यात्पठनात्सदा । प्राङ् प्रत्यङ् कवचात्किन्तु श्रीरामेत्युतं जपेत् ॥६॥
कवचन्त्विदमेवात्र स्वान्तेयत्तत् प्रकाशितम् । लिखितं जानकीनाथशरणेन च तन्मया ॥७॥

ॐ चरण दोउ हरण पापरासी, नमत जेहि छूटत चौरासी ।
पीतपट अँचला कटि जोहैं, उरन्हि वहुमाल जाल सोहैं ।
दो०—कर कमलन्हि मालाप्रभु फेरत मन्त्रराज धरि ध्यान,
श्यामल गौर किशोर युगल छवि करत मधुपमन पान ।
भाल छवि तिलक दृगनि भरिये, आरती सतगुरु की करिये ।
शीश पर टोप कोपहारी, लखत मोहत जग नर नारी ।
वृक्षतर खास वास विश्राम, रमहिं नित महल टहल वसुयाम ।
दो०—मन्द मन्द मुसुकात जनन लखि, दया दृगनि की कोर,
सिय रघुनाथ शरण प्रद भयहर असश्रीसतगुरु मोर ।
जाँउ बलि जन्म मरण हरिये, आरती सतगुरु की करिये ।

नोटः—इसके अतिरिक्त (श्री सतगुरु भगवानकी) इत्यादि अनेक आरती के पद्य हैं ।

॥ श्री प्रेमलताष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ॥

अस्य श्री प्रेमलताष्टोत्तरशतनाम-स्तोत्रस्य श्री रामवल्लभाशरणमहर्षिः अनुष्टुप् छन्दः । श्री सीतारामौ देवता, श्री जानकीबीजम्, श्रीरामस्तत्वम् श्रीप्रेमलताष्टोत्तर शतं नाम्नः पाठे विनियोगः। तत्रादौ हृदयादि न्यासाः । श्रीप्रेमलतायै हृदयाय नमः । श्रीप्रेममञ्जर्य्यै शिरसे स्वाहा । श्री प्रेम-मल्लिकायै नेत्रत्रयाय वषट् । श्रीसाकेत विहारिण्यै अस्त्रायफट् । अङ्गुष्ठादिन्यासाः ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ ह्रूँ मध्यमाभ्यां नमः । ॐ ह्रौं अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रः कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः करतलपृष्ठाभ्यां नमः । अथ ध्यानम् पूर्ववत् वन्दे प्रेमलतामिति ध्यात्वाऽष्टोत्तरशतं बीजमहामन्त्रम् ॐ ह्रां ह्रीं श्रीं प्रेमलतायै नमः इति जप्त्वा स्तोत्रंपठेत् ।

प्रेमा, प्रेमलता, प्रीतिप्रदा, श्रीप्रेममञ्जरी । परा श्रीप्रेयसी, पद्मा प्रहृष्टा, प्रेममल्लिका ॥१॥
पञ्चसंस्कारसंयुक्ता, पञ्चमुद्राविधारिणी । पीताभा, पीतवसना, पञ्चकेशावलम्बिनी ॥२॥
पुण्यापुण्यप्रकाशा, च पुण्यदा, परमार्थिका । परेशा, परमानन्दा, प्रमदा, परमार्थिका, ॥३॥
रामा, रामाङ्कआरूढा राघवेन्द्रप्रिया, रमा । श्रीरामरमणी, रम्यो, रतिमानविमर्दिनी ॥४॥
मन्दस्मिता, महामोदा, सदामोदकरी, मुदा । मदमत्संरमोहानां महाध्वान्तविनाशिनी ॥५॥
मैथिलीवल्लभा, मोहामञ्जुमाल्य विधारिणी । मतिदा, मन्मथा, मेधा, महामाया, महासती॥६॥
कमला, कामिनी, कान्ता, केलिलीला विशारदा । करुणारूपिणी, कान्तिकामा, काम्यवरप्रदा ॥७॥
गौराङ्गी, गतिदा, ज्ञाना, गौरी श्रीगोमती, गति । गीता, गुणान्विता गङ्गा गरिमा गौरवान्विता ॥८॥
चपलाचंद्रिका, चारुचरिता, चारुरूपिणी । चारुशिलाप्रिया, चन्द्रकलारूपा, चमत्कृता ॥९॥
जननीत्वं जगन्माता, जानकी, जनतारिणी । जय श्री रामनाम्नश्च जगन्मध्ये प्रकाशिनी ॥१०॥
जया जय स्वरूपा च जगत्कल्याणकारिणी । जयप्रदा जगत्कर्त्री, जयन्ती, जयरूपिणी ॥११॥
तरुणी, तारिणी, तारा, तड़िद्वेगातमापहा । तुङ्गा, तुङ्गप्रभा तीर्था, तीव्रा, तीव्र तरङ्गिनी ॥१२॥
सरस्वती, स्वरूपा सा संसारार्णवतारिणी । सीता, सखो, सती सत्या श्रीसाकेत विहारिणी ॥१३॥
श्रीसुन्दरी सुवर्णाभा, सृष्टि स्थित्यन्तकारिणी । सर्वज्ञा सर्वकल्याणी साध्वी सर्वविधायिनी ॥१४॥
वामा, श्यामा, रमा, रामा, क्षमा, क्षिप्रा, क्षमावती । इत्येतत्कथितं प्रेमलतायाः स्तोत्रमद्भुतम् ॥१५॥
शतमष्टोत्तरं दिव्यं संसारार्णव तारकम् । नाम लीला स्वरूपञ्च धाम्नो रामस्यदायकम् ॥१६॥
स्वरूपबोधकं शश्वत् सर्वज्ञत्व प्रयच्छकम् । यः पठेत् सततं भक्त्या तस्य वश्योरघूत्तमः ॥१७॥
प्रियसासहितो रामः सखीभिर्दिव्यरूपिभिः । देयं शिष्याय श्रीरामप्रपन्नाय विधानतः ॥१८॥
नचापिपरधर्म्माय दाम्भिकायाऽविवेकिने । स्वान्तेयथाऽदिशत्प्रेमआल्यै प्रेमलताशुभा ॥१९॥
तथा श्री जानकीनाथशरणोऽङ्कितवाहनम् । सुषड्विन्दुनभद्वन्द्वाब्देराघीयेऽसितेगुरौ ॥२०॥

---०---

हिन्दीअनुवादः—छन्दमञ्जुः—

प्रेमा प्रेमलता श्री प्रेयसि प्रेममञ्जरी मानिनि । परा प्रहृष्ट प्रेममल्लिका पद्मा प्रीति प्रदायिनि ।
पतिव्रता पतिप्राणा पृथ्वीसुतामुगा सुखदायिनि । परमा प्रभा परेशा प्रमदा पतितो-द्धारिणनामिनि १
पूर्णप्रकाशिका पीतामा पञ्चमुद्रिका धारिणि । पञ्चकेश अवलम्बिनि पुण्या सदापंचसंस्कारिणि ।
परमेश्वरी परेशां पुण्यप्रकाशिका मुदकारिणि । परमार्थिका परमआनन्दा प्रेमप्रदा अवहारिणि २

रामाराम रमणि रम्भा रतिमान विमर्दिनि कामिनि। रामअङ्क आरूढ़ा राघव वासव प्रियासुभामिनि।
रमासुदा मुदकरी मोददा मोदान्विता सुयामिनिमद मत्सर मोहान्ध महानिशिनाशिनियुगल सुनामिनि ३
मेघा मैथिलि प्राण वल्लभा मञ्जु माल्यकर कलिता। महासती मन्मथा सुमोहा मतिदा मति संवलित।
कमला कामिनिकान्तिसुकामाकांताअरिकुलदलिताकरुणारुपिणि केलि कामदाकाम्यवराचञ्चलिता ४
गौराङ्गी गतिदा गीता गति गोमती गौरी ज्ञाना गुणान्विता गंगासु गौरव न्विता सुगरिमा ध्याना।
छपला चन्द्रकला सुचंद्रिका चारुरूप शशिभाना चारुरू चरिता चारुशिला चंचमत्कृता युतमाना ५
जननी ज्ञानकि जगन्मातृका जनतारिणि जनहारिणि जय सियराम सुनाम रूप सँगलीला धामप्रचारिणि
जयाजगतकल्याणकारिणी जयसियरामउचारिणि जयदा जयस्वरूपिणि जगकृत् जयंतिकाजयकारिणि ६
तरुणी तीव्रतरंगिणि तारिणि तमा पहा भवभेदिनी तुङ्गा तुङ्ग प्रभा तीर्थापुनि तारा तड़ित्सुमेदिनि।
संसारणव तारिणि सत्या सरस्वती श्रुति वेदिनि सीता सखि साकेत विहारिणि सत्यासत्य सुमेदिनि ७
सर्वज्ञ सुन्दरि स्वर्णाभा सृष्टि स्थिति लय करिणि साध्वी सर्वविधाधिनि सर्वा कल्याणी भय हारिणि।
वामा श्यामा रमा क्षमावति क्षिप्रा विपतिविदारिणि।
जानकीनाथ शरण संशय हर, उरवर विमल विहारिणि ॥८॥

छप्पयः—

अष्टोत्तर शतनाम "प्रेमवल्लरी" कथित यह। कहत जानकी नाथ शरण मदमुदित प्रीतिसह ॥
पढ़त नशत तम प्रेत होत नवनेह नवल रह। रूप वोध निजतत्वबोधउर प्रेमअली कह ॥९॥
राघवेन्द्र वैदेहि वशी होइहिं सखि–गण युत। लीला नाम सुरूप धाम निज देइहिं तेहिद्रुत ॥
जेहि विधि किय आदेश प्रेमलतिका मुद संयुत। लिख्यो जानकीनाथ शरण तिमि प्रेमअली नुत ॥

श्री प्रेमलताजी की नामाक्षर द्वारा स्तुतिः—

छन्द मञ्जुः—

ज जय सियराम सुनाम प्रचारक, जगत गुरू की जयबोलो।
ग गति श्रीवैष्णव धर्म्म कर्म के परमहंस की जय बोलो ॥
त तरण तथा तारण जीवन धन धर्म्म वीर की जय बोलो।
गु गुण युत श्री सियलाल शरणजी महाराज की जय बोलो ॥१॥
रू रूप अनूप वीर वैभव युत धरे धाम बिच रहते हैं।
अ अखिल विश्व कल्याण हेतु सद्ग्रन्थ विरचि शिव चहते हैं ॥
नं नन्दन वन विच कल्पवृक्ष इव भक्त जनन सँग रहते हैं।
त तरुतर वास अचल करि निशिदिन सियाराम मुख लहते हैं ॥२॥
श्री श्रीसाकेत भुवन स्वामिनि के केलिकुञ्ज यूथेश्वरि हैं।
स्वा स्वामिनि रुखलखि हेतु जीव जग प्रेमलताजू अवतरि हैं ॥
मी मिथ्या मोह कोह कामादिक पाप ताप नितकेहरि हैं।
श्री सियलाल शरण स्वामी कलि कनककशिपु नरकेहरि हैं ॥३॥
सि सद्धि सदन प्रणतारति भञ्जन सुवन प्रभञ्जन प्यारे हैं।
या याद करत बरबाद होत भ्रम कलुष जात जरि छारे हैं ॥
ला लाल बाल सियजू स्वामिनि के ब्रह्मचर्य्य व्रतधारे हैं।
ल लली लाल के प्रेम मगन जग जय सियारम प्रचारे हैं ॥४॥

श शमन शकल सन्ताप दिव्य छवि महाटोप शिर सोहत हैं ।
र रटहिं सु जयसियाराम नाम मुख युगल कंठि गर पोहत हैं ॥
न नवल पञ्चमुद्रिका मनोहर उर्द्ध पुण्ड्र मनमोहत हैं ।
जी जीवन जानकिनाथ शरण के गर उपवीत सुसोहत हैं ॥५॥
म मनमुद पंचकेश संयुतशिर दाढ़ी उदर लागि सोहैं ।
हा हार गले तुलसी के सुविमल द्वादश तिलक सुमनमोहैं ॥
रा राजत लाल लँगोट कटिहिं पट पीत पीत अँचला सोहैं ।
ज जटित सुआसन निकट कमण्डल थैली तिलक छत्र जोहैं ॥६॥
की कीजिय कृपा नाम रटना दे सियाराम की गतिदाई ।
ज जन्म मरण के महा कष्ट ते मोहि बचाइय हरषाई ॥
य यश प्रद सतगुरु चरण नेह नव लीलाधाम रूप पाई ।
हो, होय यथा भल प्रेमअलिहिं, सोइकरिय पतित लखि मुनिराई ॥७॥

अनन्त श्री युगलानन्य शरणजी महाराज की स्तुतिः—

श्री जानकीनाथ शरणकृता—

छप्पयः—

श्री श्री मद् युगलानन्य शरण, स्वामिहिं उरधारो ।
श्री श्री यूथेश्वरि हेमलतहिं, सियं स्वामिनि प्यारो ॥
यु युग तुरीयमहँ पतित, जीवहित जो अवतारो ।
ग गति मति रति सियराम, नाम की कलि विसतारो ॥१॥
ला लाहु अमित शृँगार राज, रसराज प्रकाशी ।
न नवधा द्वादधा षोड़शधा, भक्ति विकाशी ॥
न्य न्यकारादि विनाश हेतु, कलियुग जिमि काशी ।
श शरणागत कहँ शरण देइ, हियध्वान्त विनाशी ॥२॥
र रटि सीतावर नाम ग्रन्थ, शतशः रचिदियेऊ ।
ण नवल पञ्च संसकार, पञ्चमुद्रायुत कियेऊ ॥
जी जीवन लाहु यथार्थ धाम, वसि जग यश लियेऊ ।
म महिमा जगत दिखाइ, राम नामामृत पियेऊ ॥३॥
हा हार तुलसिका विमल गले, शोभित अति सुन्दर ।
रा राजत लक्ष्मण कोट, मध्य मन्दिर पलङ्ग पर ॥
ज जटित सु आसन वसन, विभूषण संयुत अतिवर ।
की किये पञ्च संस्कार मुदित, मन टोप शिरसिघर ॥४॥
ज जहँ दर्शन करि जीव अमित, भवसागर तरते ।
य यश कीरति मुद पाइ जगत, हित शान्ति बितरते ॥
हो होइ युगल सरकार रसिक, बचि भवसागरते ।
य यह वर मांगति "प्रेमअली" प्रभु ते युग करते ॥५॥

जयजय सियाराम जयजय सियाराम जयजय सियाराम

जयजय सियाराम जयजय सियाराम जयजय सियाराम

श्री जानकीनाथ शरणकृतौ

स्वा० श्री जानकीवर शरणजी महाराजकी स्तुतिः—

छन्दमञ्जुः—

श्री श्री सतगुरु सदनेश स्वामि की, हम सब आरति गाते हैं।
श्री श्री सरयू तट अचल वास करि, जय जयकार मनाते हैं॥
जा जानकि नाथ शरण श्री जानकिवर प्रपन्न पद ध्याते हैं।
न नवधा भक्ति परा प्रेमा युत, पाइ प्रमोद बढ़ाते हैं॥१॥
की कीर्तिधवलता श्री सतगुरु की, जिनने विश्व विकाश किया।
व वरि श्री युगलानन्य शरणपद, पञ्चम रस बतलाय दिया॥
र रहि श्री सतगुरुदेव स्वामि ढ़िग, लक्ष्मण कोट प्रकाश किया।
श शरणागत लखि जगत मध्य बहु, जीवन जीवन्मुक्त किया॥२॥
र रमहिं नित्य सिय वल्लभ सँग, सतगुरु सेवा जग विसतारी।
ण नवल पञ्चमुद्रिका धारि शिर, मुकुट इरम्मद दुतिकारी॥
जी जीवन लखि भवसिन्धु पतित, श्री प्रीतिलताजू अवतारी।
म महामान्य ऋषिवर जानकिवरशरणरूप जिनने धारी॥३॥
हा हारगले पट पीट आदि नित, नूतन धारण करते हैं।
रा राजत उदर लागि दाढ़ी मुद, पञ्चकेश शिर धरते हैं॥
ज जटित सिंहासन ऊपर राजहिं, एकहुँ क्षण न विसरते हैं।
की कियेहु महा अपराध क्षमा करि, आशिर्वाद बिसरते हैं॥४॥
ज जनक नन्दिनी रघुनन्दनकी, शरणागति बतलाते हैं।
य यश भाजन एकबार दरश लहि, चौरासी नहिं आते हैं॥
हो होती जिनकी युगल चरण रति, प्रेमअली, बलिजाते हैं।
य यश कीरतिदै प्रेमअली को, सियवर नगर बसाते हैं॥५॥

श्री जानकी नाथ शरण कृताः—

स्वा० श्री रामवल्लभा शरण जी महाराज की स्तुतिः—

छप्पयः—

श्री श्री गुरुसेवा हेतु अवध, बिच जो तनु धारयो।
श्री श्री साकेत विहार रसिक, जग मधि अवतारयो॥
रा राम वल्लभा शरण स्वामी, निज नाम प्रचारयो।
म महल 'विहारिणि युगल' रूप, धरिजीवन तारयो॥१॥
व वरि श्री जानकिवर प्रपन्न, पद पद्म विचारयो।
ल्ल ल्लसत दनुज षठ रिपु, कामादिक हाँकि विदारयो॥
भा भार अवनि करि दूर, जगति रसराज प्रचारयो।
श शरणागति सम्पत्ति षष्ठसु सुघट जग महँ विसतारयो॥२॥

र रटि सियराम सुनाम अमित, (जग)जीवन कहँ तारी ।
ण नवल पञ्च मुद्रिका पञ्च, संस्कार प्रचारी ॥
जी जीवन्मुक्त सुहेतु कियेउ, गुरुसेवा न्यारी ।
म महा ऋषिस्वर 'युगल विहारिणि' निज तनुधारी ॥३॥
हा हाय करत परिकर समाज, कहँ लाज बचायो ।
रा राम जानकी कृपा पात्र, गुरु मूर्ति रचायो ॥
ज जटित सिंहासन सहित, श्री "सतगुरु" सदन बनायो ।
की कीरति जग प्रगटाय सु, सतगुरु शरण मनायो ॥४॥
ज जग हित कर्म अनेक सुतजि, गुरु शरण लखायो ।
य यह संसार असार मांहिं, सियराम लखायो ॥
हो होय यथा मल चरण पतित, जन की गति पायो ।
य यह वर मांगि सु "प्रेमअली" चरणनि शिरनायो ॥५॥

श्री महाराज जी के परम कृपापात्र 'तथा इस ग्रन्थ के प्रकाशक' स्वा० श्री सियारघुनाथ शरण जी महाराज की स्तुतिः—

छन्दमञ्जुः—

संकट मोचन हनूमान ढिग-सतगुरु स्वामी मेरे हैं ।
एक वदन ते कहि न सकत हौ महिमा बड़े बड़ेरे हैं ॥
शीश टोप गर कण्ठी युग पुनि तिलक छाप शिर हेरे हैं ।
धनि धनि प्रेमअली, पावन मन सियाराम मुख टेरे हैं ॥
पीततिलक शुचि वसन पीत पुनि पीत पिछावन पावन हैं ।
रँगे राम पद रज नँह निशिदिन सन्तत मोद बढ़ावन हैं ॥
मन भावन हैं भक्त जनन के दिव्य दृष्टि दरशावन हैं ।
बड़े धनी सियरामनाम के षट् विकार विनशावन हैं ॥२॥
अद्वितीय गुरु भक्ति निरत हैं युगल रूप हिय धारे हैं ।
यह असार संसार प्यार से हरदम हटे किनारे हैं ॥
प्यारे श्रीगुरुदेव स्वामि के जयसियाराम उचारे हैं ।
धारे नेम नाम ही कर हैं जग प्रपञ्च तजिडारे हैं ॥३॥
तीन बजे ते सियाराम की नाम महाधुनि करते हैं ।
जगहिं काशिके लोग सुधुनि सुनि कलियुग किल्विषहरते हैं ।
वारक धुनिसुनि तजहिं देह जे ते नहिं भवनिधि परते हैं ।
प्रेमअली, जगधन्य तेसु जे सतगुरु दर्शन करते हैं ॥४॥
जानकिनाथशरण जीवन धन महामोद के दाता हैं ।
(श्री)सियरघुनाथ शरण स्वामीजू सियानाथ के भ्राता हैं ॥
त्राता है दुखद्वन्द फंद ते आनन्द कन्द प्रदाता हैं ।
युगलरूप महँ मगन अहर्निशि प्रेमअलिहिं मुददाता हैं ॥५॥

'इति श्रीसतगुरु च० परिशिष्ट वि० समाप्तः'

श्रीसद्गुरुचरिते शुद्धाशुद्धि प्रदर्शन पत्रम्

सर्गसंख्या	पृष्ठ संख्या	अशुद्धम्	शुद्धम्	पंक्तिः
भूमिकाशीर्षकः		सियाह्वयंनाथशरण इत्या	सियानाथशरण इत्याह्वयेन	४
१	१	वक्तु	वक्तुं	२०
१	२	ब्धौ	ब्धो	१७
२	३	शक्यः ।३।	स्मः ॥३॥	६
२	३	वन्धु	वन्धु	टीका १३
३	७	नीलामणि	नीलमणि	टीका ५
४	६	मौलिक	मौक्तिक	टीका १३
४	१०	दाननि	दानानि	१०
४	११	सद्धर्मं	सद्धर्म्म-	२
५	११	दृढ़ाङ्गम्	दृढ़ाङ्गम्	२
५	११	हरिश	हरीशं	३
५	११	मिमिति	मिति	८
५	११	पूर्णयुष	पूर्णायुषं	६
५	११	देवेज्ञः	दैवज्ञ	८
५	१२	लस्या	लभ्या	२
५	१२	मिषं	भिषं	३
५	१२	वञ्छितम्	वाञ्छितम्	२०
७	१४	भद्र पेण	मद्र पेण	१०
८	१५	तकृत	सकृत	१८
६	१६	जंनिका	जंनका	२८
१०	१६	मृगमन्	मृगयन्	२६
११	१७	भ्वराम्	ग्वराम्	श्लो० ४
११	१८	तदेव	तदैव	„ ४
११	१८	स्वायुक्तं	स्वादुयुक्तं	„ १५
१३	२०	सरहस्यं	तद्रहस्यं	„ ३०
१४	२१	परामि	परामि	„ ६
१४	२१	धृतामि	धृतामि	„ ६
१६	२३	कमी	कामी	„ १
१६	२३	मामी	गामी	„ १
१६	२४	दंशन	दर्शन	„ ७
१७	२४	वन्द	नन्द	„ १
१८	२५	श्चिश्याः	श्चिष्याः	„ १
२०	२७	व्ययाम्	व्यथाम्	४
२०	२८	वाकृश्य	वाकृष्य	३३
२२	३०	जनकी	जानकी	४
२३	३०	घाताद्	घाताद्	१
२३	३०	ब्रह्म	ब्रह्म	३
२३	३०	तत्परः	तत्परः	३०

(परिशिष्ट विभागे)

	३३	हदरेः	दरेः	३

पृष्ठ	अशुद्धम्	शुद्धम्	पंक्ति
३२	अशेषवे	अशेषवेष	११
	कोर्ति	कीर्ति	१२
३३	परेशां	परेशा	३१
३४	रम्यो	रम्या	१२
३४	लंका रिणि	संस्कारिणि	३१
३४	परभा	परमा	३२
३४	अघ	अघ	३२
३५	मेदिनी	मेदनि	६
३५	संसारणव	संसारार्णव	१०
३५	बोले	बोलो	२२
३५	सद्धि	सिद्धि	३२
३७	कृतौ	कृतां	१
३७	षष्टसुसु	षट्सु	३३
३८	हनूगान्	हनूमान्	१५
३८	भिति	भक्ति	
३८	पद रज नँह	पद रज मँह	२०
३८	जानकेनाथ	जानकीनाथ	३१

उपरोक्त संशोधनान्तरमपि यास्त्रुटयस्ताः सुधीभिः संशोधनीयाः

(विनीतः श्रीजानकीनाथ शरणः)

जगद्गुरु अनन्त श्री स्वा० श्री सियलाल शरणजी महाराज की स्तुतिः—

(नामाक्षर द्वारा)

स्वा० श्री सियारघुनाथ शरणजी कृताः—

श्री श्री सिय स्वामिनि केरि सखी रस एक सदा वय वर्ष इगारा।
स्वा स्वामिनि आयसु धारिहिये श्री प्रेमलता जग में अवतारा॥
मी मीत सबै प्रिय प्राण समान सुजान अमान महान उदारा।
श्री श्री सियराम सुनाम उपासक आशरू अशल रटै निशिवारा॥१॥
सि सिद्ध प्रसिद्ध तपी गुणवन्त छमीसु दमीरु अकाम अगेही।
या याद सदा निजनाम स्वरूपं इकन्तनिवास दशा सुविदेही॥
ला लाज विहाय करैं निज काजहिं नाम रटैं शुचि सन्त सनेही।
ल लच्छण जो शुठि सन्तन के सुवसैं इन्ह माँहिं न जानत केही॥२॥
श शरणागत पालक ज्यों पितु बालक देहिं सुबुद्धि कुबुद्धि नसाईं।
र रटवावहिं नाम बसावहिं धाम हटावहिं काम कलंक कसाईं॥
ण नव षष्ठ दशाष्ट रुचारि वेसार युगोंके सुधर्महिं देहिं लखाईं।
जी जीव सुकौल गुरु के कुवाक्य विचारि करैं नित नाम रटाईं॥३॥
म महिमा तिन्हकी कवि कौन कहे जिन्हि नाम रसामृत पान किया।
हा हारहिं शेष गणेश महेश सु सारद नारद आदि हिया॥
रा रामहिं भक्त विशेष कह्यो जिन्ह नाम महामणि धारि लिया।
ज जग धन्य "सुमञ्जरि प्रेम" वही असनामिनि चरणजु धोइ पिया॥४॥

—:-०-:—

श्री सद्गुरुचरितम् "श्री प्रेमलताचरितामृतम्"

श्री सद्गुरुदेव भगवान्

जय सियाराम जय जय सियाराम, जय सियाराम जय जय सियाराम
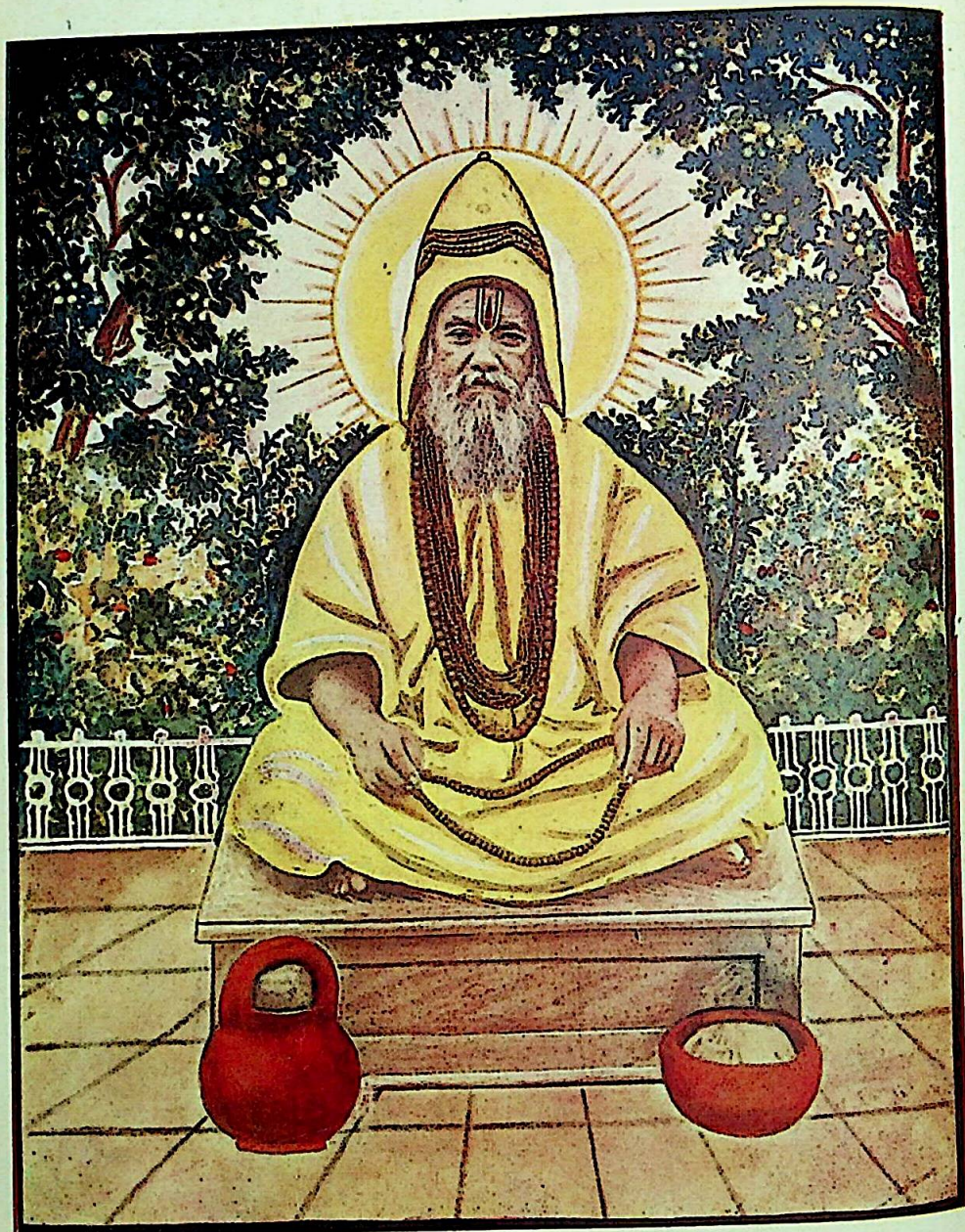
जय सियाराम जय जय सियाराम, जय सियाराम जय जय सियाराम

अखिल जीवोद्धारक, तरणतारण, भगवत्पाद, श्रीमत्परमहंसपरमाचार्य्य, बालब्रह्मचारी, सिद्ध बालकवि, 'जय सियाराम, जय जय सियाराम' नामध्वनि प्रचारक, महर्षिवर, जगद्गुरु, अनन्तश्री स्वामी श्री सियाललालशरणजी महाराज "श्री प्रेमलताजी"।

॥ श्री सद्गुरुपादपद्माभ्यांनमः ॥

प्रथम खण्ड

बन्दना

अखंडमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥
अज्ञान तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

मंगलाचरण

कल्याणानां निधानं कलिमल मथनं पावनं पावनानां पाथेयं, यन्मुमुक्षोः सपदि पर पद प्राप्तये प्रस्थितस्य विश्रामस्थान मेकं कविवर वचसां जीवनं सज्जनानां बीजं धर्म द्रुमस्य प्रभुवतु भवतां भूतये राम नाम ।

श्री गुरुपरत्व

विना श्री सद्गुरोरङ्घ्रे सर्व भावेन पूजनम्
कृत्वा सुखं कुतो लभ्ये दन्यो पायैः सहस्रकैः ॥ १ ॥
दण्डवत्पतिता भूमौ गुरोरग्रे तु ये नराः
न च तेषां भयं लोके कालोऽपि मन्यते भयम् ॥ २ ॥

अर्थात्—श्री गुरु महाराज के चरण कमलों की सर्व विधि से पूजा किये बिना दूसरे हजारों उपायों से सुख नहीं मिल सकता ॥१॥ जो लोग गुरु के आगे दंड के समान गिरते हैं, साष्टांग दण्डवत करते हैं उनको इस लोक में किसी से भी भय नहीं रह जाता, प्रत्युत उनसे काल भी भय मानता है ॥२॥ जो

गुरोरङ्घ्रजलं येन धृतं शिरसि भावतः
सर्व तीर्थेषु निस्नातं ते न वै विधि पूर्वकम् ॥३॥
येनार्पितं तु गुरवे सर्वं यत्स्वात्मकं धनम्
अक्षयं च धनं प्राप्य पुनर्मोक्षं स गच्छति ॥४॥
ये तु षोडशविधिना कुर्वन्ति गुरु पूजनम्
पूर्णचन्द्रो इवा भाति ते लोके नात्र संशयः ॥५॥
ब्रह्मादयोऽपि पूतांस्तान् गुरु पादाब्ज सेवकान्
प्रशंसया पूजयन्ति स्वलोको गमनेच्छया ॥६॥
गुरु स्तवं प्रकुर्वन्ति प्रेम्णा वित्त व्ययेन च
नित्योत्सवो गृहे तस्य न विघ्नानि विशन्ति च ॥७॥
दधाति च गुरोः पाद रजांसि मस्तके नराः
तान् सुरा हि नमस्यन्ति तत्रान्येषां तु का कथा ॥८॥
ये चाश्नन्ति गुरोच्छिष्टं भावेन भक्तितः सदा
ते तु बाह्यान्तरः पूता स्तरन्ति भव सागरम् ॥९॥
ये कुर्वन्ति हरेरर्चान् विना श्री गुरु पूजनम्
न प्रसीदति हरिस्तेषु कल्प कोटि शतैरपि ॥१०॥
श्री गुरु भुक्त शेषं तु प्रथमं यो भुनंति वैः
पश्चाद्धरि प्रसादं च महा पुण्यं प्रजायते ॥११॥
श्रुति मूलं गुरोर्वाक्यं पूजा मूलं गुरोः पदम्
धर्ममूलं गुरोः सेवा शुभ मूलं गुरोः कृपा ॥१२॥

गुरु के चरणोदक को भाव से सिर पर धारण करता है वह मानों सभी तीर्थों में विधि पूर्वक स्नान कर लेता है, जो अपने गुरु को अपने सर्वस्व को अर्पण कर देता है, वह नही नाश होने वाले (अक्षय) धन को पाकर फिर मोक्ष को पाता है ॥४॥ जो लोग षोडशोपचार से गुरु की पूजा करते हैं, वे लोग इस लोक में पूर्ण चन्द्र के समान शोभते हैं इसमें सन्देह नहीं ॥५॥ ब्रह्मादि देवता भी पवित्र गुरु के चरण की सेवा करने वालों को अपने लोक को प्राप्त करने की इच्छा वाली प्रशंसा से पूजा करते हैं ॥६॥ जो गुरुउत्सव को प्रेम और धन के खर्च से करता है, उसके घर सदा उत्सव रहता है, और विघ्नों का प्रवेश नहीं होता ॥७॥ जो लोग गुरु के चरणों की धूलि को मस्तक पर धारण करते हैं, उनको देवता भी नमस्कार करते हैं—दूसरों की तो कथा ही क्या है ॥८॥ जो लोग सदा गुरुके जूठे भोजन को भक्ति और भाव से पाते हैं वे बाहर और भीतर से पवित्र हो कर भवसागर से तर जाते हैं ॥९॥ जो लोग भगवान की पूजा, बिना गुरु पूजन के करते हैं, उनके ऊपर प्रभु सैकड़ों कल्पों तक प्रसन्न नहीं होते ॥१०॥ जो गुरु के खा लेने के बाद बचे हुये भोज्य पदार्थ को पहिले, और पीछे हरि के प्रसाद को खाते हैं, उन्हें बड़ा

श्री सद् गुरु विहीना ये गुरुस्नेह विवर्जिताः
दृष्टव्यं न मुखं तस्य सङ्गतिस्तु कुतः शुभा ॥ १३ ॥
नाऽवैष्णवं गुरुं कुर्य्यान्नानीतेमार्ग संसरेत्
न द्रोहं प्राणिनां कुर्य्यान्न च पापं समाचरेत् ॥ १४ ॥
राजा विवेक शाली च दृष्ट्वा चैता दृशं नरम् ।
श्रुत्वा वा गर्दभं स्थाप्य स्वदेशा दाशु प्रक्षिपेत् ॥१५॥
महो भाग्यं महो भाग्यं जानातिगुरु मीश्वरम् ।
निसेवेत सततं प्रीत्या सोप्यन्येषां शुभः प्रदः ॥१६॥
(अमर रामायणे)

पुण्य होता है ॥११॥ गुरु वाक्य वेद का मूल है, गुरु की सेवा धर्म का मूल और गुरु की कृपा सभी शुभों का मूल है ॥१२॥ जो श्रीमान गुरु से विहीन हैं, गुरु के प्रेम से वर्जित हों, उनका मुख नहीं देखना चाहिये। उनकी संगति तो किसी प्रकार भी शुभ नहीं हो सकती, अवैष्णव जन को गुरु नहीं करना चाहिये, अनीति के मार्ग का अवलम्बन नहीं लेना चाहिये, प्राणियों से द्रोह नहीं करना चाहिये, और पाप का आचरण भी नहीं करना चाहिये ॥१४॥

श्री सतगुरु बिनु द्रवत नहिं, श्री सियराम न नाम ।
श्री सियराम सुनाम बिनु, लहहिं न जन विश्राम ॥
तेहि लगि गुरु हित विलम जनि, करिजनि सहहु कलेश ।
अरपि अपनापौ शीघ्रतर, लीजै शुभ उपदेश ॥
तन मन धन ते वचन ते, गुरुहिं करै सन्तुष्ट ।
सीखै युगल उपासना, सिया राम की पुष्ट ॥
गुरु मूरति पूजै सदा, पीवे गुरु पद धोय ।
गुरु जूठनि भक्षण करै, तरै शिष्य भव सोय ॥
जेहि विधि होय प्रसन्न गुरु, ततु वेत्ता शिषिसोय ।
करै भरै आनन्द उर, अकथनीय सुख होय ॥

श्री सद्गुरु स्तोत्रम्

(श्री पं० सीतारामदास जी कृत)

श्रियः श्रीशं नित्यं विविध बुध वृन्दारकगणै
रगम्यं वाचायं विषयगत चेताभिरनिदम् ।
दयासिधुं सिद्धं प्रणतजन बन्धुं त्रिभुवने
प्रपद्ये तं देवं शरणमपरं सद्गुरुमहम् ॥ १ ॥

धरण्यां पापिष्ठं कुमतिजन दुष्टं भगवतः
पदाम्भोज द्वन्द्वाद्विमुख मनसं माद्दशनरम ।
सुधोक्त्या सिञ्चन्तं नीर परिहरन्त भवभयं
प्रपद्ये तं देवं शरणमपरं सद्गुरु महम् ॥ २ ॥
भुवो भारं दृष्ट्वा श्रुति पथ मयं धर्म मवितुं
प्रियाज्ञा मादाय व्यतनुत पुनर्धर्ममपरम् ।
परं सत्यं ज्ञानं प्रणतजन संरक्षण मयम्
प्रपद्ये तं देवं शरण मपरं सद्गुरु महम् ॥ ३ ॥
अनेकन्यन्यानि प्रथितगुण शालीनि भगवन् !
सदा धारं धारं विविध विध रूपाणि भुवने ।
प्रतिज्ञां त्वं सत्यं स्वयमवसि कर्तुं करुणया
प्रपद्ये तं देवं शरणमपरं सद्गुरु महम् ॥ ४ ॥
अमन्दा नन्दंत्वां विविध गुण कल्याण जलधिं
पदं स्तोतुं सत्यं प्रभवति नकोप्यत्र जगति ।
पुनस्त्वां क्व ज्ञातुं भवविषय मुग्धा वयमहो
प्रपद्ये तं देवं शरण मपरं सद्गुरु महम् ॥ ५ ॥
वदन्ति त्वां प्राज्ञा वहुविध विकल्पैक वचनैः
सखी मध्ये काचित् प्रियतम सखीं प्रेमलतिकाम् ।
भुशुण्डीत्यादीति त्वां निजमति रूचाचाप्रमितिना
प्रपद्ये तं देवं शरण मपरम् सद्गुरु महम् ॥ ६ ॥
द्वयोरेक्यं रूपं श्रुति गुणगणांभोधिमुभयं
कथं ज्ञातुं शक्तोऽलघु गुणविहीन प्रभुरहम् ।
समीहेऽतः पुण्यां तवपदकृपां प्रीतिमतुलां
प्रपद्ये तं देवं शरण मपरम् सद्गुरु महम् ॥ ७ ॥
न वैराग्यं ज्ञानं नहि किमपि सत्यं नच गुणः
क्षमा शीलं शांतिः शम दम तितिक्षा शुभ गुणाः ।
अतो नन्योपायः शरणमिति याचे प्रतिदिनम्
प्रपद्ये तं देवं शरण मपरं सद्गुरु महम् ॥ ८ ॥
असंख्यं त्वन्नाम श्रुतिपरिमलोद् भूत ममलं
परं नाम्नामेकं वचसिच सियालाल शरणम् ।
त्वदीयं सर्वाङ्गे चिदचिति परं मे नयनयोर्विधत्तां
दीनेऽस्मिन्भव जलधि निमग्ने मयिगुरो ॥ ९ ॥
परं पीतं वासो धृतयुगल कौपीन सुभगं
लसद्भालं सीतापतिपद मृदानाभ रुचिरम् ।
सविन्दुश्रीयुक्तं प्रचुरधृत पुण्ड्रोर्ध्व तिलकं
प्रपद्ये तं देवं शरण मपरं सद्गुरु महम् ॥ १० ॥

करेभिक्षापात्रं कथमपि च कन्था पुरुहिमे
समंचोदासीनं ह्युपदिशति तत्वं परिषदि ।
परिव्राजाचार्यं जय जय सियाराम रटनम्
प्रपद्ये तं देवं शरण मपरं सद्गुरु महम् ॥११॥
त्वदीयं वै रूपं वसतु मम हृन्मण्डलमये
परं शुद्धंनाम प्रति-वसतु जिह्वाग्र विमले ।
ममेदं सर्वाङ्गं भवतु गुरुपादार्चन विधौ
परं चास्माकीना मति रविरलाचास्तु विमले ॥१२॥
इत्येषा वाङ्मयी पूजा श्रीमत्सद्गुरु पादयोः
प्रीयतां सद्गुरूः श्रीमान क्रियतां सत्कृपा मयि ॥१३॥
श्रीमती लक्ष्मणा तीरे श्री सद्गुरु निवासके ।
वासोमे नितरां तत्र भवे जन्मनि-जन्मनि ॥१४॥

अथ श्री सद्गुरु स्तवम्

(पं० श्री उपेन्द्रनाथ जी कृत)

* श्लोक *

विज्ञान वारिनिधि मद्भुत मप्रमेयमानंद वीचिनिचयैर्मुहुमुल्लसंतम् ।
सत्प्रेम रत्न निकरै रनुरंजितान्तः स्थानं प्रियं कमपि सद्गुरुमानमामि ॥ १ ॥
पूर्णं परेश रुचिचंद्रकलाभि वृद्धं दीप्तं सदास्वमहिमानल रोचिषैकं ।
विष्णोर्निवासममलं मुनिनेत्रपीतं-वन्दे निशंकमपि सद्गुरु वारिधीशम् ॥ २ ॥
नित्यं तमस्ति हरंकमनीय कान्ति मानार्तिताऽखिल मतीन्द्र चकोर चक्रम् ।
तारावलम्बितकरं स्मित निन्दिताजं, देवंनमामि विलसद्गुरु पूर्णचन्द्रम् ॥ ३ ॥
आर्याश्रितं विमल भूति विभास मानं हेरम्ब कीर्ति मिद्दकीर्ति विशुभ्रगात्रम् ।
दीनानु कंपि हृदयं मत मासुतोषं श्री सद्गुरुं गुणनिधिं शिव रूप मीडे ॥ ४ ॥
श्री सेवितं द्विजमणिप्रवि चुम्बिताङ्घ्रिं सत्वाचयं सुमनसां परमालयात्तम् ।
पादावने जनविवर्धित गांग शोभं श्री सद्गुरुं हरिपदं शरणं प्रपद्ये ॥ ५ ॥
ज्ञानाञ्जनेन हृदयाक्षि विशोध दक्षं दृष्ट्याविदूरितचिर प्रचिताघ संघम् ।
पादाम्वुजेन परिलालित दासमौलि आचार्य मौलि मुकुटं गुरुमान तोस्मि ॥ ६ ॥
वेदानं सरसि जासन सन्निषराणं सम्मोद सर्ग कुशलं गिरमाकलन्तम् ।
सद्धाम हंस बर रञ्जित पादपीठं ब्रह्म स्वरूप गुरुदेवमहं नमामि ॥ ७ ॥

छप्पय

(श्री स्नेहलता जू कृत)

खाहिं मधुकरी मांगि अजब मस्तान सुचाला।
विचरि अवनि प्रभु भजहिं सबन ते ढंग निराला॥
कछु दिन मिथिला कछुक अवध कछु दिन रहि काशी।
नाम रटन बल कलि महँ सियवर भक्ति प्रकाशी॥
लहि राम वल्लभा शरण गुरु शरण भये तारण तरण।
'सियलाल शरण' जी संतवर नाम प्रचारक दुख हरण॥१॥

गल गुदरी अलफी सु अङ्ग शिर टोप विराजै।
झोरी कमण्डल खप्पर धरे फकीरी साजै॥
कंठी युग लर कंठ भाल लस तिलक रसाला।
बिन्दु और चन्द्रिका सहित सोहत श्री लाला॥
श्री वैष्णव रसिक विरगि बर नाम प्रेम छाके रहैं।
जय सियराम जय २ सियराम नाम अहर्निशि कहैं॥२॥

रटत रटत श्री नाम गये होइ तत्व सुज्ञाता।
अनुभव चख खुलि गयो भजन बल छायो गाता॥
यदपि सविधि नहिं पढ़े तदपि गुरु नाम कृपा ते।
भये सुकवि किए काव्य सरस भक्ती रँग राते॥
"सतगुरु कृपा प्रकाश" तेहि नाम ग्रंथ सुन्दर परम।
लखि 'नेहलता' मानी कविहि होत अधिक ईर्षा शरम॥३॥

पै भावुक जन काहिं निरखि बाढ़त आनन्दा।
जिज्ञासुन को होत प्रेम पद सिय रघु चन्दा॥
'प्रेमलता' अस नाम काव्य महँ सुन्दर सोहै।
प्रगट नाम गुण कवित बानि अरु रूप सु जोहै॥
किमि करै प्रशंसा मंद मति नेहलता कलिमल ग्रसित।
जेहि सबविधि नाम भरोस तेहि गुण बर्णत ब्रह्मादि नित॥४॥

''जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी' मधुर लता जी कृत'

अष्टक
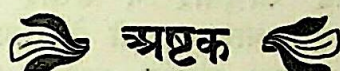
राम रूप नाम धाम लीला के रूप भये,
भये संक फंक विकट भूरि भ्रमन वामी ।
नाम घटा छाय बरसाय प्रेम नीर भूमि,
सदाचार सज्जन हिय सद्गति ससि जामी ॥
लाखन उबारे भव बूड़त अगाध जन्तु,
तन्तुतार मार कीन हिय अस निष्कामी ।
दीजे निज चरण भक्ति जानिके अबोध बाल,
जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी ॥ १ ॥
मान मोह त्यागि पागि राम प्रेम दिव्य भये,
गये ताप त्रिविध कीन्ह चरण जो नमामी ।
राव रंक एक जानि समता विस्तारी जग,
भूरि राम नाम सदा चाखेउ अभिरामी ॥
गौर श्याम सियाराम अपने बस कीन्ह सदा,
अंजनी को पूत दरस दीन्हेउ कर थामी ।
दीजे निज चरण भक्ति जानि के अबोध बाल,
जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी ॥ २ ॥
दुरगुन दुराय सुगुन श्रम करि जन हीय भरे,
तरे अनायास जीव भव लहि पर धामी ।
नाम रटवाय—झाँझ ढोलक बजाय गाय,
धाय धाय धामनि जय वचन की ललामी ॥
कविता कला के कोष इक इक अक्षर अदोष,
देखहु तजि रोस होस होत निरखि वामी ।
दीजे निज चरण भक्ति जानि के अबोध बाल,
जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी ॥ ३ ॥
वैष्णव पुनीत धर्म सुन्दर श्रृंगार भाव,
चाहे सहित धारि रटे नाम लहेउ नामी ।
दीन्हीं सुचि सीख नहीं भीख कभी माँगी कहूँ,
चहूँ ओर फैलेउ यश घर घर अभिरामी ॥
वीतराग वेष औ अवेष हीन क्षण न रहे,
गहे राह रसिकन की सदा बिनु मुकामी ।
दीजे निज चरण भक्ति जानि के अबोध बाल,
जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी ॥ ४ ॥

कामद-काशी सु अवध-मिथिला के बीच रहे,
गहे साधुताई न हँसाई कोई ठामी ।
सिद्ध परसिद्ध वृद्ध बालक सभी के प्रिय,
क्रियमान संचित प्रारब्ध छीन छामी ॥
धीर गम्भीर के भव भीरि के हरैया शरण,
जीवन हित अविचल विश्रामी ।
दीजे निज चरण भक्ति जानि के अवोध वाल,
जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी ॥ ५ ॥

भानु भक्ति प्रगटे गइ मोह कुहू निसा घोर,
चोर काम कोह कुटिल कोटर के गामी ।
सुखी साधु सज्जन प्रकाश चहूँ ओर जानि,
मानि मन मोद अवनि अटहि छिपे वामी ॥
सियाराम नाम धुनि छायेउ दिसि दसहु सकल,
हरषत सुचि संत जरत इन्द्री आरामी ।
दीजे निज चरण भक्ति जानि के अबोध बाल,
जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी ॥ ६ ॥

सदा ही स्वतंत्र रहे पर हित साने सनेह,
देह गेह अरपि कीन्ह गुरू की गुलामी ।
नाम सुयस ग्रन्थ लिखे पढ़े गुनि सीखे अनेक,
मानस सुचि होत विमल कविता दुतिदामी ॥
सेवा गुरु भक्ति शक्ति अद्‌भुत प्रचारी जग,
छाइ रही कीरति तिलोक मोद धामी ।
दीजे निज चरण भक्ति जानि के अबोध बाल,
जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी ॥ ७ ॥

मावस श्रावण पुनीत प्रातः ही गुरु वासर को,
जाय मिले रास रंग सिय पिय सुचि ठामी ।
कीजे अपराध क्षमा दीजे फिर दरस नाथ,
करत क्यों अनाथ हे दयाल सुपथ गामी ॥
"मधुर" दीन चेरी को अनेरी करि छोड़ि गये,
विपति घनेरी ते न पल भर विसरामी ।
दीजे निज चरण भक्ति जानि के अवोध बाल,
जयति गुरूदेव सियालाल शरण स्वामी ॥ ८ ॥

श्री महाराज जी की मन्त्र परम्परा

(वन्दना)

श्री सीतानाथ समारम्भां, रामानन्दार्य्यमध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य्यपर्य्यन्तां वन्दे (श्री) गुरू परम्पराम् ॥

साकेताधीश प्रभु श्री सीताराम जी महाराज से :—

स्थूल शरीर सम्बन्धी नाम	आत्म सम्बन्धी नाम
१—श्री हनुमान जी महाराज	श्री चारुशीला जी
२—श्री ब्रह्मा जी महाराज	श्री विश्वमोहिनी जी
३—श्री वशिष्ठ जी महाराज	श्री ब्रह्मचारिणी जी
४—श्री पारासर जी महाराज	श्री पापमोचना जी
५—श्री व्यास देव जू महाराज	श्री व्यासेश्वरी जी
६—श्री शुकदेव जी महाराज	श्री सुनीता जी
७—श्री पुरुषोत्तमाचार्य जी महाराज़	श्री पुनीता जी
८—श्री गंगाधराचार्य जी महाराज	श्री गान्धर्वी जी
९—श्री सदाचार्य जी महाराज	श्री सुदर्शना जी
१०—श्री रामेश्वराचार्य जी महाराज	श्री रामअली जी
११—श्री द्वारानन्द जी महाराज	श्री द्वारावती जी
१२—श्री देवानन्द जी महाराज	श्री देवाअली जी
१३—श्री श्यामानन्द जी महाराज	श्री श्यामाअली जी
१४—श्री श्रुतानन्द जी महाराज	श्री श्रुताअली जी
१५—श्री चिदानन्द जी महाराज	श्री चिदाअली जी
१६—श्री पूर्णानन्द जी महाराज	श्री पूर्णाअली जी
१७—श्री श्रियानन्द जी महाराज	श्री श्रियाअली जी
१८—श्री हरियानन्द जी महाराज	श्री हरि सहचरी जी
१९—श्री राघवानन्द जी महाराज	श्री राघवाअली जी
२०—श्री रामानन्द जी महाराज	श्री रामानन्द दायनीजी
२१—श्री सुरसुरानन्द जी महाराज	श्री सुरेश्वरी जी
२२—श्री माधवानन्द जी महाराज	श्री माधवाअली जी
२३—श्री गरीवानन्द जी महाराज	श्री गर्वहारिणी जी
२४—श्री लक्ष्मी दास जी महाराज	श्री सुलक्षणा जी
२५—श्री गोपाल दास जी महाराज	श्री गोपाअली जी
२६—श्री नरहरी दास जी महाराज	श्री नारायणी जी
२७—श्री तुलसीदास जी महाराज	श्री तुलसीसहचरी जी

२८—श्री केवलकूवाराम जी महाराज
२९—श्री चिन्तामणिदास जी महाराज
३०—श्री दामोदर दास जी महाराज
३१—श्री हृदयराम जी महाराज
३२—श्री मौजीराम जी महाराज
३३—श्री हरिभजन दास जी महाराज
३४—श्री कृपाराम जी महाराज
३५—श्री रतनदास जी महाराज
३६—श्री नृपतिदास जी महाराज
३७—श्री शङ्करदास जी महाराज
३८—श्री जीवाराम जी महाराज
३९—श्री युगलानन्यशरण जी महाराज
४०—श्री जानकीवरशरण जी महाराज
४१—श्री रामवल्लभाशरण जी महाराज
४२—श्री सियालालशरणजी महाराज

श्री कृपाअली जी
श्री चिन्तामणि जी
श्री मोददायका जी
श्री उल्लासिनी जी
श्री स्वछन्दा जी
श्री हरितलता जी
श्री करुणाअली जी
श्री रत्नावली जी
श्री नीतिलता जी
श्री सुशीला जी
श्री युगल प्रिया जी
श्री हेमलता जी
श्री प्रीतिलता जी
श्री युगल बिहारिनी जी
श्री प्रेमलता जी

सम्प्रदाय-विवरण

१—इस समप्रदाय का नाम 'श्री' सम्प्रदाय है।
२—श्री लक्ष्मी जी आचार्य है।
३—श्री हनुमान् जी देवता है।
४—श्री विश्वामित्र जी ऋषी है।
५—श्री रामेश्वर जी धाम है।
६—श्री अयोध्या जी धर्मशाला है।
७—श्री चित्रकूट सुखविलास है।
८—श्री रामनन्दी वैष्णव है।
९—श्री दिगम्बर अखाड़ा है।
१०—श्री कूवा जी का द्वारा है।
११—श्री सीता जी इष्ट है।
१२—श्री मुख्य रस श्रृँगार है।
१३—अनन्त साखा है।
१४—श्री उर्द्धपुण्ड तिलक है।
१५—श्री धनुधक्षेत्र है।
१६—श्री गुरुद्वारा श्री अयोध्या जी।

श्री प्रेमलता जी कृत ग्रन्थों की सूची

श्री सद्गुरु कृपाप्रकाशग्रंथान्तर्गत :—

१—श्री वृहद् उपासना रहस्य
२—श्री प्रेमलता पदावली
३—श्री चैतन्य चालीसा
४—श्री सीताराम रहस्य दर्पण
५—श्री नाम रहस्य त्रयी
६—श्री नाम तत्व सिद्धान्त
७—श्री जानकी स्तुति
८—षट ऋतु विमल विहार
९—श्री सीताराम नाम रूप वर्णन
१०—श्री सीताराम नाम जापक म०
११—श्री ज्ञान पचासा
१२—श्री मिथिला विभूति प्रकशिका
१३—श्री वैराग्य प्रवोधक बहत्तरी
१४—हितोपदेश शतक
१५—श्री प्रेमलता वाराखड़ी
१६—श्री नाम सम्बन्ध बहत्तरी
१७—श्री नाम वैभव प्रकाश चालीसा
१८—श्री जानकी विनय नामादि
१९—श्री नाम दृष्टान्तावली
२०—श्री सतगुरु पदार्थ प्रवोधिका
२१—संत प्रसादी महात्म्य
२२—अनन्य सतक
२३—निजात्म बोध दर्पण
२४—अपेल सिद्धान्त
२५—षोडस भक्ति
२६—सन्त महिमा
२७—उपदेश पेटिका
२८—पंच संस्कार
२९—अष्टयाम
३०—श्री जानकी बधाई
३१—सार सिद्धान्त प्रकाश
३२—नित्य प्रार्थना
३३—विश्व विलास वीसिका
इत्यादि :—

तिथि पत्र

सम्बत् १९२८ वि० जन्म।
सम्बत् १९३३ वि० चूड़ा करण संस्कार।
सम्बत् १९३६ वि० यज्ञोपवीत संस्कार, तथा पिता जी का स्वर्गवास।
सम्बत् १९३८ वि० घर से भजन करने कोनिकलना।
सम्बत् १९४० वि० हनुमान् जी द्वारा विद्या प्राप्ति।
सम्बत् १९४५ वि० प्रथम अल्पायु योग।
सम्बत् १९४६ वि० तीर्थ यात्रा-माता जी का स्वर्गवास।
सम्बत् १९४७ वि० भगवद् दर्शन।
सम्बत् १९४८ वि० किला वाले महाराज जी का दर्शन।
सम्बत् १९५० वि० चित्रकूट यात्रा।

सम्बत् १९५८ वि०	आकाश वाणी व श्री अवध की यात्रा, भजन।
सम्बत् १९५९ वि०	श्री सतगुरु की प्राप्ति-अवध वास-सत्शङ्ग भजन तीव्र वैराग्य तथा द्वितीय अल्पायु योग-श्री जानकी स्तोत्र की प्राप्ति।
सम्वत् १९६० वि०	अत्रि मिलन-श्री जानकी अष्टोतरशत नामावली प्राप्ति
सम्वत् १९६१ वि०	सिद्ध बाबा की प्राप्ति—श्री जानकी कृपा कटाक्ष स्तोत्र प्राप्ति।
सम्वत् १९६२ वि०	श्री युगल सरकार दर्शन—श्री सतगुरु कृपा प्रकाश ग्रन्थ प्रारम्भ।
सम्वत् १९६४ वि०	श्री दिव्य मिथिला दर्शन—मिथिला मध्यमा परिक्रमा प्रारम्भ।
सम्वत् १९६७ वि०	काशी यात्रा-शिव पार्वती दर्शन प्रमुख काली दर्शन तथा लीला दर्शन।
सम्वत् १९६८ वि०	सतगुरु निवास निर्माण।
सम्वत् १९६९ से १९९७ वि० तक (२८ वर्ष)	२२ हजार अनुयायी—९५० जीव प्रभु शरणागति किये—३३ ग्रन्थों का निर्माण व प्रकाशन-नाम व वेष का प्रचार सत्संग कथा—चमत्कारी दिव्य चरित्र।
सम्वत् १९९८ वि०	साकेत यात्रा।

(९५० शिष्य-शिष्याओं में से कुछ प्रमुख वर्ग की उपलब्ध नामावली।)

१—श्री परमानन्द शरण जी
२—श्री दाशरथी शरण जी
३—श्री सिया रघुनाथ शरण जी
४—श्री सतगुरू राम शरण जी
५—श्री सीताराम शरण जी
६—श्री सिया सुन्दरी शरण जी
७—श्री सिया भुवनेश्वरी शरण जी
८—श्री सिया सनेही शरण जी
९—श्री सियानाथ शरण जी
१०—श्री प्रिया प्रीतम शरण जी
११—श्री सिया किशोरी शरण जी
१२—श्री उर्मिला शरण जी
१३—श्री सियाराम सरूप शरण जी
१४—श्री धनुषधारी शरण जी
१५—श्री राम राजेन्द्र शरण जी
१६—श्री रामबहादुर शरण जी
१७—श्री सियाकान्त शरण जी
१८—श्री राजेन्द्र शरण जी
१९—श्री राम राजेन्द्र शरण जी
२०—श्री रामनारायण शरण जी
२१—श्री रामदेव शरण जी
२२—श्री सिया चन्द्रिका शरण जी
२३—श्री राम भोला शरण जी
२४—श्री उर्मिला शरण जी

२५—श्री जानकी शरण जी
२६—श्री रामलषन शरण जी
२७—श्री सिया रघुनन्दन शरण जी
२८—श्री राम किशोर शरण जी
२९—श्री कमला बिहारी शरण जी
३०—श्री नवल किशोर शरण जी
३१—श्री रामगुलाभ शरण जी
३२—श्री राम छवीले शरण जी
३३—श्री रामा राम शरण जी
३४—श्री राम मोहन शरण जी
३५—श्री राम शोभा शरण जी
३६—श्री रामवल्लभ शरण जी
३७—श्री राम झूलन शरण जी
३८—श्री राम सुन्दर शरण जी
३९—श्री रघुनाथ शरण जी
४०—श्री राम जगन्नाथ शरण जी
४१—श्री राम प्यारे शरण जी
४२—श्री जानकी रसिक शरण जी
४३—श्री सिया रघुपति ,,
४४—श्री अवध बहादुर शरण जी
४५—श्री सीताराम शरण जी
४६—श्री अवध विहारी शरण जी
४७—श्री नवल किशोर शरण जी
४८—श्री सिया वल्लभ शरण जी
४९—श्री सिया रघुवर शरण जी
५०—श्री सिया किशोरी शरणजी
५१—श्री सियानाथ शरण जी
५२—श्री रामरतन शरण जी
५३—श्री जानकी शरण जी
५४—श्री उर्मिला शरण जी
५५—श्री राम द्वारिका शरण जी
५६—श्री राम रसीले शरण जी
५७—श्री राम गोविन्द शरण जी
५८—श्री किशोरी शरण जी
५९—श्री युगुल किशोर शरण जी
६०—श्री राम खिलावन शरण जी
६१—श्री राम नारायण शरण जी
६२—श्री राम जीवन शरण जी
६३—श्री राम दयाल शरण जी
६४—श्री सत्यराम शरण जी
६५—श्री अयोध्या शरण जी
६६—श्री सिया शरन शरण जी
६७—श्री रामदेव शरण जी
६८—श्री सिया वल्लभ शरण जी
६९—श्री राम सेवक शरण जी
७०—श्री महावीर शरण जी
७१—श्री रामजीवन शरण जी
७२—श्री जानकी प्रसाद शरण जी
७३—श्री नवलकिशोर शरण जी
७४—श्री रघुनाथ शरण जी
७५—श्री गुरु देव शरण जी
७६—श्री राम गोपाल शरण जी
७७—श्री रघुवंश भूषण शरण जी
७८—श्री राम शोभा शरण जी
७९—श्री परमानन्द शरण जी
८०—श्री रामलक्ष्मन शरण जी
८१—श्री रामधनी शरण जी
८२—श्री चन्द्रकला शरण जी
८३—श्री चारुशीला शरण जी
८४—श्री राममंगल शरण जी
८५—श्री राम किशोर शरण जी
८६—श्री साकेत विहारी शरण जी
८७—श्री मिथिला शरण जी
८८—श्री रामावतार शरण जी
८९—श्री राम उदार शरण जी
९०—श्री रामशोभा शरण जी
९१—श्री राम घनश्याम शरण जी
९२—श्री सीता शरण जी
९३—श्री सिया सनेही शरण जी
९४—श्री राम भजन शरण जी
९५—श्री रामजीवन शरण जी
९६—श्री रामलखन शरण जी

९७—श्री जानकी शरण जी
९८—श्री वैदेही शरण जी
९९—श्री राम विश्वनाथ शरण जी
१००—श्री सियारघुवीर शरण जी
१०१—श्री जानकी जीवन शरण जी
१०२—श्री सिया गुलाम शरण जी
१०३—श्री रामनारायण शरण जी
१०४—श्री विदेहजा शरण जी
१०५—श्री राम किशोर शरण जी
१०६—श्री सियानाथ शरण जी
१०७—श्री राम भगवान शरण जी
१०८—श्री सियानाथ शरण जी
१०९—श्री हरीराम शरण जी
११०—श्री राम जगदीश शरण जी
१११—श्री रामनन्दन शरण जी
११२—श्री जयराम शरण जी
११३—श्री बुधराम शरण जी
११४—श्री विदेहजा शरण जी
११५—श्री राम शरण जी
११६—श्री राम प्रिया शरण जी
११७—श्री मिथिला विहारी शरण जी
११८—श्री रामानन्द शरण जी
११९—श्री जानकीवल्लभ शरण जी
१२०—श्री सीता वल्लभ शरण जी
१२१—श्री राम फकीर शरण जी
१२२—श्री रामद्वारका शरण जी
१२३—श्री सरयू शरण जी
१२४—श्री रामलाल शरण जी
१२५—श्री राम रघुवीर शरण जी
१२६—श्री महावीर शरण जी
१२७—श्री राम गोविन्द शरण जी
१२८—श्री सियावल्लभ शरण जी
१२९—श्री राम कृपाल शरण जी
१३०—श्री किशोरी वल्लभ शरण जी
१३१—श्री सियाराम शरण जी
१३२—श्री राममहादेव शरण जी
१३३—श्री रामबालक शरण जी
१३४—श्री सियाभगवती शरण जी
१३५—श्री सियानाथ शरण जी
१३६—श्री रामपदारथ शरण जी
१३७—श्री सालिग्राम शरण जी इत्यादि
१३८—श्रीमती राम प्रिया जी
१३९— „ रामदुलारी जी
१४०— „ राम सखी जी
१४१— „ लक्ष्मणदेई जी
१४२— „ सिया सहचरी जी
१४३— „ विमला देई जी
१४४— „ कमला देई जी
१४५— „ दुलारी देई जी
१४६— „ कौशिल्या देई जी
१४७— „ सिया सखी जी
१४८— „ चन्द्रकला देई जी
१४९— „ मिथिला देई जी
१५०— „ जानकी देई जी
१५१— „ सिया देई जी
१५२— „ सियादुलारी देई जी
१५३— „ राम देई जी
१५४— „ सरयू देई जी
१५५— „ सीता देई जी
१५६— „ सिया अली जी
१५७— „ हनूमान देई जी
१५८— „ मैथिली देई जी
१५९— „ जानकी देई जी
१६०— „ वैदेही मैथली जी
१६१— „ सिया सखी जी
१६२— „ सीता देई जी
१६३— „ लखन देई जी
१६४— „ विद्या देई जी
१६५— „ युगल सखी जी
१६६— „ रामदेई जी
१६७— „ जनक दुलारी जी
१६८— „ सरयू देई जी

१६९—श्रीमती मिथिला देई जी
१७० — „ उर्मिला देई जी
१७१— „ जनक दुलारी जी
१७२— „ जानकी सखी जी
१७३—श्रीमती सियालाड़लीदेई जी
१७४— „ सिया किंकिरी जी
१७५— „ सिया देई जी
१७६— „ रघुराज देई जी

(कवित्त)

क्यारियाँ कलित कल्याण की हीं घेरे नित्य,
नेह नवनीर से सदैव हीं तरी रहे।
त्यागतप साधुता की डालियाँ रहीं हीं झूम,
कीट कलि-कल्मष की कल्पना मरी रहे।
श्रद्धा के सुमन ज्ञान गन्ध-रस-भीने भव्य,
भावुक भ्रमर भक्ति-भावना भरी रहे।
'मंजुल' मधुर छाया क्षेत्र की सुछाई पूर्ण,
'प्रेम की लता' से विश्व-वाटिका हरी रहे॥

श्री प्रेमलता-स्तुति-पञ्चकम्

[सुकवि पं० श्री उपेन्द्रनाथ मिश्र "मञ्जुल" विरचितम्]

यद्-धूलि विधुनोति धूलिनिचयं स्वान्तः स्थमत्यद्भुता,
यद् ध्यानं विदधाति धारण धियं धाम्नां निधानं नृणाम्।
यन्निः स्यन्दितसूदकं शमयति प्रोत्तुङ्ग तापत्रयं,
श्रीमत् सद्गुरु शोभनाङ्घ्रिजलजं, तन्नित्यमाराधये॥१॥
यच्छायामधिगम्यशाम्यति तरांताप त्रयं सत्वरं,
यत्पाद-प्रियतालवाल-निरता सद्भक्ति-तोया-ञ्जलिः।
यामालिङ्ग्य तमालवद् विलसति श्री रामनामाऽनिशं,
तां श्री 'प्रेमलतां' गुरुं गुरुनतां श्री सद्गुरुं संश्रिताः॥२॥
श्री सीताऽवनि-मण्डनं धरणिजा-स्नेहाम्बु-सिक्तां शुभां,
सिद्धिं सिद्धमुनेः स्वयं समुदितां प्रीतिं प्रियाया इव।
श्री नामामृत-वर्षिणीं सरलता-मूर्त्तिं मनोहारिणीं,
काञ्चित् 'प्रेमलतां' नताः स्मनियतां श्री सद्गुरुं सर्वदा॥३॥
संसारार्ति भयापनोदन रतामाह्लादिनीं सेवया,
विष्वग् वैष्णवभूति वर्धन करी मारामस्यामालयाम्।
सद्वाचा सुरभि-प्रमोदित-जनां तेजोभिराकर्षिणीं,
श्री मत्प्रेमलतां गुरुं गुरुनतां काञ्चित्प्रपन्नावयम्॥४॥
श्री मद्दम्पति-केलिकानन-रुहां तत्स्मेर चन्द्रोज्वलां,
लीला-रूप निकेतनांमधुकरी-वृत्तिं विरागोच्छ्रितान्।
धाम्ना स्वेन सदा विभासित तनुं नाम्ना प्रियद्राविणीम्,
श्रीमत्प्रेमलतां गुरुं गुणमतां साष्टाङ्गपातं नताः॥५॥

श्री प्रेमलता जी कृत नाम धुनि कीर्तन

(१) जय सियाराम जयजय सियाराम,
(२) जय सियाराम जय २ सियाराम, जय सियाराम जय २ सियाराम ।
(३) जय सियाराम जय २ सियाराम जय २ सियाराम जय २ सियाराम ॥
(४) जय सियराय सियराम सियरामा, जय सियाराम सियारामा हो।
(५) सियारामा, सियराम सियवर राम सिया, सियारामा सियारामा हो२ ॥
(६) राम सियाराम रामा, सियराय सियारामा ॥
बढ़ती—राम सियाराम सियाराम सियारामा–सियरामा, सियराम सियारामा
(७) सियाराम सियाराम सियावरराम, सियाराम सियाराम—
बढ़ती—सियाराम सियाराम सियावर रामा—सियाराम,
(८) सियावर राम सियावर राम सियाजू राम सियावर राम ।
बढ़ती—राम सियावर राम सियजू राम सियावर राम—सियाजू,
(९) जय सियाराम जयजय सियारामा,
(१०) सियाराम सियाराम सियाराम, सियाराम, जयराम सियाराम सियाराम २
(११) सियाराम, सियारामा, सियारामा सियारामा,
सियरामा सियारामा सियारामा सियाजू
बढ़ती—सियारामा सियारामा सियारामा सियाजू हो—
(१२) सियाराम सियावर राम सियाराम, सियजू राम सियावर—
राम सियाराम—
बढ़ती—सियाजू राम सियाराम सियाराम सियाराम—सियाजू
(१३) राम सियाराम, सियाराम जय सियाराम
बढ़ती—रामा सियरामा रामा सियरामा–रामा सियराम सियराम,
जय सियाराम,
(१४) सियाराम सियावरं राम सियाजू रामा—
सियाराम सियावर राम सियाजू रामा ।
बढ़ती—सियराम सियावर राम सियाजू रामा,—सियरामा ॥
(१५) सियरामा सियारामा, सियरामा सियारामा
सियरामा सियावर राम, सियाराम रामा

॥ इति श्री प्रेमलता वृहद् चरितामृते प्रथम खण्डं समाप्तम् ॥

जय सियाराम जय जय सियाराम । जय सियाराम जय जय सियाराम ॥
जय सियाराम जय जय सियाराम । जय सियाराम जय जय सियाराम ॥

॥ श्री सद्गुरुवे नमः ॥

द्वितीय खण्ड

उपक्रम

(कवित्त)

श्री गुरु स्वामी जू ते भये न कोऊ और होने,
विन, अखिल लोक विदित प्रताप हैं ।
काम क्रोध लोभ मोह माया मद करि कर
नाशवे को पञ्चानन राजैं करि दाप हैं ।
दंभरत पाप गत विमुख कुजन तम तोम
तोम के समान दिनकर सम आप हैं ।
रसिकन रस शालि को वारिद से
मेरे से अधम को तो आप माई बाप हैं ॥

(कुण्डलिया)

सतगुरु स्वामी द्रवहिं जो, निज दिशि लखि करुणेश ।
कृपा पात्र छण में करैं, दरशावैं सीतेश ॥
दरशावैं सीतेश देश परते पर पावन ।
दम्पति विमल विहार शम्भु हनुमत मन भावन ॥
अष्ट कुञ्ज वसु याम जहाँ सुख सरसत नव उरु ।
'श्री' प्रेमलता मन रता लखै लीला श्री सतगुरु ॥

श्री गुरू परत्व बड़ा गम्भीर, अगम व अपार है। श्री गुरु भजन से ही सब साधन साध्य हैं । इसके बिना जीव का निस्तारा नहीं ।

'बिन गुरु भवनिधि तरै न कोई, जो विरंचि शंकर सम होई' ।

जैसा गुरु परत्व गहन है, वैसे ही गुरु चरित्र भी तैसा ही अगाध है।

"भगति भगत भगवन्त गुरु चतुर नाम वपु एक ।
तिन्ह के पद वन्दन किये नाशैं विघ्न अनेक ॥"

इसलिये गुरु प्रभु के नाम रूप लीला के महत्व की समानता है। ऐसे अपार चरित्र का उपक्रम करते हुए मन संकोचता है। यद्यपि मशक और गरुड़ अपने २ सामर्थ्य अनुकूल आकाश में उड़ाते हैं, परन्तु पार नहीं पाते।

इसी प्रकार का यह साहस है। श्री सद्गुरू चरित्र रूपी सागर में एक गोता लगाना मात्र है। उसी सागर के बिन्दु का आस्वादन श्रद्धावान व जिज्ञासु पाठकों को सद्गुरु प्रताप प्रभाकर कल्याण पथ में आरूढ़ करने में समर्थ होगा। और यह मति मलिन दीन दुर्भागी भी उसी प्रकाश का आश्रय लेकर कुछ लिखने का साहस करता है :—

"श्री गुरुपद मृदु मञ्जुल अञ्जन * नयन अमिय दृगदोष विभञ्जन॥
तेहि कर विमल विवेक विलोचन * 'बरणौं गुरु चरित्र भव मोचन॥

जन्मोत्सव

श्री जम्बू दीप के आर्य्यावर्त के अन्तर्गत भारत खण्ड के मध्य भाग में सुस्थित लस्कर ग्वालियर नामक सुप्रसिद्ध नगर के दक्षिण, १½ योजन की दूरी पर एक पवित्र सुन्दर ग्राम जो कि अपने नाम से 'पनियार' नामक अक्षरों को सुशोभित करता है, सुस्थित है। यहां पर एक पं० मौजी राम जी बड़े धर्मात्मा पण्डित निवास करते थे, पण्डित जी बड़े प्रख्यात और प्रतिष्ठित ज्योतिषी थे। यह श्री रामोपासक भक्त अग्रगण्य और प्रभु कृपा पात्र थे। आप का शरीर सनाढ्य ब्राह्मण कुल का था। आप की स्त्री परम पतिव्रता और भगवद्भक्ति परायणा थी। दम्पति को एक बड़ा खेद यही था कि इनको सात संतति प्राप्त हुई परन्तु एक भी जीवित नहीं रही। इसी दुख से दुखी होकर दम्पति ने नाना प्रकार के नेम व्रत उपवास अनुष्ठान और अन्योन्य शास्त्रोक्त विधि से उपासना की और परात्पर प्रभु से अंचल पसार कर यह वरदान माँगा कि "हे प्रभो यदि आप की शास्त्रोक्त व कथित पाठ अनुष्ठान सत्य है तो आप इनके फल सरूप हमको यशस्वी-दिग्विजयी प्रतापवान् परम भागवत और आप के समान ही कीर्तिमान् पुत्र की प्रदान करें।"

"भगवान ऐसे हैं दयामय कुछ कहे जाते नहीं,
उनके चरित अद्भुत अमित हम पार पाते हैं नहीं।
बस हरि पुकारा चाहिये—मानो खड़े थे पासही,
वे दूर हैं जब तक कि उर में है नहीं विश्वास ही॥
हो भक्त भी चाहे न उनको स्मरण करते जभी,
करूणा रव सुन भग चले, दुख नष्ट करने को सभी।
वे जाति को धन को सुविधा आयू को तप ताप को,
कब देखते हैं देखते बस एक उर के भाव को॥"

अहा! भगवान्! बड़े दयालू हैं, कृपालू हैं, भक्त वत्सल हैं। उनको तो सच्चे हृदय से पुकारने भर की देर है फिर तो उनका सिंहासन हिल उठता
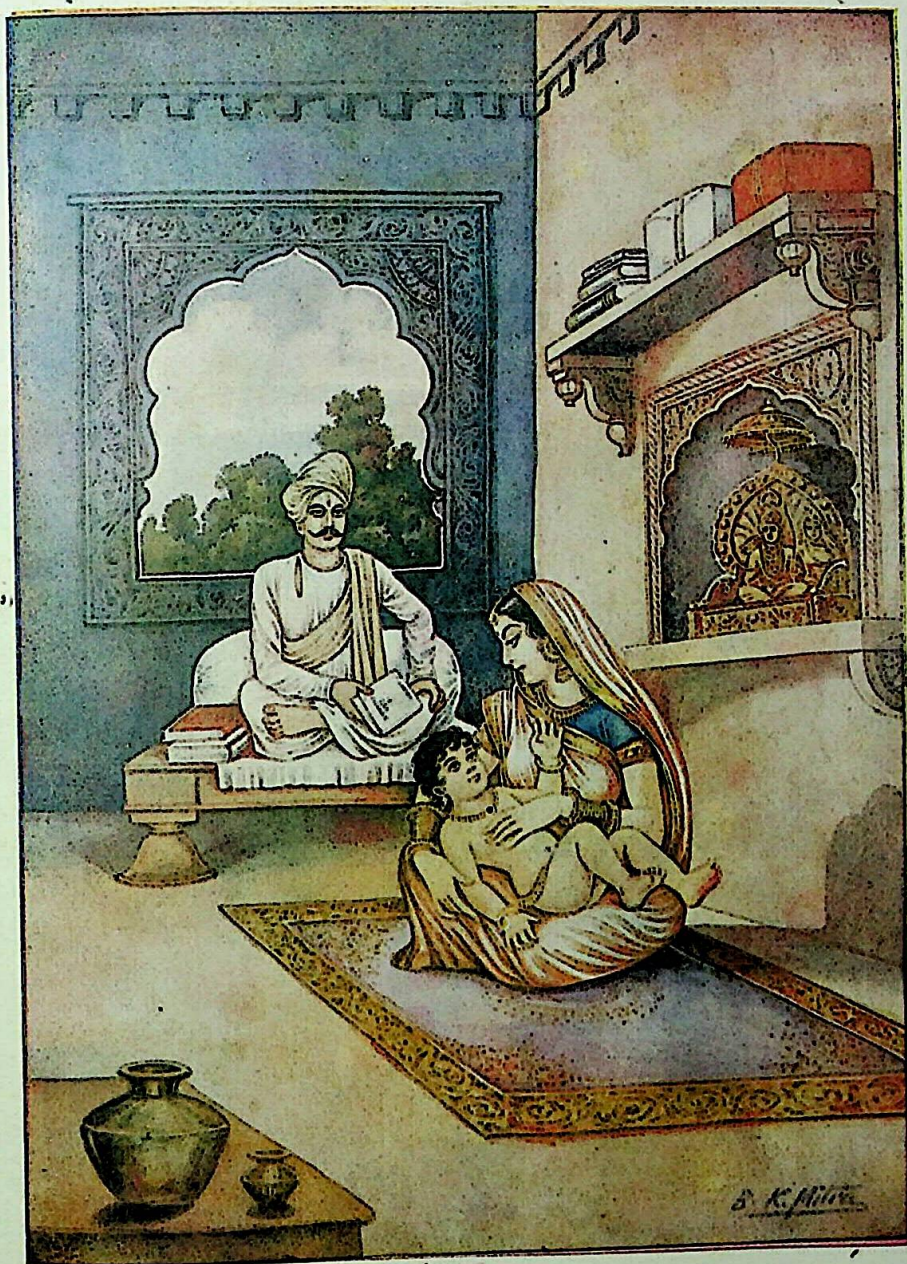
माता की गोद में

है ठहर नहीं सकते—भक्त से मिलने के लिये ललायित व व्यग्र हो जाते हैं। अपने श्री मुख से कहते हैं:—

मैं निज भक्तन हाथ विकाऊँ।
वैकुण्ठ वसत मोहिं कल न परत छण, योगिन मन न समाऊँ।
आठौ याम हृदय में राखौं, पलक नहीं विसराऊँ॥
जहँ मम भक्त प्रेम युत गावें, तहाँ बसत सुख पाऊँ।
भक्तन की जैसी रुचि देखौं, तैसी ही भेष बनाऊँ॥
वारौं अपने वचन भक्त लगि, तिनके वचन निभाऊँ।
ऊँच नीच सव काज भक्त के, निज कर सकल बनाऊँ॥
माँगू न कछु दामहु तिनते, ना कुछ तिनहिं सताऊँ॥
प्रेम सहित जल पत्र पुष्प फल, जो देवें सो खाऊँ।
निज सर्वस्य भक्त को सौंपूँ, अपनो सर्वस्व भुलाऊँ॥
भक्त कहै सोई करूँ निरन्तर, बेचै तो बिक जाऊँ॥

धन्य प्रभु की भक्त वत्सलता! अहा! किस भक्त का हृदय इन बचनामृत को सुन कर अपने प्यारे प्रभु के लिये प्रीति की वर्षा आँसुओं के मिस नहीं बरसायेगा।

वह गद्गद वाणी प्रभु के श्रवण तक पहुँची और स्वप्न में आज्ञा हुई कि धैर्य धरो, तुम्हारा मनोरथ शीघ्र पूर्ण होगा। यहि विधि:—

सुख युत कछुक काल चलि गयऊ * जब प्रभु प्रगट सु अवसर भयऊ।
योग लग्न गृह वार तिथि, सकल भये अनुकूल।

अतः श्री सद्गुरु भगवान जू लोक उद्धार के निमित साक्षात् परं ब्रह्मांश अपनी इच्छा से मंगलमय विग्रह मनुष्याकार में श्री मन्नृपति विक्रमादित्य सम्वतानुसार १९२८ वि० में सर्वोत्तम शुभ मास भाद्रपद मास में सिंह लग्न पुनर्वसु नक्षत्र में उच्च व प्रवल ग्रहों के योग में अवतरित हुए। माता पिता कुटुम्ब व ग्राम वासियों के सुख की सीमा नहीं रही। सब मूर्ति छटा को देख कर कृत कृत्य और धन्य धन्य हो गये। और चारों ओर आनन्द बधावा बजने लगी।

मंगल गाये गये—तोरण लगाये और नाना प्रकार की दान और भोजन कराये गये। झुंड की झुंड स्त्रियाँ दधि दूर्वा रोचन, फल फूल आदि मांगलिक वस्तुएँ लेकर पं० जी के गृहाङ्गण में आयीं। पण्डित जी ने सब का यथोचित सत्कार किया। सभी कृत्य बड़े समारोह तथा धूम धाम से सम्पन्न हुआ। शीघ्र ही नामकरण का शुभावसर आ पहुँचा। पण्डितों ने विचार कर आप का नाम 'बालाराम' जी रक्खा। बस यही हमारे चरित्र नायक हैं। नामकरण के अनन्तर पण्डित मण्डली यथोचित दक्षिणा पा प्रसन्न हो आशीर्वाद देती हुई विदा हुई।

बाल्य क्रीड़ा

हमारे चरित्र-नायक अपने माता पिता के बड़े लाड़ले और दुलारे थे। आपके बाल चरित्र देखकर सब कोई बड़े आनन्दित और अह्लादित होते थे। आपका स्वरूप बड़ा कोमल, सुन्दर अत्यन्त मनोहर और मुग्धकारी था। आपका हृष्ट पुष्ट शरीर बड़े २ कजरारे नेत्र घुघराले लच्छेदार बाल सुन्दर दशन पंक्ति को जो देखता सोई मोहित हो जाता। बाल्यकाल से ही पिता जी आपको धार्मिक शिक्षा देते, भक्तों के चरित्र सुनाते, जिनको आप बड़े ध्यान और प्रेम से श्रवण करते, और आनन्दित होते। पाँच वर्ष की अवस्था में आपका चूड़ाकरण संस्कार बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। और आठ वर्ष की अवस्था में यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। आपको कन्दुक क्रीड़ा (गेंद खेलने) पतंग उड़ाने गिल्ली दंडा खेलने में सखाओं के साथ बड़ा आनन्द आता था। धनुष बाण चलाने का भी आपको बड़ा चाव था। यही आपके बाल्य काल के खेल और क्रीड़ा के साधन थे। आपका प्रिय व रुचिकर खाद्य पदार्थ जलेबी, गुलगुले बेसन के लड्डू, कढ़ी, दही बढ़ा आदि थे। इन वस्तुओं को आप बड़े प्रेम से पाते। और माता भी रुचि अनुकूल भोजन की सामग्री यथाशक्ति उपलब्ध करने का प्रयत्न करती।

आप को छोटी अवस्था से ही कुश्ती लड़ने का बड़ा चाव था। और आप इस विद्या में निपुण भी ऐसे थे कि अपनी कला कौशलता से अपने से दूने को भी पटक देते रहे। इस बात से अखाड़े के उस्ताद लोग बड़े प्रसन्न रहते और सेरभर जलेबी खिलाकर शर्त पर कुश्ती लड़वाते। उस्ताद लोग लड़ने पर आप से पूछते कहो बच्चा कौन जीतेगा, आप कहते कि जो जलेबी खिलायेगा सो जीतेगा और होता भी वैसा ही। हारने वाला कहता कि बच्चा हम तुमको पैसे भी देंगे और जलेबी भी खिलायेंगे, तो आप कहते कि अच्छा तो अब के तुम ही जीतोगे। प्रभु इच्छा, हारने वाला ही जीत जाता। इस बचन सिद्धि को देख लोग स्तम्भित हो जाते, और कहते कि यह बालक साधारण नहीं है, कोई महात्मा है।

आप को आरम्भ से ही श्री तुलसी कृत रामायण का पाठ सुनने और महात्माओं का खोज कर दर्शन व सत्संग करने का बड़ा शौक था। जहाँ कहीं सत्संग होता वहाँ जाने का तो आप का नियम ही था। साधू महात्माओं को खोज २ कर उनकी सेवा करते और उपदेश ग्रहण करते। जो कुछ प्रायः सुनते उन श्रवण की हुई कथाओं और चरित्रों और उपदेशों को बाल समाज में बड़े हर्ष पूर्वक ज्यों का त्यों वर्णन करते। इससे बाल समाज के कल्याण कारी और सुहृद् बन गये। बालपन से वैराग्य, निर्भयता, धार्मिक प्रवृति, भगवत् प्रेम और धारणा, पवित्र विचार आदिक दैवी गुण

आप में कूट २ कर भरे थे। अर्थात् आप सर्व गुण सम्पन्न थे। आप से लोग कुछ सुनने की इच्छा से एकान्त में बैठाल कर पूछते कि महाराज हम सुखी होना चाहते हैं कहो कैसे हो सकते हैं। आप उत्तर देतेः—

"प्रत्येक प्राणी सुख प्राप्त करना चाहता है धनी भी और निर्धन भी। परन्तु इस क्षणभंगुर असत्य नाशवान् जग में सुख कहाँ। मनुष्य जानता है कि धन-स्त्री-पुत्र-अथवा विषयों में सुख है। यह प्राप्त हो जायेंगे तो हम सुखी होंगे। परन्तु यह उसकी भूल है। इन सबों में तो सुख नहीं सुखाभास मात्र है। सच्चा सुख तो मन को उस भक्त वत्सल करुणा सागर आनन्दघन प्रभु के चरणारविन्द में ही लगने से प्राप्त हो सकता है। अथवा उनके भक्तों की सेवा द्वारा।"

'सीता पति सेवक सेवकाई ॥ कामधेनु सत सरिस सुहाई।'

इस प्रकार के मधुर मञ्जुल शब्द सुन कर सब कृत्य २ होकर चरणों पर गिर जाते। धन्य है प्रभो। क्या हमारे उद्धार के हेतु ही कोई विशेष विभूति महात्मा रूप से हमारे ग्राम में उत्पन्न हुए हैं। इस प्रकार के ललित चरित्र करते हुए कुछ समय व्यतीत हुआ। विधाता का चक्र फिरा, आप के पिता का शरीर छूट गया। सब परिवार बड़े दुखी हुए। माता को तो आप को छोड़ और कोई अवलम्ब ही नहीं रह गया। माता को दुखी देख आप उनको लस्कर शहर में अपने सम्बन्धियों के पास लाकर रहने लगे। और नाना प्रकार के चरित्र करने लगे।

भजन प्रवृत्ति

एक बार माता जी ने आप की जन्म कुन्डली एक बड़े ज्योतिषी को दिखाई। कुण्डली देखते ही ज्योतिषी जी, महाराज जी की मधुर मूर्ति को ही देखते रह गये। मन ही मन प्रसन्न हो आपने कहा कि यह कुण्डली तो किसी व्यक्ति विशेष की है। कोई साधारण व्यक्ति की नहीं है। इसमें तो अवतार के से लक्षण प्रतीत हो रहे हैं। महर्षि और सिद्ध पुरुष वाले गुण इसमें पड़े हैं। यह बालक असाधारण है। जगत प्रख्यात जीवोद्धारक महात्मा बनेगा। माता ने फिर पूछा कि महाराज मुझे तो आप अल्पायू योग का समय बतावें कैसा है? ज्योतिषी जी ने विचार कर कहा कि सत्रहवें वर्ष में अल्पायू योग है। इसको यदि पार कर जाय तो तीस० वर्ष की अवस्था में प्रबल अल्पायू योग है। जो कदाचित् भगवत् कृपा से यह भी पार हो जाय तो पूर्ण आयू को पायेगा। सात सन्तति नष्ट हो चुकी थी। आठवें बच्चे की भी आयू में संशय सुन कर माता का धैर्य छूट गया। चिल्ला उठीं, और फुक्का मार कर रोने लगीं। लोगों ने

समझाया और सांत्वना दीं। धीरज रख कर माता ने फिर पूछा कि महाराज इस अपार दुख के अर्थात् अल्पायू योग के निवारण का कोई उपाय होय तो बताइये। पण्डित जी विद्वान् थे। उन्हों ने कहा यदि यह बालक खूब भजन करे तो कदाचित् यह योग टल सकता है। वरना और कोई उपाय नहीं। "भाविउ मेंटि सकहिं त्रिपुरारी" हमारे चरित्र नायक दश वर्ष के थे। यह सब बाते ध्यान से सुन रहे थे। माता को अत्यन्त दुखी देख आपने ज्योतिषी जी से पूछा कि महाराज भजन कैसे किया जाता है? पं० जी बोले कि यह आप किसी योग्य महात्मा से पूछिये, उनका विषय है। ऐसा कह कर पं० जी चले गये। बस यहीं से जीवन नैय्या पल्टा खाती है। फिर क्या था महात्मा जी माता को सान्त्वना देकर भजनानन्द महात्मा की खोज में निकल पड़े, और भजन करने की प्रवृत्ति बड़ी तीव्र हो उठी।

विद्या प्राप्ति

प्रभु बड़े दयालू हैं। ऐसी छोटी अवस्था में सरल और बालक का शुद्ध भाव देखकर, संत खोजने के लिए अधिक कष्ट नहीं उठाने दिया। एक दिन मार्ग के ऊपर ऊँचे वृक्ष पर चढ़कर राह में दोनों ओर ध्यान से देख रहे थे, कि कोई महात्मा दृष्टिगोचर पड़ें। इतने में एक बाबा जी दक्षिण दिशा से झूमते हुए आते दिखाई दिये, आप तुरन्त पेड़ से उतर उधर दौड़े, और चरणों में गिर गये, बाबा जी वृक्षके नीचे बैठे। आपने पूछा कि महाराज भजन कैसे किया जाता है। बाबा जी कहे कि हनुमान् जी के निकट बैठकर जितना 'राम-राम' सुना सको सुनाओ, बस यही भजन है। ऐसा कहकर बाबा जी ने अपनी राह ली। शुद्ध हृदय आर्त बालक ने गुरू वाक्य को प्राण की नाईं हृदय ग्राह्य किया, और तुरन्त उसी दिन से निष्किञ्चन भाव से दिन भर हनुमान जी को राम-नाम' सुनाते। और शाम को ही केवल एक समय भोजन करते। इस प्रकार ६ मास व्यतीत हुए। एक दिन नाम जपते जपते दोपहर को मन्दिर में ही तन्द्रा आ गई। महाराज जी सो गये। इतने में एक विशाल बानर मन्दिर में से निकल कर "हूं हूं" शब्द करता हुआ इनके ओर आया और गम्भीर वाणी में बोला 'राम-राम क्यों करता है 'सियाराम क्यों नहीं करता'। यह शब्द सुनकर आप चौंक कर उठ बैठे और बड़े घबड़ाये कि क्या अपराध बना। यह रहस्य जानने के लिए किसी कृपा-पात्र महात्मा की खोज करने लगे।

पहाड़ी की एक गुफा में एक महात्मा श्री बलदेव दास जी रहते थे। इनको हनुमान जी की सिद्धि थी और बहुत पहुंचे हुए संत कृपापात्र थे। महाराज जी को इनकी प्राप्ति हुई। महात्मा जी महाराज जी की वृत्ति शील

स्वभाव आचरण और भजन देखकर बहुत प्रसन्न हुए। और कहा कि शाम को नित्य सत्संग होता है उसमें आया करो। महाराज जी ने पहिला सब वृतान्त सुनकर यह रहस्य पूछा कि सरकार भजन करने कि यथेष्ट रीति बताइये। बाबा जी ने बालक का अटल विश्वास जिज्ञासा देख परम कृपा पात्र अधिकारी जान इन्हें 'सियाराम' नाम रटने और पहाड़ी के ऊपर सिद्ध हनुमान जी को यह मधुर नाम यथा शक्ति सुनाने का आदेश किया। इसको आपने सहर्ष स्वीकार कर तदनुकूल प्रवृत हुए। श्री हनुमन्त लाल जी को दिन भर सियराम नाम सुनाना और प्रातः सायङ्काल उपरोक्त महात्मा का दर्शन सेवा सत्संग करना इनका नित्य का नियम हो गया। घर पर एक ही संध्या जाकर भोजन करने लगे। अब आप की अवस्था द्वादश वर्ष की हुई। माता के लाड के कारण और घर की दुर्व्यवस्था के कारण यह एक भी अक्षर नहीं पढ़े थे। ब्राह्मण बालक होने से न पढ़ने की इनको और भी ग्लानि और लज्जा उत्पन्न हुई। कोई ग्रन्थ पढ़ना चाहते तो नहीं पढ़ सकते थे। यह बात इन्होंने श्री बलदेव दास जी से कही और अपने पढ़ने की जिज्ञासा प्रगट की। महात्मा जी ने उत्तर दिया कि हमने तुम्हारा प्रवेश सिद्ध दरबार में करा दिया है, उन्हीं से यह बात निवेदन करो वे ही यह तुम्हारे सब मनोरथ पूर्ण करेंगे और विद्या अध्ययन भी करा देंगे। बस सरल विश्वासी साहसी भिक्षुक ने श्री हनुमन्तलाल जी के मन्दिर में आकर नित्य का नियम पुराने के बाद श्री वीर साहब से पढ़ाने की प्रार्थना करने लगे। 'मोर मनोरथ जानहु नीके, बसहु सदा ऊर पुर सब हीके'। ऐसा कह विह्वल हो चरणों पर गिर पड़े और आर्त स्वर से विनय करने लगे। भक्त राज के कान में टेर पहुंची। वहाँ देरी कहाँ? वे हृदय की शुद्ध सात्विक भावना की जागृति देखते हैं। ज्येष्ठ का महीना था। मन्दिर मध्याह्न ११ बजे से ४ बजे तक बन्द रहता था। गर्मी के कारण यहाँ ऊपर कोई आता नहीं था। मंगलवार को ठीक १२ बजे एक सुन्दर ब्रह्मचारी उर्द्धपुण्ड तिलक लगाये, गले में कण्ठी तथा माला धारण किये बगल में पोथी दबाये मन्दिर के बरामदे में प्रकट हुए। देखते ही आपको बड़ा हर्ष और अनुराग हुआ! उठकर प्रणाम किया, चरण छुए। ब्रह्मचारी जी बोले कि क्या तुम पढ़ना चाहते हो। महाराज जी बोले—'जी सरकार'। अच्छा लो पढ़ो, हम हनुमान जी के भेजे हुए, तुम्हें पढ़ाने आये हैं। और हर मंगलवार को मध्याह्न में १ घंटा के लिये आया करेंगे। तुम सावधान होकर पढ़ो और यह भेद किसी को ज्ञात न होने पावे, वरना हम आना बन्द कर देंगे। 'अन्धा क्या चाहे दो नयन' आपने सहर्ष स्वीकार किया। हृदय प्लावित हो उठा रोमाञ्च हो गया देह की सुध बुध न रही। ब्रह्मचारी जी ने सावधान करके पहिली पोथी अ आ इ ई की निकाली और पढ़ाना प्रारम्भ किया प्रथम मंगल को पहिली पोथी—दूसरे मंगल को दूसरी पोथी और तीसरे को तीसरी पोथी पढ़ाई। चौथे

मंगल को ब्रह्मचारी जी तुलसी कृत रामायण जी की एक गुटका बगल में दबाये हुए लाये। और सुन्दर काण्ड आद्योपान्त पढ़ाकर आशीर्वाद दिया कि अब समस्त रामायण रहस्य व गूढ़ भावों के सहित तुमको लग जायेगा। और प्रभु चरित्र के पराङ्गत बनोगे। अपने लक्ष की सिद्धी को प्राप्त कर आप बड़े हर्षित व गद्गद हुए। आनन्दाश्रु चल निकले। ब्रह्मचारी जी के चरणों में लोट पोट हो गये। ब्रह्मचारी जी ने अन्य मंगल की तरह इस मंगल को अब और आने को वचन नहीं दिया, यह विरहजन्य व्यथा से व्यथित हुए। उनका परिचय जानने और उनके साथ चलने को उद्यत हुए। ब्रह्मचारी जी इन्हें सान्त्वना देकर चले। कुछ दूर जाते दिखाई दिये। फिर अदृश्य हो गये। इस प्रकार से महाराज जी ने विद्या प्राप्त की और भजन करना प्रारम्भ किया। सत्य है, अलौकिक पुरुषों के अलौकिक ही चरित्र होते हैं।

कुछ विशेष घटनायें

गांव में नन्दकिशोर और गोपाल सहोदर भाई सुनार रहते थे। अच्छे कारीगर थे। बड़े२ साहूकारों का गहना उनके पास बनने को आया। रात्रि में उस जेवर के सन्दूक को चोर उठा ले गये। हमारे चरित्र नायक का नाम दूर २ भक्ति और सिद्धाई में हो गया था। इनकी बताई हुई बहुत बातें सच निकल चुकी थीं। वे लोग इनके शरण में आये। दुखी देखकर इन्हें दया आई, आपने हँस कर कहा कि 'सियाराम' नाम दोनों भाई इन हनूमान् जी को ३ दिन ३ रात सुनाओ। चौथे दिन तुम्हारा सब माल मिल जावेगा। 'मरता क्या न करता'। जेल के कष्टों से यह कष्ट सहना अच्छा था। और फिर इनके वचन में भी विश्वास था ही, विवश हो दोनों भाई नाम सुनने लगे। आर्त और दीन की पुकार आर्त हरण और दीनबन्धु प्रभू के कान में शीघ्र ही पहुँचती है। फिर यह तो आचार्य द्वारा पहुँचाई गई थी, भला यह क्यों न स्वीकार होती। चौथे दिन चोर पकड़ा गया और सामान का सन्दूक इनके हवाले कर दिया गया। दोनों भाइयों की प्रसन्नता की ठिकाना न रही। इनके शरण में गये, नित्य प्रति इनकी सेवा टहल करने लगे। भक्ति ज्ञान का उपदेश लेने लगे, और पक्के नाम जापक हो गये।

एक पण्डित काशीनाथ गुजराती ब्राह्मण बड़े कवि और शास्त्रज्ञ उसी गांव में रहते थे। महाराज के नियम और भावों पर मुग्ध रहते थे। नाना प्रकार की समस्या, छन्द और कवित्तों को देते तो आप शीघ्र ही समस्या की पूर्ति कर देते रहे। यह देखकर वह बड़ा आश्चर्य करते रहे कि हम पढ़कर भी इतनी सरलता और सुगमता से ऐसी समस्यायें नहीं हल कर सकते। जब कि ये इस छोटी अवस्था में बिना पढ़े ही इतनी सफ़ाई से कर देते हैं। निश्चय यह प्रभू की देन है और इनमें कोई दैविक अंश है।

एक पण्डित पर एक दुष्ट ने पर स्त्री गमन का झूठा मुक़दमा चलाया। उसने भयभीत हो इनकी शरण को प्राप्त हो रक्षा की प्रार्थना की। आपने कृपा भरे चित्त से पण्डित जी को समझा कर शान्ति दी और कहा कि जिधर सत्य है उधर ही भगवान् हैं और उधर ही जय है, आप क्यों इतनी चिन्ता करते हैं। वह दुष्ट तो अपने अपराध का भोग कल ही पा जायेगा। सुनने में आया कि वह दुष्ट अगले दिन पागल और उन्मत की तरह दौड़ता हुआ कचहरी और बाज़ार सबमें अपने झूठे मुकदमा दायर करने को तथा अपनी दुष्टता ओर पण्डित जी की निर्दोषता का बखान करता फिरा। पण्डित जी मुक़दमा जीत गये, और आपके अनुयायी बने। आप में से बाल बुद्धि हटाकर बड़ी श्रद्धा और भक्ति की दृष्टि से देखने लगे।

पण्डित राधेलाल परम भागवती, भागवत के गूढ़ रहस्यों को आपके सामने रखते, जिनको सोच समझ कर सब प्रश्नों का उत्तर दृष्टान्त पूर्वक दे देने से पण्डित जी को बड़ी प्रसन्नता प्राप्त होती। और मन ही मन सराहना करके कहते, कि यह व्यक्ति विशेष जान पड़ते हैं।

एक सुदर्शन नाम का मारवाड़ी आप के रूप सौन्दर्य और शोभा को देख कर आप के ऊपर आसक्त हो कर तन मन धन अर्पण कर दिया। आपने उसे बहुत प्रकार समझाया और उपदेश दिया :—"यह संसार और शरीर दोनों ही अनित्य हैं। इस दुर्लभ मानुष तन को पाकर जो विषय में रत होते हैं, वे मन्द मति हैं, और पारस मणि को हाथ से बहा, काँच किरच बदले में लेते हैं, गुसाईं जी ने कहा है कि :—

बड़े भाग मानुष तन पावा * सुर दुर्लभ सद्ग्रन्थन गावा।
साधन धाम मोक्ष कर द्वारा * पाइ न जेहि परलोक सँवारा॥

सो परत्र दुख पावइ, सिर धुनि २ पछिताइ।
कालहि कर्महि ईश्वरहि, मिथ्या दोष लगाइ॥

एहि तन कर फल विषय न भाई * स्वर्गउ स्वल्प अंत दुख दाई।
नर तनु पाइ विषय मन देहीं * पलटि सुधा ते सठ विष लेहीं॥

हे भाई थोड़ी जिन्दगी पर, क्यों गुमान करते हो :—

पानी केरा बुद बुदा, अस मानस की जात।
देखत ही छिप जायेगा, ज्यों तारा परभात॥

पुनः

जाकी पूँजी साँस है, छिन जावे छिन आय।
ताको ऐसो चाहिये, रहे राम लौलाय॥

'४

कबीर जी का वचन है :—

रहना नहीं देश विराना है
यह संसार कागद की पुड़िया बूँद पड़े घुल जाना है।
यह संसार काँट की वाड़ी उलझ पुलझ मरि जाना है॥
यह संसार झाड़ और झाँखर आग लगे बरि जाना है।
कहत कबीर सुनो भाई साधो सतगुरु नाम ठिकाना है॥

हे भाई यह संसार कितना असार और जीवन कैसा नाशवान् है। परन्तु मनुष्य मोह में पड़ कर माया के फन्दे में जकड़ कर अपनी वास्तविकता को नहीं पहिचानता, यह गर्व में अपने को विषयों का भोगता और मालिक समझने लगता है। परिणाम यह होता है, कि यह श्रेय साधना से विमुख होकर प्रेम के पीछे अपने इस अमूल्य शरीर को व्यर्थ कर देता है। वह जन्म मरण के दुर्दान्त चक्कर से अलग नहीं होता, और संसार चक्र में पड़ा गोता खाता रहता है।" इत्यादि २ बहुत प्रकार से उसको यही ज्ञान वैराग्य शरीर की बनावट इत्यादि का भली भाँति बोध करा के उपदेश दिया। इससे उसका मोह छूट गया, और वह कृतार्थ हुआ।

अब आप की अवस्था १४-१५ वर्ष की हुई। एक महात्मा द्वारा आप योग का अभ्यास सीखने लगे। और खोज २ कर महात्माओं की जीवनी कविता और संग्रह आदि पढ़ने का बड़ा चाव पैदा हुआ। काष्ठजिह्वा स्वामी जी की वैराग्य प्रदीपिका-विनय पत्रिका गिरधर की कुण्डलियाँ, कबीर के दोहे सुदामा की बाराखरी इत्यादि बहुत से ग्रंथ देख डाले। श्री हनुमन्त-लाल जी की कृपा व अनुग्रह से श्री रामायण जी का पाठ व अर्थ तो ऐसा ललित शुद्ध व बढ़ियाँ करते, कि अच्छे २ पण्डित मुँह ताकते रह जाते। और आप से लक्ष्मण गीता, रामगीता, भरत संवाद आदि प्रसंगों को बार २ कहलाते।

प्रथम अल्पायू योग

अब आप की अवस्था षोड़श वर्ष की हुई, श्री रामायण जी का नवाह करने का बड़ा प्रेम उत्पन्न हुआ। १०८ नवाह करने का निश्चय किया, किन्तु ७५ ही नवाह पूर्ण कर पाये, कि शरीर रोगी हुआ, पहिला अल्प मृत्यु योग आ पहुँचा। आपको पेचिंश की बीमारी लग गई। शरीर सारा सूख गया। अस्थि पिंजर मात्र रह गया। माता को विशेष दुखी देख, न अपना मल मूत्र उठवाते थे, और न अपने कमरे में ही आने देते थे। कि कहीं मेरी भयानक शक्ल देख कर धैर्य न छोड़ दे। ऐसी अवस्था में भी सब सफ़ाई धुलाई अपने ही हाथ

से करते थे। अब जीवन की कोई आशा नहीं रह गई थी। बस पड़े २ सिया-राम नाम की रटन और श्री हनूमान जी का ही अवलम्ब था। प्रभू अपने प्यारे भक्त बालानन्द जी को ऐसी अवस्था में कब तक देख सकते थे। श्री अंजनी नन्दन जी बलदेव दास जी का रूप बना कर सीताराम २ कहते हुये आपके पास पहुँचे। किवाड़ खुलते ही आपने देखा कि आज तो महात्मा जी अपना बड़ा तेज प्रकट किये हुए सुन्दर वैष्णवी ऊर्धपुंण्ड्र तिलक लगाये, माला डाले बड़ा सुन्दर रूप बना कर आये हैं। उठकर दंडवत करने का प्रयत्न करने लगे, परन्तु न उठा गया। महात्मा जी ने रोका, बढ़ कर सिर पर हाथ फेरा और कहा कि "बेटा तूने बहुत कलेश पाया, अब अच्छा हो जावेगा। देख मैं जाता हूँ। यह परम पवित्र श्री सीताराम नाम को कभी न छोड़ना, ले यह षड़क्षर राम तारक मंत्र भी तुझे दिये जाता हूं। इसको युगल रूप से साङ्गोपाङ्ग गुरू द्वारा तू फिर प्राप्त करेगा। उसी दिन से रोग अच्छा होने लगा। दस पाँच दिन में शरीर में ताकत आने पर महात्मा बलदेव दास जी के दर्शनों के लिये गये। उनकी कृपा करने के लिये कृतज्ञता प्रकट की। वे चौंक पड़े। उन्होंने कहा, मैं तो तुम्हारे घर कभी नहीं गया। शपथा शपथी होने के बाद महात्मा ने अपने हृदय में सब बात जानकर कहा कि निश्चय तुम पर श्री हनूमान् जी की कृपा हुई है। और उन्होंने ही मेरे रूप से तुम्हें दर्शन तथा उपदेश दिया है। तुम धन्य हो, तुम्हारा जन्म सफल हुआ।

माता की अन्तोष्टि क्रिया

माता की वृद्ध अवस्था और मृत्यु के निकट आई देख आपने उन्हें तीर्थ कराने का निश्चय किया। भक्त के अन्दर भावना सिद्ध होने के लिये ही होती है। शीघ्र प्रबन्ध हो गया। कई स्थानों पर होते हुये अनूप शहर पहुँचे। पण्डित काशीनाथ जी के यहाँ निवास किया, डेढ़ महिने टिके। खूब भगवत वार्ता और सत्संग में समय बीता, हरिद्वार जाने लगे तो प्लेग होने के कारण रास्ते में से ही दूसरी ओर के तीर्थ करते हुये ग्वालियर सकुशल वापस आये। माता जी का अन्त समय तो था ही, एक दिन अचानक देह छोड़ दी। यह शृंगार भाव के शुरु से ही भाविक थे। सरकार से पति पत्नि भाव जोड़े हुये थे। पंचकेश रखते थे। नाई का स्पर्श नहीं कराते थे। मुण्डन कराने के भय से इन्होंने माता का दाह संस्कार स्वयं न करके अपने कुटुम्ब सम्बन्धी दुर्गाप्रसाद जी द्वारा करा दिया, और उनकी आत्मा को शान्ति और सद्गति के लिये २३ दिन लगातार 'सियाराम' नाम रटकर उनको अपर्ण कर प्रभू से उनकी आत्मा को ग्रहण करने की प्रार्थना की, और खूब धूमधाम से

भंडारा किया, बस भक्ति पथ का अकेला कंटक भी दूर हो गया। माल जमीन जायदाद मकान इत्यादि भी अपने काका आदि सम्बन्धियों को विना लालच के अर्पण कर दिये। इन चीजों से तो शुरु से ही वैराग्य था। कुटुम्ब वालों ने इनके विवाह करने का बहुत अनुरोध किया, परन्तु इन्होंने एक न मानी, और निर्द्वन्द होकर भजन करने लगे। प्रभू की शरण में, उनकी खोज में घर से निकल पड़े। बस यहीं से उनके जीवन में दूसरा अध्याय प्रारम्भ होता है।

भगवत् दर्शन

आप पूर्ववत् पहिले स्थान पर श्री हनूमान् जी को अखण्ड श्री सियाराम नाम और श्री रामायण जी का पाठ सुनाने लगे। कभी बेल पत्र पा लेते, कभी दूब घोट कर पी लेते, कभी आग में कण्डा जलाकर उसकी राख छान कर पी लेते, कभी बेर ही खा कर रह जाते थे। उस पहाड़ी के महात्मा कुछ दे देते तो उस पर ही निर्वाह कर लेते, मिलना जुलना भी कम पसन्द करते थे। संसार से प्रेम ममता, माया से बिल्कुल दूर हटने लगे। इन्द्रिय तथा मन को निग्रह करने के लिये रुक्ष आहार करने और भूखा रहने की वृत्ति देख कर महात्मा लोग भी आश्चर्य करते, और अपने २ सम्प्रदाय तथा मत में इनको लेने का प्रयत्न करते, परन्तु वे किसी के पंजे में नहीं आये। भ्रमण करते हुये पहाड़ी की एक गुफ़ा में एक महात्मा श्री वल्लभ दास जी के दर्शन हुये। यह महात्मा भी बड़े अद्भुत और पक्के नाम जापक थे। एक दिन रात में श्री राम नाम १७५००० पुराने का इनका अटल नियम था, उनकी वृत्ति को देख कर ये परम प्रसन्न हुये। प्रभू के कृपा पात्र समझ कर इनके साथ रहस्य मय वार्तालाप होने लगी। इन्होंने पूछा, 'महाराज जी!' श्री सीताराम जी का दर्शन कैसे प्राप्त होगा। उन्होंने कहा "भोजन शयन जल" तीन चीज़ों का त्याग करो, जब तक दर्शन न हों, और अखंड सियाराम नाम रटो।" आपने सरल विश्वास से वैसा ही किया। तीन दिन और तीन रात व्यतीत होने पर चौथे दिन दोपहर में प्रभू प्रेरित किंचित निद्रा आगई, उसी निद्रा में कोटि सूर्य का प्रकाश देख पड़ा। उसी प्रकाश में श्री सीताराम जी लक्ष्मण जी सहित अत्यन्त सुन्दरता और शोभा के सहित देख पड़े। आप बड़े चकित हुये। दण्डवत प्रणाम कर हाथ जोड़ खड़े हो टक-टकी बांध कर दर्शन करने लगे। युगल सरकार मन्द मन्द मुस्कान सहित अमृत मयी वाणी में बोले—"इतना कष्ट क्यों उठाते हो! तुम्हें जिस कार्य की आज्ञा है उसे करो, जीवों का उद्धार करो। हमारा नाम रटो, रटाओ,

सदैव हमको अपने समीप समझो।" इस प्रकार कहते हुये तीनों सरकार प्रकाश सहित अन्तर्द्धान हो गये। यह चरित्र देख हृदय बड़े प्रफुल्लित हुए। गद्गद कंठ से उस दयामय प्रभू की प्रार्थना करने लगे। पूर्ववत् वृत्ति से फिर विचरण करने लगे। आनन्द की सीमा न रही।

बड़े महाराज जी का दर्शन

एक दिन आप को श्री अनन्त श्री स्वामी युगलानन्यशरण जी श्री लक्ष्मण किला श्री अयोध्या वासी जू का स्वप्न में दर्शन हुए, और कहा कि "पुत्र हम तेरी नाम की निष्ठा से प्रसन्न हैं। इस निष्ठा को और दृढ़ करने तथा उसका महात्म्य जानने के अभिप्राय से तुमको अपनी अमूल्य पुस्तक 'श्री सीताराम नाम प्रताप प्रकाश' (नाम जापकों के लिये एक मात्र अवलम्ब) देंगे। उससे तुम्हारा बड़ा हित होगा।" स्वप्न समाप्त होते ही निद्रा भंग हो गई। बड़े प्रसन्न हुए। दूसरे ही दिन एक ब्राह्मण 'श्री सीताराम नाम प्रताप प्रकाश' पुस्तक भेंट करने आया; आपने सहर्ष स्वीकार की। आद्योपांत वार वार पढ़े। सहायता के लिये उन नाम जापक माहात्मा से पूछ लेते रहे। पढ़ कर श्री नाम महाराज की महिमा भली भाँति विदित हुई, और नाम की भूख व निष्ठा सौगुनी बढ़ गई। आपके मन में राम मंत्र साङ्गोपाङ्ग ग्रहण करने की इच्छा हुई, और इन्हीं पुस्तक रचयिता महात्मा को गुरू बनाने का निश्चय किया। आपने परम कृपलु इष्ट देव को यह प्रार्थना सादर निवेदन की। वहाँ देर कहाँ थी। स्वप्न में श्री हनुमान् जी ने साङ्गोपाङ्ग राममंत्र का उपदेश किया, और गुरु प्राप्ति, जिन महात्मा ने दर्शन दिये रहे उन्हीं के वंश में अयोध्या जी में बतलाई, कि वहाँ तुम्हें गुरु मिलेंगे, जो भली भांति दीक्षा देंगे। भगवान् का सुन्दर वान। और अनेक रहस्यों की प्राप्ति होगी। स्वप्न से जाग, बड़े हर्षित हो वह मंत्र कंठ कर नाम के साथ प्रसन्नता पूर्वक जपने लगे।

श्री चित्रकूट यात्रा

अब श्री महाराज जी के प्रायः सब मनोरथ पूर्ण हो गये थे, माता और सम्बन्धियों का भी भारी बन्धन छूट गया था, आप के मन में चित्रकूट यात्रा की इच्छा प्रकट हुई। तुरन्त हर्ष पूर्वक श्री हनुमन्त लाल जी के मन्दिर में जाकर साष्टांग प्रणाम किया। मातृभूमि और अपने प्रिय इष्ट देव की मूर्ति के छोड़ने के खेद के भाव आ प्रादुर्भूत हुये। आपने गदगद् कंठ से हाथ जोड़

कर श्री हनूमान् जी से चित्रकूट जाने की आज्ञा माँगी, और प्रार्थना की कि हे प्रभो ! मेरी सदैव रक्षा कीजियेगा। मेरे सर्व मनोरथ सरकार ने पूर्ण किये, और आगे भी कराते रहेंगे। मेरा मन सदैव सियाराम नाम में लगा रहे, भूलकर भी विषयों में न पड़े। सदैव कृपा बनी रहे। इत्यादि इत्यादि प्रार्थना कर दण्डवत् किये। पुजारी सन्त गोसाईं गणेशपुरी जी प्रसन्नता पूर्वक माला और प्रसादी लेकर आये, कि हनूमान जी आप पर परम प्रसन्न हैं। आपकी सदैव रक्षा करेंगे, आप निर्भय चित्रकूट की यात्रा करें। बस प्रसन्न चित्त हो महात्माओं से मिल दंडवत प्रणाम कर आशीर्वाद ले चलने लगे। इनका स्थान छोड़ना सुन नगरवासी और सम्बन्धी लोग सब जुट गये और घेर कर खड़े हो गये। स्थान न छोड़ने के लिये प्रार्थना करने लगे, आपने स्वीकार नहीं किया। फिर सबने समय २ पर दर्शन देते रहने के लिये प्रार्थना की। रेल का टिकट कटवा दिया। आप हर्ष पूर्वक रेल में जननी जन्म भूमि, श्री हनूमान जी को मस्तक नवा कर सवार हुये। लोग विरह जन्य ताप से पीड़ित हो रहे थे, बहुत से तो फूट फूट कर रोने लगे। कुछ कहने लगे "बिछुरत एक प्राण हर लेहीं" बिल्कुल ठीक है। यह दृश्य ठीक राम जी के वन गवन के सदृश था, कुछ लोग साथ जाने को उद्यत हुये, परन्तु आपने समझा बुझा दिया। रेल ने सीटी दी, "फिर दर्शन दीजियेगा, जय जय सीताराम" के शब्दों से स्टेशन गूँज उठा। आप सबको माथा नवा वहाँ से रवाना हुये।

चित्रकूट पहुँच, गाड़ी से उतर, लोगों से राह पूछते हुये श्री जानकी कुंड को बड़े हर्ष के साथ चले। आपका शील स्वभाव व भजन देखकर लोग आकर्षित हुये। ठहरने तथा भोजन पाने की प्रार्थना करते, परन्तु आपको तो दर्शनों की उत्कंठा थी, इससे किसी का निमंत्रण न स्वीकार कर आगे बढ़ते जाते रहे। प्रेमी लोग आप के पीछे दूर तक जाकर राह बता देते। इस प्रकार श्री कामदगिरि के दर्शन कर कृत कृत्य हुये, और वहाँ की यात्रा की, परिक्रमा विधि पूर्वक की। पुनः यज्ञवेदी होते हुये, श्री मन्दाकिनी जी में श्री रामघाट पर स्नान कर जानकी कुंड चले गये। उन दिनों में जय राम शरण जी प्रधान महात्मा वहाँ रहते थे, उन्हों ने बिना परिचय के ही आपका आदर सत्कार किया। एक कोठरी में आसन करा कर प्रार्थना की कि मन चाहे तहाँ विचरें, परन्तु प्रशादी यहीं सेवन करें। आप के वैराग्य तथा भजन का यश थोड़े ही दिनों में चारों ओर फैल गया, महात्मा लोग दर्शन तथा सत्संग करने आने लगे। आपकी वृत्ति को देख कर लज्जित होते। आपका मन श्री सियराम नाम रटने के सिवाय कुछ और नहीं चाहता था। प्रपंच बढ़ने पर भजन में बाधा देख आपने वहाँ से आसन बाँध श्री हनुमान धारा की यात्रा की। श्री हनुमान जी के दर्शन कर रात्रि को ऊपर श्री सीता रसोई में बैठे रह गये। भोर ही कोटि तीर्थ होते देवाँगना आदि

होते, सिद्ध की गुफ़ा होते, पहाड़ ही पहाड़ विचरते हुये, श्री फटिक शिला होते श्री अनुसूइया जी चले गये। वहाँ एक संत आप को चने का आटा दिया। उसके आप दो टिक्कड़ बनाये। श्री मन्दाकिनी के किनारे भोग लगाये, और कहने लगे :—जय सियराम जय जय सियराम।

"दो रोटी मोटी भली, पाय गाय सियराम।
श्री युगल अनन्य खटिका तजी, सहजै मन विश्राम ॥"

इतने ही में वहाँ पर चौवेपुर के चार पाँच ब्राह्मण जो अनुसूया जी दर्शन करने आये थे, मिले। वेष से बड़े भजनानन्दी महात्मा जानि तीर्थ करने की इच्छा देख, उन्हें सादर अपने साथ अपने गाँव लिवा ले चले, वहाँ सब तीर्थों का वर्णन महात्म्य और रास्ते इत्यादि का उनको भेद दिया, और भली भांति सेवा सत्कार किया। बड़े भोर ही आपने उठ कर गुप्त गोदावरी का रास्ता लिया। वहाँ स्नान कर कैलाश होते हुए श्री भरत कूप चले गये। स्नान जलपान और विश्राम तथा महात्माओं का दर्शन कर, श्री राम शय्यां चले आये। रात्रि को यहीं रह गये। इस प्रकार श्री चित्रकूट परिक्रमा और आदि तीर्थ स्थानों में श्री सिया राम नाम जपते हुए कुछ समय विचरते रहे। कुछ काल वीतने पर भ्रमण करते हुए आप मन्दाकिनी के तट पर श्री विश्राम घाट पर पहुँचे।

अकाशवाणी

जाड़े की ऋतु थी, रात्रि का समय था, घाट ज्वारभाटे के जल से भीगा हुआ था। आप के पास एक कम्बल एक लँगोटी और एक कमंडल छोड़ कर और कुछ न था। सियाराम नाम रटते हुये कम्बल की घोघी बना कर सिर को घुटनों पर रख कर बैठ गये। जाड़े में नींद कहाँ। प्रभू दर्शन की लौ अन्दर सता रही थी, ऐसी विपत्ति में भगवान् अपने भक्त को अधिक समय तक नहीं देख सकते। जब अर्ध रात्रि हुई, और घाट पर कोई न रहा, तो आकाशवाणी बड़े गम्भीर शब्दों में सुन पड़ी। "श्री अवध जाकर पंचसंस्कार कराओ" तब तुम्हें दर्शन प्राप्त होंगे। आप चारो तरफ़ उठ कर देखने लगे, तो कहीं कोई नहीं देखा। इसको भ्रम मान कर आप बैठ गये। फिर वही वाणी सुन पड़ी, इसको भ्रम न समझो शीघ्र ही अवध जाकर शरीर के संस्कार कराओ। यह सुन आप बड़ी उत्कंठा से अवध जाने के लिये भोर होने की प्रतीक्षा करने लगे। आप सवेरा होते ही स्टेशन पहुँचे, टिकट के लिये पैसे न थे। गाड़ी आगई। एक बाबू से जो बड़ा दयावान् और साधु भक्त था, आज्ञा ले गाड़ी में बैठ गये महोवे स्टेशन पर एक टिकट चैकर ने उतार कर स्टेशन मास्टर के हवाले कर

दिया। वह भी भाग्य से बड़ा सज्जन निकला, उसने महात्मा जान अपने पास से भोजन कराया, फिर गाड़ी में सवार करा दिया, फिर आप गाड़ी में बैठ कौंच काल्पी नगर पहुँचे, वहाँ आप को बड़ी भूख लगी, गाड़ी से उतर कर शहर की ओर चले। लोगों से किसी भक्त का मकान पूछने पर उन्होंने गनेशी लाल हलवाई परम भक्त की दुकान बता दी। उसने दंडवत प्रणाम करके भोजन कराया, और दक्षिणा में अयोध्या जी तक का किराया दिया। वहीं आप से संत श्री राघव दास जी जुवालिया एक स्थान के महन्त से जो कि अयोध्या जी जाने वाले थे, भेंट हुई। उनके सेवकाने होते हुये जो कुछ चढ़ावा प्राप्त हुवा, उसे महन्त जी के ही अर्पण कर उनके साथ श्री अयोध्या जी की यात्रा सम्वत् १९५९ वि० में की।

सर्प पराभव

एक दो दिन उपरोक्त पंडित जी के साथ रह कर अयोध्या के सब समाचार तथा भेदभावों को लिया, और श्री १०८ श्री युगला नन्य शरण जी महाराज की, जिनके कि इन्होंने स्वप्न में ग्वालियर के किले पर दर्शन किये थे, खोज की उनके साकेत यात्रा को सुनकर बड़ा दुख हुआ। उनके स्थान श्री लक्ष्मण किले पर जाकर उनके चित्र पट के दर्शन किये। एकान्त और निर्विघ्न स्थान भजन करने के लिये पूछा। सरयू जी के किनारे बहुत दिन से बेकार पड़ी हुई एक गुफ़ा में रहने की आज्ञा माँगी, महन्त जी ने हर्ष पूर्वक आज्ञा देते हुये उसमें दो सर्पों के रहने की बात कही, श्री महाराज जी ने गुफ़ा को साफ़ कर उसमें आसन लगा कर सियाराम रटते हुये आनन्द पूर्वक सरयू जी की लहरों का दृश्य देखने लगे। रात्रि होने पर वे दोनों भयानक सर्प फुंकारते हुये इनके आसन के पास फन उठा कर खड़े हो गये। महाराज जी ने उनको कोई देव या ऋषि समझ कर दंडवत किया, और प्रार्थना की, "कि आप तो अयोध्या वासी हैं, कहीं भी अयोध्या में रह सकते हैं, और मैं परदेशी आफ़त का मारा इस निर्जन स्थान को बड़ी कठिनाई से प्राप्त कर सका हूँ। अन्य स्थान पाने में मुझे बड़ी कठिनाई होगी, और दोनों (आप और हम) एक स्थान में रह भी नहीं सकते, इसलिये अच्छा होता, कि आप यह स्थान छोड़कर कहीं अन्यत्र जले जावें।" मस्तक उठाकर ऊपर देखने पर सर्पों का कहीं पता नहीं लगा, और फिर कभी भी दर्शन नहीं हुये। इस बात का समाचार सारी अयोध्या के महात्माओं में फैल गया, और इनके दर्शनों को लोग आने लगे। इनके भजन प्रभाव वैराग्य व वृत्ति को देखकर लोग बड़े आकर्षित होने लगे। आठ पहर में एक बार कोई भोजन देता, तो पा लेते वरना वैसे ही रह जाते।

अवध में श्री सद्गुरु प्राप्ति

अब आप को गुरु खोजते हुये लगभग १२ वर्ष हो चुके थे, परन्तु कोई मनोवांछित बढ़ियाँ गुरु नहीं मिला। यहाँ अयोध्या जी में छः महिना बढ़ियाँ वैष्णव भजना नन्दी विरक्त ब्राह्मण शरीर वाला, श्री शृंगार भाव का उपासक तत्त्वज्ञाता आदि १६ लक्षणों से युक्त गुरु खोजते रह गये, उन्हीं दिनों में श्री स्वामी रघुवीर शरण जी महाराज बड़े विद्वान्, वैराग्यवान् सर्व गुण सम्पन्न श्री तुलसीकृत रामायण की कथा कहते थे। उसमें बहुत से सन्त और अयोध्या वासी एकत्रित होते। उसी समाज में आप जाकर कथा सुनते तथा गुरु को खोजते। अन्त में एक दिन महात्मा पर दृष्टि ठहरी। मन-माना, कई दिन तक खूब पक्का मन करने के बाद परिचय पूछने से पता लगा कि यह उन्हीं किले वाले महाराज जी के वंश में से हैं, और श्री सिया सुहाग बाग में रहते हैं। बस फिर क्या था, नित्य प्रति सत्संग करने लगे। एक दिन एकान्त पाकर उनसे पंच संस्कार प्रदान करने की प्रार्थना की। महा-राज जी ने इनकी बढ़ी हुई जटा को देखकर कहा कि हमारे यहाँ इनका व्यव-हार नहीं होता। आप बड़े दुखी होकर गये, और सरयू जी के किनारे बैठ कर यह सोचते हुये कि यह जटायें, ही मेरे पंच संस्कार लेने में बाधक हुई, हाथ से नोच कर उखाड़ कर सरयू जी में बहा दी। अगले दिन जब दंडवत करने गये, फचफचे सर पर हाथ रखने से बड़े महाराज जी का हाथ भीग गया। पूछा कि अरे यह क्या किया? उत्तर दिया कि सरकार कलंक था, सरयू जी में बहा आया, फिर कहा, नाई से क्यों नहीं कटा दिया, तब उत्तर दिया कि कहीं सुहागिन स्त्रियाँ भी नाई का स्पर्श करा सकती हैं। इस पर महराज जी बड़े प्रसन्न हुये, और कहा कि तू बना बनाया पात्र है। तुझे तो खाली पंच संस्कार देने की ही कमी है, मंगलवार का शुभ दिन था। सामग्री की डालियाँ मँगवाई, और चार बचन लिये।

प्रश्न १—तीर्थ करना हो तो संस्कार कराने से पहले कर आओ फिर तीर्थ करने की इच्छा न करना।

उत्तर—नहीं करना है सरकार।

प्रश्न २—महन्ती की तो इच्छा नहीं है? उत्तर नहीं।

प्रश्न ३—कभी किसी के आगे हाथ तो नहीं फैलाओगे? उ० नहीं।

प्रश्न ४—जनम भर भजन करोगे? उत्तर—अवश्य ही सरकार दृढ़ता पूर्वक चारों प्रतिज्ञाओं को करा कर हर्ष पूर्वक पंच संस्कार श्री सीताराम, युगल षड़क्षर महामन्त्र राज तिलक छाप युगल कंठी औ आत्मनाम, गुरु मंत्र और श्री हनूमान जी का मूल वीज मंत्र, एवं युगल शरणागति, युगल मंत्रद्वय, युगल चरम-मंत्र' प्रदान कर उपदेश दिया:—

(१) चित्रकूट मिथिला अवध, इन में रंच न भेद।
मन माने जहँ निवसि सुख, सुमिरिय नाम अखेद॥

परन्तु व्यर्थ ही देश देशान्तरों में उपासकों को घूमना उचित नहीं। बड़े महाराज जी का कथन है:—

सहस करोड़ बार द्वारिका प्रयाग जाय,
पदुम अनेक वार काशिका विहार ही॥
मथुरा अवंतिका औ अरव खरब वार,
माया पुरी कच्छप समान दृग, धार ही॥
जगन्नाथ बदरी केदार नाथ आदि सब,
तीरथ सुक्षेत्र जाय, पदुम अठारही॥
श्री युगल अनन्य तऊ एक बार रामनाम,
मुख के उचारे सम कहे पाप भारही॥१॥

चार वेद अंग और उपांग के समेत विधि,
सहित अनेक कोटि बार करे पाठ को॥
तैसेही पुराण संहिता पुनीत सुस्मृति,
सहस करोर बार कहे जीति आठको॥
नेम धर्म धारणा, समाधि कई योनि लगि,
करे जेते साधन उपायन के ठाट को॥
श्री युगल अनन्य तऊ एक बार राम नाम,
सम नहीं होत देव तरु बर काठ को॥२॥

इस प्रकार से नाम से बढ़ कर कुछ नहीं है। नाम रटो और रटाओ और अपने इष्ट धामों में सुख पूर्वक विचरो।

(२) रस राज श्री श्रृङ्गार भाव के भेदभाव नाना भाँति से समझा दिये, और यथार्थ स्वरूप का ज्ञान, श्री महाराज जी ने आपको सम्यक प्रकार से बोध करा दिया। श्री श्रृँगार रस की उपासना विना, प्रभू की सामीप्य सेवा के सुख को जीव प्राप्त नहीं होता। क्योंकि यह जीव प्रभू का अंश आत्मा स्त्री वर्ग है। सो विसरि अपने को डाढ़ी मूँछ आकार से पुरुष मान लिया, इसी वास्ते प्रभू से विमुख हो दुर्दशा को प्राप्त हो रहा है। प्रभू प्राप्ति अर्थ मन मुखी आचरण कर करके जीव वृथा जिन्दगी बिता रहे हैं, और उल्टे अपराध के भागी हो रहे हैं। विना श्री जानकी जी की कृपा के जीव प्रभू को भजते हुये भी सुख नहीं प्राप्त कर सकते। इत्यादि इत्यादि

(३) श्री वैष्णवों का अन्तरंग और बहिरंग धर्म, कर्म धाम क्षेत्र आदिक भेद नाना प्रकार से समझाये, और कहा, कि संसार असार है, इसमें कभी नहीं उलझना। सदैव नाम रटते रटवाते, वैष्णव धर्म का प्रचार करते, जीवों को प्रभू सन्मुख करते, मन चाहे जहाँ रमे, अपने इष्ट धामों

में सुख पूर्वक विचरना। नाम और वेष भगवान् का, और ध्यान गुरु का सदैव करना; तुम्हारा शरीर सम्बन्धी नाम "सियालाल शरण" जगत में विख्यात होगा। तुम्हारे समय में इस नाम का महात्मा और कोई नहीं होगा, युगल गायत्री, युगल मंत्र, मंत्रद्वै, पंच मुद्रिका मंत्र, तीनों भाइयों के सशक्ति मंत्रों का नित्य प्रति जप करते रहना, तुम्हारी आत्म सम्बन्धी नाम 'प्रेमलता' भगवत सम्बन्धी सेवा पान पवाना।

(४) स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीरों को माया रचित नाशमान जानना तीनों से भिन्न चौथा परमानन्द स्वरूप महाकारण नित्य-सच्चिदानन्द तुरिय-एक रस श्री सीता तथा रामचन्द्र जू से अभेद अखण्ड-सखी स्वरूप सर्व शक्तिमान श्री सिया स्वामिनी जू की सहचरी अपने को जानना।

(५) विजाती ग्रन्थ, विजाती संग-स्पर्श सम्भाषणादि सर्वदा त्याग करना, भीतर बाहर से शुद्ध सचेत रहना, सुख दुख मानापमान सम मानना स्थूल देह का भोग अनित्य जानि सदा प्रसन्न चित्त रहना, मायिक पदार्थों से अचाह रहते हुए निरन्तर नाम के परायण रहना। व्यर्थ काल पल मात्र न विताना-अपने स्वरूप को ध्यान मनन करना-स्वधर्म प्रतिपादित ग्रन्थ पढ़ना सुनना चाहिये। एकान्त वास करे, इस विधि वर्तने से जीव कृत्य कृत्य होकर प्रभू सामीप्यता का एक ही जन्म में अधिकारी बन जाता है। इस प्रकार उपदेश कर बड़े महाराज जी नाम रटने लगे। महाराज जी हर्षित हो चरणों में पड़े। अपार हर्ष हुआ। श्रीगुरू महाराज जी की सेवा में श्री सिया सुहाग बाग में, निरन्तर रहने लगे। अब आप को नित्य प्रति नये अनुभव होने लगे। कवित स्फुरित होने लगे और सत्संग में नित नई रुचि और अखण्ड नाम रटने का निरन्तर अभ्यास होने लगा। आप के इस समय के साथी बाबा श्री नारायणदास जी (करतलिया बाबा) और श्री रामदेव शरणजी (वर्तमान किला के महन्त जी) थे। इस समय की आप की बहुत क्रीड़ायें हैं। जिनमें से कुछ आगे उद्धृत की जायेंगी। सच है महान् व्यक्तियों के महान् ही कार्य होते हैं, और उनके चरित्र लोकोपयोगी और कल्याण यात्रा के पथ प्रदर्शक होते हुये तरण तारण होते हैं। सन्त लोग आप को घेर कर उपदेश करने की प्रार्थना करते तो आप नाना प्रकार के वचनामृत से उनके हृदय को प्लावित करते आपने फरमाया :—

श्री सद्गुरुपदेश

छटो अगुण गुण गण जटो, गटो न भक्षाभक्ष।
फटो विषय सुख दुखद ते, प्रेमलता लखि अक्ष ॥१॥
ठटो सु वैष्णव ठाठ दृढ़, डटो सु भक्ति पथ भाय।
कटो शीश निज धर्म हित, प्रेमलता हरषाय ॥२॥

हटो न सेवत सन्तगुरु, नटो न करत सुकाम ।
बटो आन की विपति दुख, घटो खटो सब ठाम ॥ ३ ॥
नाम रटो जगते हटो, अटो अवनि बसु याम ।
सटो सङ्ग शुचि रस चटो, लटो देह दुख धाम ॥ ४ ॥
ऋधि सिधि सम्पति देह सुख, लोक प्रतिष्ठा मान ।
परि हरि श्री सियराम नित, प्रेमलता करु गान ॥ ५ ॥
द्वादश वर्ष सनेम नित, रटे लाख सियराम ।
येन केन विधि तर्क तजि, विलग बैठि निष्काम ॥ ६ ॥
अवसि होय सियराम कर, रूप जियत जग सोइ ।
तेहि सेवत पावहि सुगति, प्रेमलता सब कोइ ॥ ७ ॥
श्री सियराम सुपाल वर, वल्ली भाव अदाग ।
गुरु खेवैया प्रेम डर, डंडा दोउ दिशि लाग ॥ ८ ॥
श्री वैष्णव कर वेष वर, सोइ अटूट पतवार ।
अपर सुगुण सामान बहु, चलनि रटनि इकतार ॥ ९ ॥
नाम नाव पर चढ़हि जे, एहि विधि जन कलि काल ।
सोइ बिनु श्रम तरि घोर भव, पैहहि श्री सियलाल ॥ १० ॥
तिलक छाप कण्ठी युगल, युगल मन्त्र निज नाम ।
श्री रसराज उपासना, धारि रटहु सियराम ॥ ११ ॥
मशक उड़ावै मेरुवर, फूंकि हिमाचल शैल ।
प्रेमलता पै नाम बिनु, जीव न पावहि गैल ॥ १२ ॥
राम नाम सञ्जीवनी, श्री सिय नाम गिरीश ।
प्रेमलता हनुमान रट, ज्यायो जीव अहीश ॥ १३ ॥
नृप संतोषी होय वरु, गणिका करै विवाह ।
प्रेमलता पै नाम बिनु, मिलत न श्री सियलाल ॥ १४ ॥
नासु प्रताप[१], प्रभाव[२], महिमा[३] करतब[४] रीति[५] गति[६] ।
पद[७] गुण[८] पावन[९] ताव, शील[१०] सनेह[११] स्वभाव[१२] रति[१३] ॥ १५ ॥
गरुता[१४] प्रभुता[१५] प्रीति[१६], षोडश भेद विचारि उर ।
रटै होय जगजीति, छूटै आवागमन फुर ॥ १६ ॥

॥ इति श्री प्रेमलता बृहद चरित्रायां द्वितीय खण्डः समाप्तम् ॥

जय सियाराम जय जय सियाराम । जय सियाराम जय जय सियाराम ॥
जय सियाराम जय जय सियाराम । जय सियाराम जय जय सियाराम ॥
जय सियाराम जय जय सियाराम । जय सियाराम जय जय सियाराम ॥
जय सियाराम जय जय सियाराम । जय सियाराम जय जय सियाराम ॥

॥ श्री सद्गुरु पाद पद्माभ्यां नमः ॥

अथ तृतीय खन्ड

द्वितीय अलपायू योग

कुछ समय के पश्चात् आपके मन में श्री चित्रकूट में रह कर नाम रटने की प्रबल इच्छा उत्पन्न हुई-श्री महाराज जी से आपने अपने मन का मनोरथ प्रगट किया। श्री महाराज जी ने सहर्ष आज्ञा प्रदान कर आशीर्वाद दिया। आप साष्टांग दंडवत कर एक कम्बल तथा अँचला लंगोटी, तिलक की थैली—एक कमन्डल, ले, पैदल ही श्री सियाराम नाम रटते हुए चित्रकूट की यात्रा की। प्रयाग पहुंच कर एक संत के यहाँ कुछ विश्राम कर और प्रसादी पाकर अपनी यात्रा ली, साथ में कई संत और भी जा रहे थे। आपका ३० वर्ष की अवस्था वाला द्वितीय अल्पायू योग आ पहुँचा। आपको तिजारी बुखार आता था। बुखार बढ़ा आजका बुखार साधारण नहीं था। बड़ा विकराल स्वरूप धारण किया। आप बेहोश हो गये। साथी लोग आपको छोड़ कर चले गये। उसी बेहोशी में दूत आते हुये दिखाई दिये। आप चिल्ला पड़े और हनूमान जी से रक्षा के लिये प्रार्थना किये। इतने में देखते हैं कि एक विशालकाय बानर हाथ में गदा लिये 'हूँ' 'हूँ' शब्द करता आकाश मार्ग से चला आ रहा है। उस शब्द को सुनते ही, रूप को देख दूत तो भाग खड़े हुए। अपनी ओर वह रूप आते देख आप भी डरे। बानर ने आपके मस्तक पर हाथ फेरा और कहा 'अब तू निर्भय विचर, और अब तेरा यह रोग भी हमेशा के लिये गया" श्री महराज जी यह श्री हनुमन्त लाल जी की कृपा का चरित्र देख बड़े प्रफुल्लित हुए। बारम्बार दंडवत की। रोग भी उनका तत्काल छूट गया। हृदय बड़ा कृतज्ञ और गदगद हुआ। और थोड़े ही काल में पूर्ण बल आने पर आपने फिर यात्रा प्रारम्भ की।

पुनः चित्रकूट को

आप कई दिन के भूखे थे। दिन भर चलने के बाद संध्या को जंगल में एक कुटिया दिखाई दी। आप हर्षित होकर वहाँ पहुँचे। आसन किया एक बड़े तपस्वी संत वहाँ रहते थे, और छोटा हनुमान जी का मन्दिर था। खाद्य सामग्री अथवा बनाने का साधन कुछ दिखाई नहीं देता था, जो प्रसाद

की आकांक्षा करें। संत जी इनको भूखा देखकर हनुमान जी के मन्दिर में घुसे और एक छोटी सी हाँडी निकाल कर बोलें "लो प्रसाद पावोगे। पत्ता लाओ।" दो पत्ते बिछाये गये हाँडी में से खिचड़ी दोनों पत्तों पर यथेष्ट परस ली फिर भी हाँडी भरी ही रही। यह देख बड़ा आश्चर्य हुआ, खिचड़ी भोग लगाकर पायी तो गरम थी, और ऐसा अमृत तुल्य स्वाद था, कि कभी जन्म भर नहीं पायी थी। पाकर रोगी शरीर में शक्ति का संचार हुआ, और बुद्धि में सात्विक तेज उत्पन्न हुआ। अनुभव किया, कि ऐसी स्वादिष्ट चीज तो मनुष्यों द्वारा बनना असंम्भव है, हो न हो यह श्री हनुमान जी की ही सिद्धि प्रसादी है। रात्रि को संत जी से रहस्यमय सतसंग और भक्ति विवेचन होता रहा। यह संत बड़े सिद्ध और श्री किशोरी जी के कृपा पात्र थे, श्री महाराज जी ने प्रार्थना किया, कि सरकार! स्वामिनी जी के रिझाने की कोई वस्तु प्रदान करें। बहुत विनय करने पर आपने यह स्तोत्र पढ़ा :—

श्री जानकी स्त्रोत्र

जपत्वं पद्म पत्राक्षां जपत्वं राघव प्रिये। जगन्मात मही लक्ष्मी संसारार्णव तारिणी ॥१॥ महादेवी नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं सुरेश्वरी। राम प्रिये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं दयानिधे ॥२॥ पद्मालये नमस्तुभ्यं नमस्ते राघव प्रिये जगन्मात नमस्तुभ्यं कृपावति नमस्तुते ॥३॥ दयावति नमस्तुभ्यं नमो विश्वेश्वर प्रिये। नमः क्षीरार्णव सुते नमस्त्रैलोक्य धारिणी ॥४॥ विश्वेश्वरि नमस्तुभ्यं रक्षमां शरणागतम्॥ रक्षत्वं देवदेवेशि देवदेवेश वल्लभे ॥५॥ दरिद्रं त्राहिमां देवी कृपां कृत्वा ममोपरि, नमस्त्रै लोक्य जननी नमस्त्रै लोक्य पाविनी ॥६॥ ब्रह्मादयो नमन्तित्वां जगदानन्द दायिनि। रामप्रिये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं जगद्धिते ॥७॥ आर्ति हरे नमस्तुभ्यं समृद्धि कुरुते नमः। अब्जवासे नमस्तुभ्यं चपलायै नमोनमः ॥८॥ नमस्ते शीघ्रगामिन्यै चंचलायै नमोनमः। परिपालय मां मातर्दासं मां शरणागतम् ॥९॥ शरणं त्वां प्रपन्नोस्मि कमले कमलानने, त्राहि त्राहि महादेवि परित्राण परायणे ॥१०॥ किं बहुक्तेन भो सीते नमस्तेस्तु पुनः पुनः। अन्यन्मे शरणं नास्तित्वनेव शरणं मम ॥११॥ श्री सीता योक्तमिदं पुण्यं ये पठिश्यन्ति मानवाः। श्रोष्यन्ति ये महाभक्तया तेषां दास्यामि सम्पदाम ॥१२॥ यः पठेत् प्रातरुत्थाय श्रद्धाभक्ति समन्वितः सुख सौभाग्य सम्पन्नो बुद्धिमान् ऋद्धिमान् भवेत् ॥१३॥ पुत्रवान् गुणवान् श्रेष्ठो भोक्ता भवति मानवः। इदं स्तोत्रं महापुण्यं महादारिद्र नाशनम्, ॥१४॥ क्षिप्रे प्रसाद जननं चतुवर्गं फल प्रदम्। यः पठेत् सततं प्रेम्याप्रत्यक्षो जायते ध्रुवम् ॥१५॥
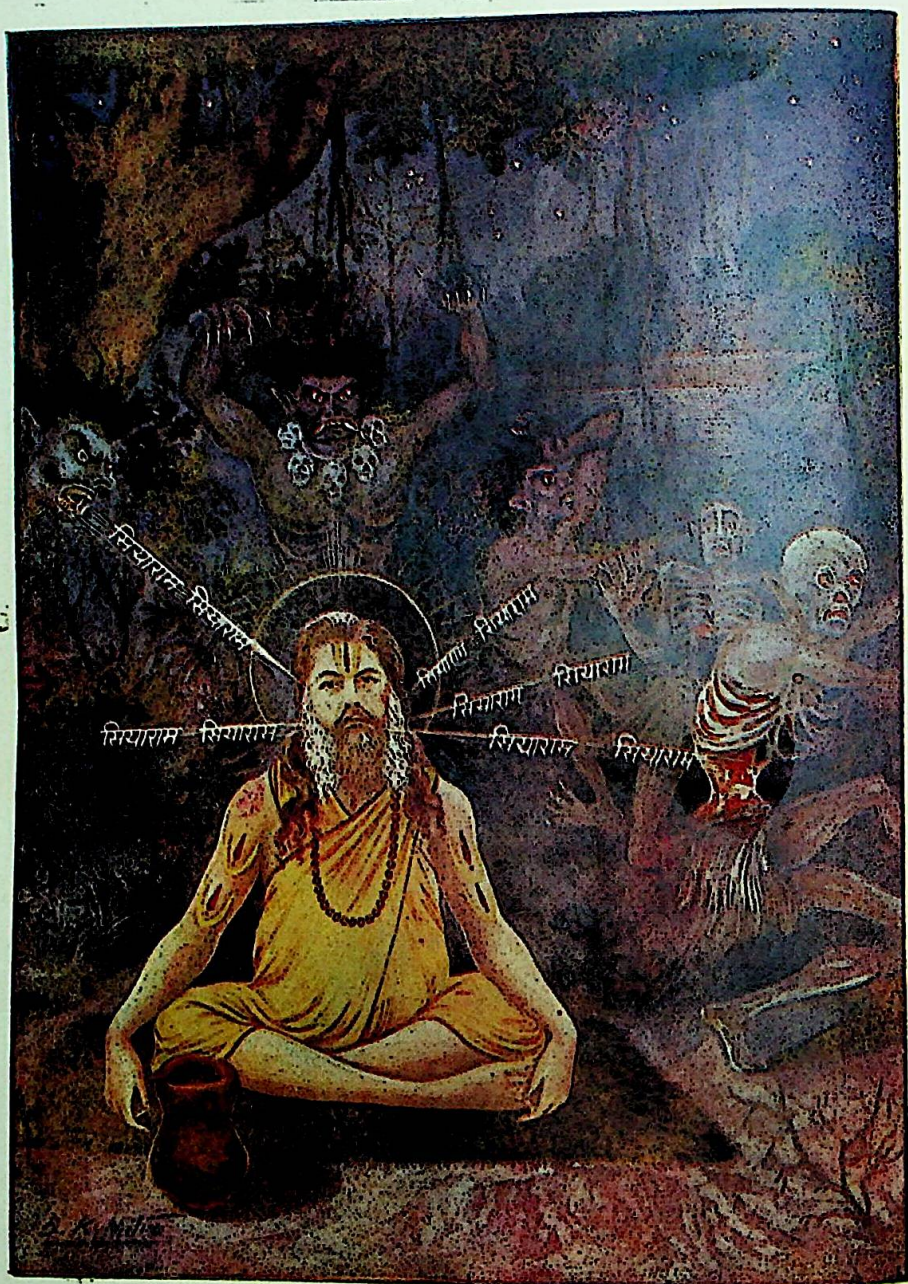
भूत लीला

और कहा, कि इसका ६ मास निरन्तर पाठ करने से किशोरी जी की निश्चित कृपा कटाक्ष प्राप्त होती है। श्री महाराज जी स्तोत्र पाकर बड़े प्रसन्न हुए और पुनः अपनी यात्रा प्रारम्भ की। दो दिन चलते हुए बीत गये फिर कोई भोजन सामग्री उपलब्ध नहीं हुई। मन में विचारने लगे कि प्रभु विश्वम्भर कहे जाते हैं; सब को पवा कर तब पाने का उनका व्रत है। यह विपरीत लीला क्यों हो रही है। क्या यह व्रत अब शिथिल हो गया ऐसा विचारते हुए चले जाते थे, कि आगे भुने हुए चने रास्ते पर विखरे हुए मिले। उसे पाकर बड़े प्रसन्न हुए। विशेष स्वाद पाकर हर्षित हुए। सत्य है प्रभु शून्य जंगल में भी अपने भक्त को भोजन पहुँचाते हैं।

भूत लीला

प्रायः रास्ते में श्री गोस्वामी तुलसीदास जी के जन्म स्थान राजापुर ग्राम को जाना चाहते थे। रास्ते में यमुना नदी के इसी पार अंधेरा हो गया। बड़ा भयानक जंगल और मरघट था। यहां लकड़ी का ठेकदार काम करता था। आप यहीं विश्राम करने के लिए ठहर गये। संध्या को जब ठेकेदार गाँव को लौटने लगा, तो महाराज जी से बोला, कि सरकार गाँव पर चलिये। यहाँ रात्रि को जो रह जाता है, सो सुबह को जीवित नहीं मिलता। यहाँ भूत प्रेतों का निवास है, बड़ा भयानक स्थल है। महाराज जी एकान्तिक वास पसन्द करते थे। उसकी बात स्वीकार नहीं की। प्रभु भरोसे पर वहीं रह गये। वह दो रक्षक नियुक्त कर चला गया। वे रक्षक लोग भी अपनी जान बचाने के लिये पारा पारी चिलम तमाकू का बहाना करके चले गये। अब महाराज जी विल्कुल अकेले उस घमासान जंगल में रह गये। रात्रि को ८ बजे से भूत लीला प्रारम्भ हुई। भूत प्रेत पिसाच वैताल नाना रूप धारण कर भयानक शब्दों को करते हुए मूर्तिमान् हो कर महाराज जी को चारों ओर से आकर घेर लिये। अब महाराज जी बड़े विस्मित हो कर पालटी मार कर बैठे बैठे सरकार का स्मरण कर नाम महाराज का बाण-छोड़ने लगे। जिधर से शब्द आता- हँ-हँ-हँ हूं-हूं-हूं। उधर ही जोर से 'सियाराम, सियाराम नाम का बाण छोड़ते, तो वे मूर्ति कुछ पीछे हट जाती। आगे पीछे दाएँ बाएँ ऊपर सब ओर से भयानक आक्रमण हुआ। परन्तु नाम महाराज के बल से कोई स्पर्श नहीं कर पाया। ५ हाथ दूरी से ही यह नाटक होता रहा। १२ बजे रात्रि तक यह संग्राम हुआ। सब मूर्ति गायब हो गईं। महाराज जी को बहुत श्रम हुआ था कुछ शान्ति प्राप्त हुई। थोड़ी देर में देखते हैं, कि नाव में कुछ आदमी नदी के इस पार चले आते

हैं। कुछ धीरज हुआ, कि अब एक से कई हो जायेंगे। परन्तु आश्चर्य से देखते हैं, कि नाव पार लगते २ वे सब प्राणी भयानक जन्तु भैंसादिक का रूप धारण कर बड़े चिक्कार शब्द से इनके ऊपर धायमान हुए, यह लोग उनके नायक और सरदार थे। दायें बायें ऊपर नीचे आगे पीछे चारों ओर पहिले की भाँति हाँऊ २ शब्द के साथ अपार मुख बढ़ाते हुए आक्रमण किये और यहाँ चारों ओर मुख फेर २ उच्च स्वर से नाम का अस्त्र उन पर चलता रहा। इससे वे इनको छू तो न सकते थे, परन्तु बड़े २ भयानक शब्दों और रूपों से भय दिखाते। यह संग्राम प्रायः २ बजे तक चला। आखिर महाराज जी थक गये। श्री हनुमान जी की शरण में गये और कहा 'कि साधु संत के तुम रखवारे।' अन्जनी नन्दन जी का स्मरण आते ही उनका भय छूट गया, निद्रा आ गई। उपद्रव शान्त हो गया। प्रातः जागे नाम गर्जन किया। शरीर में रोमञ्च हो गया। नित्य क्रिया से निवृत हो नाम रटने लगे। बड़े सवेरे ही ठेकेदार पहुँचा। इनको जीवित देख बड़े ही आश्चर्य में पड़ गया। सिद्ध महात्मा समझ चरनों में पड़ा बस इतने में बड़ा मेला लग गया, गाँव के लोग आकर फूल बरसाने, माला पहिनाने और आरती पूजा करने लगे। महाराज जी ने नाँव माँगी। लोगों ने उतराई में उस स्थान की भूत बाधा हटजाने का वरदान माँगा। महाराज जी ने कहा कि जहाँ, हनुमान् जी का फेरा एक बेर लग जाता है, वहाँ से भूत बाधा सर्वदा के लिये नष्ट हो जाती है। इतना कह कर वह पार उतर गये। और उस स्थान की भूत बाधा सदा के लिये नष्ट हो गई। बोलो भगवान् और उनके प्यारे भक्तों की जय।

अत्रि मुनि मिलन

आप वहाँ से चल कर राजापुर पहुँचे। एक ब्राह्मण के घर गुसाईं जी की हस्त लिखित रामायण 'अयोध्या काण्ड' के दर्शन किये। एक रात्रि निवास कर चित्रकूट की यात्रा की। वहाँ पहुँच कर नियम किया, कि जब तक श्री सीताराम जी महाराज के दर्शन न हो जायेंगे तब तक चित्रकूट न छोड़ेंगे। ऐसा प्रण कर महा वैराग्य युक्त हो अखन्ड नाम स्मरण करते हुये विचरने लगे। कुछ दिन के पश्चात् एक दिन आप अनसुइया जी पहुँचे, यहाँ पर प्रायः सिंह विचरते थे। सिंह आने पर आप वृक्ष पर चढ़ जाते और वहीं रात्रि को सो जाते। एक दिन आप गंगा जी के तट पर शिला पर बैठे हुए थे। इतने में एक वृद्ध तेजोमय दिव्य महात्मा कमन्डल, हाथ में लिये जल लेने को खड़ाऊँ पहिने हुए नीचे उतरे। महाराज जी ने दौड़ कर प्रणाम किया, और चरणों में गिर गये। महात्मा जी-शिलापर बैठ गये। और बहुत हर्ष पूर्वक आशीर्वाद दिया। बड़ा रहस्य मय सत्संग हुआ, चित्रकूट
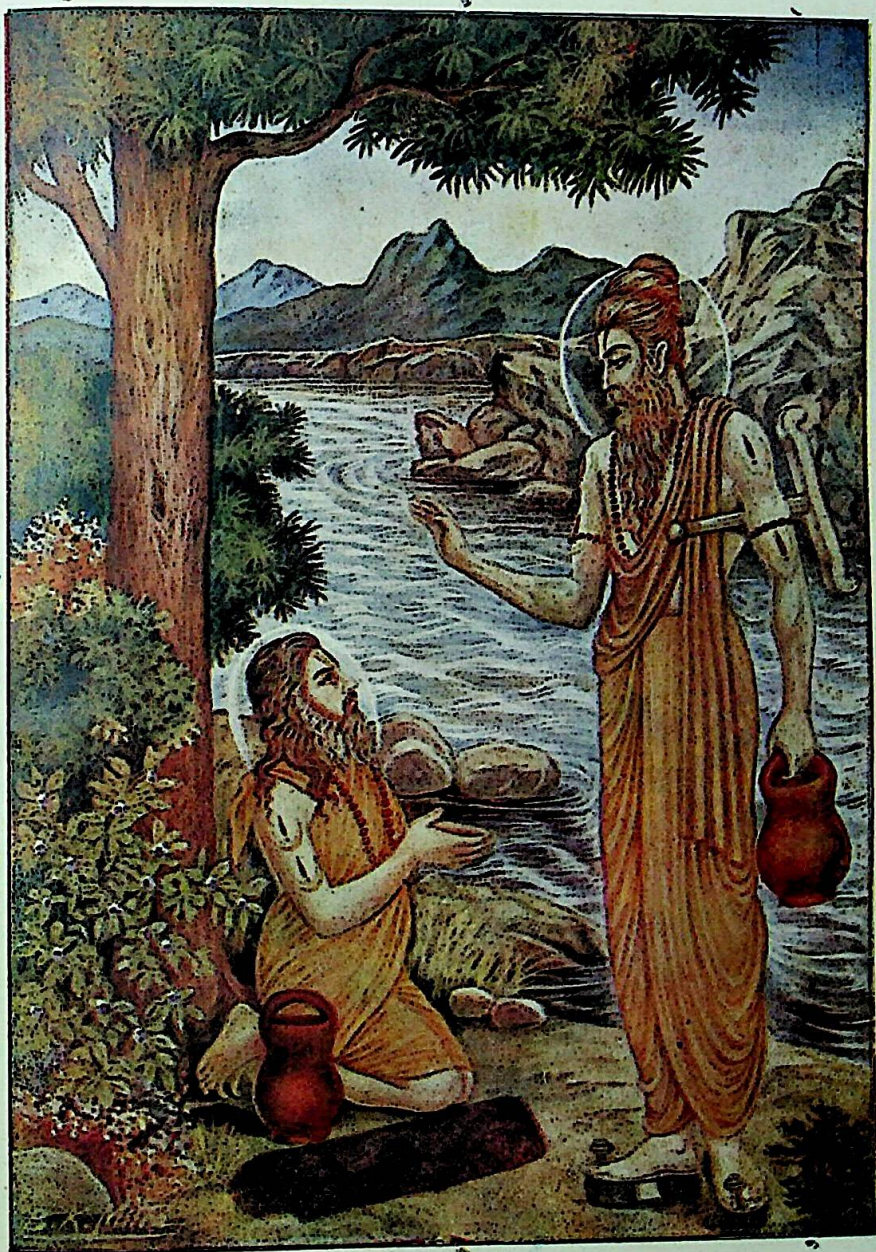
अत्रिमुनि मिलन

के सब दिव्य गुप्त प्रगट तीर्थों के महिमा महात्म्य बताते हुए दिग्दर्शन कराया, और कहा, कि "सरकार यहाँ १२ वर्ष विहार किये हैं, और कृपा पात्रों को अब भी अनुपम झाँकी होती है।" महाराज जी ने कहा, कि सरकार हम को भी श्री युगल सरकार के दर्शन साक्षातकार का लाभ कब प्राप्त होगा। महात्मा जी बोले, कि आप को श्री मिथिला धाम में ज्ञान कूप पर प्रत्यक्ष कृपा होगी। और कहा, कि यद्यपि श्री अवध चित्रकूट मिथिला में आप सर्वत्र विहार करते हैं। परन्तु श्री मिथिला जी विशेष गुप्त नित्य श्री युगल सरकार की अखंड विहार स्थली है। श्री जानकी जी परम अह्लादनी शक्ति को उत्पादन करने वाली हैं। उनकी महिमा महात्म्य सरकार के कृपा पात्र विरले ही संत जानते हैं। मिथिला जी में भी श्री विहारकुन्ड, सरकार के विहार करने का मुख्य स्थल है। इस सबका सम्यक् भेद तुमको श्री जानकी जी के परम कृपापात्र (श्री सीतामढ़ी निवासी) श्री सिद्ध-बाबा से मिलेगा, आप निःस्सन्देह मिथिला जी चले जाइये। इतना कह कर महात्मा जी चुप हो गये, और 'मिथिले, मिथिले' कह कर आनन्द में भर गये। श्री महाराज जी ने फिर विनय किया, कि सरकार कुछ कृपा का अवलम्ब मिले। महात्मा जी बोले कि नाम से बढ़ कर कोई अवलम्ब नहीं सो तुम में भरपूर है। प्रश्न किये हो, तो श्री अगस्त जी द्वारा सुतीक्ष्ण जी को बताया हुआ सविधि श्री जानकी अष्टोतर शतनाम तुमको बताता हूँ जिसके सविधि सेवन से ४० दिन में ही अभीष्ट की सिद्धि होती है, वह इस प्रकार है:—

अथ श्री जानकी अष्टोतर शतनामानि

* अगस्त्य उवाच *

एवं सुतीक्ष्ण! सीतायाः कवचं ते मयेरितम्।
अतःपरंश्रृणुष्वान्यत्सीतायाः स्तोत्रमुत्तमम् ॥ १ ॥
यस्मिनष्टोतर शतं सीतानामानि सन्तिहि।
अष्टोत्तरशतं सीतानाम्नां स्तोत्रमनुत्तमम् ॥ २ ॥
ये पठन्ति नरास्त्वत्र तेषांच सफलोभवः।
तेधन्या मानवा लोके ते वैकुण्ठंव्रजन्तिहि ॥ ३ ॥

ॐ अस्यश्रीसीता नामाष्टोतर शतमंत्रस्यागस्ति ऋषिरनुष्टुप्छन्दोरमेति-बीजं मातुर्लिंगीतिशक्तिः पद्माक्षजेतिकीलकमवनिजेत्यस्त्रंजनकजेतिकवचं मुलकासुरमर्दिनीतिपरमोमंत्रः श्रीसीताराम प्रीत्यर्थे जपेविनियोगः। अथ-करन्यासः श्रीसीतायै अंगुष्ठाभ्यां नमः ॐरमायैतर्जनीभ्यांनमः ॐमातुर्लिंग्यै-

मध्यमाभ्यांनमः ॐपद्माक्षजायैअनामिकाभ्यांनमः ॐअवनिजायै कनिष्ठिकाभ्यां-नमः ॐजनकजायै करतलकरपृष्ठाभ्यांनमः । अथ हृदयादिन्यासः ॐश्रीसीता-यैहृदयायनमः ॐरमायैशिरसे स्वाहा ॐमातुलिंग्यैशिखायै वषट् ॐपद्माक्षजा-यैनेत्राभ्यांवषट् ॐजनकजायैअस्त्रायफट् ॐमूलकासुरमर्दिन्यै ॥ इतिदिग्वंधः अथध्यानम् ॥

वामांगेरघुनायकस्य रुचिरेया संस्थिता शोभनाया,
विप्राधिप यानरम्यनयनाया विप्रलापानना ।
विद्युत्पुंजविराजमानवसनाभक्तार्त्तिसंखण्डना,
श्रीमद्राघवपादपद्म युगुलन्यस्तेक्षणा सावतु ॥ ४ ॥
श्रीसीता जानकी देवी वैदेही राघवप्रिया ।
रमाऽवनिसुता रामा राक्षसान्त प्रकारिणी ॥ ५ ॥
रत्नगुप्ता मातुलिंगी मैथिलीभक्ततोषदा ।
पद्माक्षजा कंजनेत्रास्मितास्या नुपुरस्वना ॥ ६ ॥
वैकुण्ठनिलयामा श्रीर्मुक्तिदाकामपूरणी ।
नृपात्मजाहेमवर्णा मृदुलांगी सुभाषिणि ॥ ७ ॥
कुशाम्बिका दिव्यदा च लवमाता मनोहरा ।
हनुमद्वन्दितपदा मुग्धा केयूर धारिणी ॥ ८ ॥
अशोकवन मध्यस्था रावणादिक मोहनी ।
बिमान संस्थिता सुभ्रूः सुकेशीरसनान्विता ॥ ९ ॥
रजोरूपा सत्त्वरूपा तामसी वन्हि वासिनी ।
हेममृगासक्तचित्ता वाल्मीकाश्रम वासिनी ॥ १० ॥
पतिव्रता महामाया पीत कौशेय वासिनी ।
मृगनेत्राच बिंवोष्ठी धनुर्विद्या विशारदा ॥ ११ ॥
सौम्यरूपा दशरथस्नुषाचामरवीजिता ।
सुमेधादुर्हिताद्व्यिारूपात्रैलोक्य पालिनी ॥ १२ ॥
अन्नपूर्णा महालक्ष्मीर्धीलज्जाच सरस्वती ।
शांति पुष्टिःशमागौरीप्रभायोध्यानिवासिनी ॥ १३ ॥
बसन्त शीतला गौरीस्नान संतुष्टमानसा ।
रमानाम भद्र संस्था हेमकुम्भपयोधरा ॥ १४ ॥
सुरार्चिता धृतिःकांतिः स्मृतिर्मेधा विभावरी ।
लघूदरावरारोहा हेमकंकण मंडिता ॥ १५ ॥
श्रीरामसेवनरता रत्न ताटंक धारिणी ।
श्रीरामसेवनरता रत्न ताटंक धारिणी ॥ १६ ॥
रामबामांगसंस्था च रामचन्द्रैकरंजिनी ।
सरयू जलसंक्रीडा कारिणी राममोहिनी ॥ १७ ॥

सुवर्ण तुलिता पुण्या पुण्य कीर्तिः कलावती।
कलकण्ठा कम्बुकण्ठा रम्भोरूगजगामिनी ॥ १८ ॥
रामार्पित मनाराम वंदिता रामवल्लभा।
श्रीरामपद चिह्नांका रामरामेति भाषिणी ॥ १९ ॥
रामपर्य्यंङ्क शयना रामांघ्रिक्षालिनी वरा।
कामधेन्वन्नसंतुष्टा मातुलिंगकर धृता ॥ २० ॥
दिव्यचन्दनसंस्था श्रीमूलकासुर मर्दिनी।
एवमष्टोत्तरशतंसीता नाम्नांसुपुण्यदम् ॥ २१ ॥
येपठन्ति नराभूम्यां ते धन्याः स्वर्गगामिनः।
अष्टोत्तरशतंनाम्नां सीतायाः स्तोत्रमुत्तमम् ॥ २२ ॥
जपनीयं प्रयत्नेन सर्वदाभक्ति पूर्वकम्।
सन्तिस्तोत्राण्यनेकानिपुण्यदानिमहान्तिच ॥ २४ ॥
नानेन सदृशानिह तानी सर्वाणिभूसुर।
स्तोत्राणामुत्तमंस्तोत्रंभुक्तिमुक्ति प्रदंनृणाम् ॥ २५ ॥
एवं सुतीक्ष्ण ते प्रोक्तमष्टोत्तरशतं शुभम्।
सीतानाम्नांपुण्यदंच श्रवणान्मंगलप्रदम् ॥ २५ ॥
नरैः प्रातः समुत्थाय पठितव्यं प्रयत्नतः।
सीतापूजनकालेपि सर्ववांछित दायकम् ॥ २७ ॥ इति

यह पाकर महाराज जी परमान्दित हुए। और चरणों में गिरे। परिचय पूछा। महात्मा जी खड़े हो गये और कुछ आगे बढ़कर कहा, कि "मैं अत्रि हूँ" फिर महाराज जी ने हर्षित होकर चरण पकड़ना चाहा तो देखा कि अन्तर्ध्यान हो गये। यह बड़ी आश्चर्य मयी घटना हुई। अब आप के मन में मिथिला जाने की याचना तीव्र रूप से जाग्रित हुई। एक दिन आप श्री जानकी कुण्ड पर विराजमान थे। मन्द २ स्वर से अनुभव अनुराग से यह पद गान कर रहे थे :—

भजु मन जनक लली गुणधाम !
उमा रमा रति शची शारदा, सेवत जेहि वशुयाम ॥१॥
पालत हरत सृजत जेहि रुख लखि, विधि हरि हर तिहुँ ग्राम।
जुगवत कृपा कटाक्ष रहहिं नित, रघुकुल मणि घनश्याम ॥२॥
सदा स्वतन्त्र सकल उर वासिनि, अखिल लोक अभिराम।
तदपि अधिक जन की रुचि राखहिं, सब विधि पूरण काम ॥३॥
जेन केन विधि विवशहु बारक, जपत जीह जेहि नाम।
पावत अधमौ अभय ऊँच पद, गति मति परम ललाम ॥४॥
ऋधि सिधि निधि सब चरण पलोटहिं, मुक्ति भुक्ति बहु बाम।
विपुल रूप धरि सिय आयसु सिर, व्यापि रहीं सब ठाम ॥५॥

पालहिं पोषहिं नाम जापकनि, सिय सम हरि भवधाम।
इच्छित फल जन लहहिं जाँय जहँ, बिनु कौड़ी बिनु दाम ॥६॥
प्रगट प्रभाव विलोकहु जनहित, फरत बबूरनि आम।
श्री 'प्रेमलता' ते अन्ध अभागी, सिय तजि सेवत चाम ॥७॥

यह पद "श्री दिवाकर दास" जी महात्मा जो कि संयोग से घाट पर ही विराजते थे, सुनकर गद्गद हो गये, हृदय उछलने लगा, आप से रहा नहीं गया, श्री महाराज जी के समीप जाकर दंडवत किया, सत्संग करने की इच्छा प्रगट की, बहुत बढ़ियाँ सत्संग हुआ, महात्मा जी ने आप का परिचय पूछा, तो आप मुस्कराते हुये बोले :—

स्वकथित परिचय

संस्कार करि पंच मम, जड़ नरत्व अभिमान्।
नाशेउ दुख प्रद पलक में, श्री सद्गुरु भगवान् ॥१॥
बार बार बलि जाउँ मैं, सद्गुरु दीन दयाल।
नाम रटाय लखायेऊ, सिय पिय रहस रसाल ॥२॥
लख चौरासी योनि में, त्रय लिङ्गी तनुधारि।
भोगेउ दुख बहुकाल अति, सद्गुरु लीन्हि उबारि ॥३॥
श्री सियलाल सु शरण अरु, 'प्रेमलता' दुइ नाम।
दीन्हि एक तनु थूल कर, इक आत्मीय ललाम ॥४॥
श्री रस राज शृँगार कर, भाव सुखद सम्बन्ध।
दीन्ह दयाकरि सद्गुरू, नाशि जगत दुर्गन्ध ॥५॥
अष्ट याम की भावना, करन कहेउ रटि नाम।
सद्गुरु परम उदार मम, रसिक राज सुखधाम ॥६॥
सरयूतट लक्ष्मण किला, तहँ, सिय बाग सुहाग।
अवध धाम गुरु कीन्ह मोहिं, शिष्य सहित अनुराग ॥७॥
'श्री रामबल्लभा शरण' मम, सद्गुरु परम सुजान।
निर्मायेउ पुनि सरयु तट, सद्गुरु 'सदन' स्थान ॥८॥
नाम रटन के भेद मोहिं, अरु उपासना रीति।
बार बार बहु भाँति प्रभु, समझायेउ करि प्रीति ॥९॥
काव्य करन को दीन्हि पुनि, आज्ञा श्री गुरु देव।
सबहिं सुधारी मोरि प्रभु, मेटि अटर अवरेव ॥१०॥
द्विजकुल अरु जड़ देह कर, रहेउ कछुक अभिमान।
नाशेउ आवा गमन प्रद, देइ सु आतमज्ञान ॥११॥

कर्म ज्ञान वैराग्य वर, जप तप साधन ध्यान ।
कीन्हेंउ पूजा पाठ बहु, गयेउ न तन अभिमान ॥१२॥
श्री हनुमत ढिग बैठि तब, लगेउँ रटन सियराम ।
घरही में लघु वयस मधि, लय लगाय वशुयाम ॥१३॥
भयेउ काल वश मातु पितु, तब मोहिं देखि स्वतंत्र ।
ब्याह हेतु द्विज जाति के, लगेउ रचन षड़यंत्र ॥१४॥
श्री हनुमान सु सन्त कर, रूप धारि मोहिं पाहिं ।
कहेउ ब्याह दुख रूप लखि, तजि रमि नामहि माँहिं ॥१५॥
बचन शीस धरि त्यागि सब, घर महि मन्दिर बाग ।
चित्रकूट लखि आयेउँ, लखि उपजेउ अनुराग ॥१६॥
निवसि तहाँ सियराम रटि, कछु दिन बितइ बहोरि ।
गयेउँ अवध प्रभु प्रेरित, सुधरी जहँ सब मोरि ॥१७॥
श्री सद्गुरु अस पायेऊँ, जस नहिं काहुइ केर ।
सन्तभक्त माला सुमधि, मानहु सुघर सुमेर ॥१८॥
गुरुबिन भटकेउँ बहुत दिन, चहुँदिशि सहसनि कोश ।
कियेउँ कर्म साधन विपुल, भयेउ न उर संतोष ॥१९॥
श्री सियराम सु नाम की, रटना श्री हनुमान ।
सुनि सद्गुरु सु मिलायउ, रघुपति रूप सुजान ॥२०॥
श्री मत हनुमत लाल की, कृपा कटाक्ष सु पाय ।
सद्गुरु मिलेउ सु खिलेउ उर, कमल अमल सुखदाय ॥२१॥

यह चरित्र सुन महात्मा दिवाकर दास जी बड़े प्रसन्न हुए, आपस में स्नेह बढ़ गया, बातों २ में मिथिला जाने का प्रसंग छिड़ा, महात्मा जी बोले कि हम तो कल ही जाने का विचार कर रहे हैं। चलिये बड़ा अच्छा साथ रहेगा, बस तुरन्त दोनों ने श्री मिथिला जी के लिये सहर्ष प्रस्थान किया ।

श्री मिथिला जी में

कुछ दिन के बाद आनन्द पूर्वक दोनों मूर्ति श्री सीतामढ़ी लक्ष्मणा जी के तट पर श्री सिद्ध बाबा की कुटिया पर पहुँच गये। इन दिनों में श्री महाराज जी का श्री रामायण जी के नवाह पाठ और सवालक्ष सियाराम नाम रटने का नित्य का नियम था। सोई नेम श्री सिद्धबाबा लिये हुए थे। एक दूसरे का भजन वैराग्य वृति और साधन तथा व्यवहार देखकर दोनों में बड़ा प्रेम बढ़ा, महाराज जी सिद्ध बाबा की गुरुवत सेवा करने लगे। कुछ

समय के बाद श्री सिद्ध बाबा, महाराज जी को मिथिलाजी के गुप्त और विहार स्थल के रहस्य व भेदभाव दिखाने व बताने लगे, श्री महाराज जी ने आपसे विनय किया, कि सरकार मधुकरी वृति और गुदरी व टोप आदिक प्रदान करने की अनुकम्पा हो सिद्ध बाबा श्री किशोरी जी के परम कृपा पात्र थे, आप की उनसे खूब बात चीत प्रत्यक्ष में होती रही। आपने किशोरी जी से महाराज जी की विनय सुनाई, श्री किशोरी जी मधुर वाणी में बोलीः—'कि यह हमारी परम प्यारी' 'प्रेमलता नाम की सखी अवतार हमारी इच्छा से ली है, इसके द्वारा नाम व भेष का तथा अपने धाम को उजागर कराने की इच्छा है, इसलिये इनको गुप्त रहस्य हर प्रकार के दिये जा सकते हैं," यह आज्ञा पाकर श्री महाराज जी का स्वरूप और उन्हें कृपा पात्र समझ अपने पास हर्ष और प्रेम पूर्वक बुलाया, और प्रसन्न होकर मधुकरी वृत्ति गुदरी टोपादि धारण करा कर सब गुप्त रहस्यों का (जिनको इन्हें जानने की इच्छा थी) वर्णन कर सब भेद भाव तथा श्री मिथिला जी के, ज्ञान कूप, विहार कुंड विद्याकूप दुग्ध-मती इत्यादि का अलौकिक महात्म्य वता कर इनमें विचरने की आज्ञा दी, श्री महाराज जी ने कुछ आधार प्रदान करने की प्रार्थना की। आपने श्री जानकी कृपा कटाक्ष स्तोत्र प्रदान किया, और कहाः—

श्री जानकी कृपा कटाक्ष स्तोत्रम्

मुनीन्द्रवृन्दवन्दिते ! त्रिलोकशोकहारिणि !
प्रसन्नवक्त्रपंकजे ! निकुंज भू विलासिनि !
विदेह भूप नन्दिनि ! नृपेन्द्र सूनु संगते !
कदा करिष्यसीह मां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥१॥
अशोकवृक्षवल्लरीवितानमण्डप स्थिते !
प्रवालजालपल्लवप्रभारुणांघ्रिकोमले !
वराभयस्फुरत्करे ! प्रभूतसंपदालये !
कदा करिष्यसीह मां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥२॥
तड़ित्सुवर्णचम्पकं ! प्रदीप्तगौरविग्रहे !
मुखप्रभापरास्तकोटिशारदेन्दु मण्डले !
विचित्रचित्रसञ्चरच्चकोरशावलोचने !
कदा करिष्यसीहमां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥३॥
अङ्गरङ्ग मङ्गलप्रसङ्गरङ्गरूभ्रुवा,
सुविभ्रिमत्ससभ्रमदिगन्तवाणपत्तनैः।
निरन्तरं वशीकृतावधेशभूपनन्दने !
कदा करिष्यसीहमां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥४॥

मदोन्मदादि यौवने प्रमोदमान मण्डिते !
प्रियानुराग रंजिते क्रियाविलास मण्डिते !
अनन्त कुंजराजि कामकेलिकोविदीतमे !
कदा करिष्य सीह मां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥५॥
विशेषहावभावधीरवीरहास भूषिते !
प्रभूतशांतकुंभकुंभकुंभिकुंभ सुस्तनि !
प्रशस्त मंद हास्य चूर्ण पूर्ण सौख्य सागरे !
कदा करिष्यसीह मां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥६॥
मृणालवालवल्लरीतरङ्ग रङ्ग दोर्तते !
लताग्रलास्यलोलनीललोचनावलोकने !
ललल्लुलन्मिलन्मनोज मुग्ध मोहकावृते !
कदा करिष्यसीह मां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥७॥
सुवर्ण मल्लिकांचिते त्रिरेखकम्बु कण्ठके !
त्रिसूत्रमंगली गुणाभि रत्न दूर दीपिते ।
सलील नील कुन्तले प्रसुत गुच्छ गुम्फिते !
कदा करिष्यसीह मां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥८॥
नितम्ब विम्ब लम्बमान पुष्पमेखलागुणे !
प्रशस्त रत्न किङ्किणी कलाप मध्य मंजुले ।
करीन्द्रशुण्डदण्डिकावरोरु शौभ गौरके !
कदा करिष्यसीहमां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥९॥
अनेकमंजु नाद मंद नुपुर स्वनि ! सुराज !
राज राज हँस वंश निष्कूणोति गौरवे !
बिलोल हेम वल्लरी विडम्ब चारु चक्रमे !
कदा करिष्यसीह मां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥१०॥
अनन्त कोटि विष्णु लक्ष्म शम्भु पद्मजार्चिते !
हिमाद्रिजा पुलोमजा विरंचिजावर प्रदे !
अपार सिद्धिबृद्धि दिग्धसत्पदाँगुलीनखे !
कदा करिष्य सीह मां कृपा कटाक्ष भाजनम् ॥११॥
महेश्वरी क्रियेश्वरी सुधेश्वरी सुरेश्वरी !
त्रिवेद भारतीश्वरी त्रिलोक शासनेश्वरी ।
प्रमोद काननेश्वरी रमेश्वरी क्षमेश्वरी
विनोद काननेश्वरी विदेहजानमोस्तुते ॥१२॥
इतीदमद्भूतस्तवं निशम्य भूमि नन्दिनी,
करोति संततं, जनं कृपा कटाक्ष भाजनम् ।
भवत्यनेकसंततिर्त्रिरूपकर्मनाशनं,
तथा भवेन्नृपेन्द्रसूनुमण्डल प्रवेशनम् ॥१३॥

एकायां व नम्यां वा दशम्यामपि शुद्धधीः।
एकादश्यां त्रयोदश्यां यः पठेत्साधकः स्तवम् ॥
यंयं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोत्यऽसंशयः।
सीता कृपा कटाक्षेण भक्तिः स्यात्प्रेमलक्षणा ॥
नाभिमात्रोरूमात्रेचहृन्मात्रेकण्ठ मात्रके।
सीता कुण्ड जले स्थित्वा यः पठेत्साधकः स्तवम् ॥
तस्य सवार्थ सिद्धिः स्यात्वाक्य सामर्थ्यंता लभेत्।
ऐश्वर्ष लभते साक्षाद्दशा पश्यति जानकी ॥
सानुसाक्षात्क्षणादेवतुष्टा दत्तमहावरा।
सानु पश्यति नेत्राभ्यां साप्रिया श्याम सुन्दरः ॥
नित्य लीला प्रवेशं च ददाति श्री रघुतमः।
नातः परतरं स्तोत्रं वैष्णवानां विधीयते ॥

यह अलौकिक स्तोत्र पाकर महाराज जी बड़े प्रसन्न हुए। हर्ष पूर्वक दण्डवत किया और मिथिला धाम की यात्रा की।

श्री सीताराम जी का दर्शन

अब आपको लगभग प्रत्येक दिन खूब बढ़ियाँ बढ़ियाँ स्वप्न, रहस्य तथा भेद, भाव, सरकार, तथा श्री मिथिला जी, के श्री किशोरी जी, की दिव्य अनुकम्पा से होते थे। परन्तु आपका मन इन छोटी छोटी सिद्धियों और कृपायों पर ही सन्तुष्ट और लुब्ध न रह जाता। श्री युगल सरकार की शृङ्गारित छवि के साक्षात् दर्शन करने की प्रबल उत्कण्ठा उत्पन्न हुई। शरीर छूटे या रहे परन्तु उद्देश्य की पूर्ति अवश्य हो। अर्थात् प्राण की बाजी लगादी, अन्न जल भी कभी कभी छोड़ देते। पुरी के चारों ओर विचरते हुए कभी रत्न सागर पर बैठ जाते। कभी अग्नि कुण्ड, विहार कुण्ड, ज्ञान कूप, विद्या कूप और दुग्धमती आदि स्थलों में विचरते फिरते। यहाँ के इस समय के बहुत चरित्र तथा घटनायें हैं, जिनमें से कुछ चमत्कार खण्ड में आगे लिखी जायेंगी। दिन रात नाम रटते हुए, यही उज्ज्वल तीव्र उत्कंठा लगी रहती, कि दर्शन कैसे होय। आप यह पद बराबर गाते थे :—

सिया जू मोंहि, अब न परै टुक चैन।
कृपा दृष्टि अवलोकि लड़ैती, जनक लली सुख दैन ॥ १ ॥
सरसत शोक मोह ममता भ्रम, सोचत हौं दिन रैंन।
करनी कुटिल विचारि मनहिं निज, तपत हृदय मम ऐन ॥ २ ॥
बिनु कारण हित विरद तोर जग, वदत सन्त श्रुति बैन।
प्रेमलता पर द्रवहु न केहि लगि, राम सु प्रिया सुखैन ॥ ३ ॥

श्री स्वामिनी जी बड़ी कृपालुनी हैं। वे अपने जन को कब विरह जन्य ताप से तपित देख सकती हैं। वे तो जन को स्वर्ण के समान तपाकर शुद्ध करने के लिये कुछ काल अदृश्य थी। एक दिन आप ज्ञानकूप पर बैठे हुए नाम रटते रहे। सायंकाल का समय था। आस पास में कोई जीव जन्तु मानुष दिखाई न पड़ता था। एकाएक आश्चर्य जनित चरित्र देखते हैं। ऋतु बदली–दृश्य बदला–वृक्षों का आकार बड़ा हुआ। फल फूल से संयुक्त होकर सुगन्ध देने लगे। भूमि पुल पुला कर मृदुल दिव्य और पीत रंग की दिखाई पड़ने लगी। मणिमय सोपानों से युक्त सरोवर और चारों ओर अमराई दीखने लगी। सामने स्वर्ण मयी रत्न जटित मणिमय नव खण्डा अति प्रकाशमान दिव्य महल दृष्टिगोचर होने लगे। महलों से सुरीली राग रागिणियों के शब्द व झंकार सुनाई देने लगी। ध्वजा पताका कँगूरों पर फहराने लगीं। शीतल मन्द सुगन्ध मय वायु चलने लगी। अनोखा अलौकिक दृश्य था। श्री दुग्धमती की ओर से सहस्त्रों सखियों की झुन्ड में श्री युगल सरकार को नख सिख श्रृङ्गारित अपूर्व तेजोमयी श्याम गौर छटा युक्त मूर्ति गल बहियाँ, दिये हुए मन्द २ मुस्कान संयुक्त–गज व मराली चाल से इधर की ओर तेज पुञ्ज के संयुक्त चले आते हैं। कैसी छवि है:—

स्यामल गौर अंग अति पावन * सुखमा बहु रति काम लजावन ॥
सुभग चन्द्रिका क्रीट ललामा * असित लटैं लटकें प्रद कामा ॥
करण फूल कुन्डल झलकाहीं * जटित महा मणि बरनि न जाहीं ॥
नासा मनि लटकत नथ हीरा * हेरत हरत हृदय की पीरा ॥
पीत तिलक शुभ भालनि सोहत * लाल विन्दु श्रीसह मन मोहत ॥
करुणा कृपा भरे चहुँ लोचन * भौंहैं बंक तापत्रय मोचन ॥
हँसनि चारु द्युति दसनन केरी * हरति जनन उर केरि अँधेरी ॥
कलित कंठ कंठी मणि माला * हार हमेल सु हीरनि जाला ॥
चुरीं बलय अङ्गद भुज बाजू * सजी मनोहर अनुपम साजू ॥

सारी नील सु जरकसी, कंचुकि तन अनुहार।
जामा पट्टुका पीत अरु, मोतिन गुथेउ किनार ॥

कटि किंकिणि लहँगा पट पियरा * राजत दोउ दिसि भावत हियरा ॥
भूषन युत चहुँ चरन सुहावन * सोभा कहि न जाय अति पावन ॥
संग सखी गन सुभग सयानी * सेवहिं अमित कर्म मन बानी ॥

यह मधुर मनोहर अतीव सुन्दर झाँकी के दर्शन करते ही देह की सुध बुध भूल गये। शरीर रोमाञ्चित हो गया, हृदय गद्गद हो गया, मुख से वाक्य बन्द हो गये। दौड़ कर दंड की नाईं, त्राहिमाम् पाहिमाम् कहते हुए पृथ्वी पर गिर पड़े। कृपा सागर दीनबन्धु भक्त वत्सल प्रभु ने झट समीप आकर करुणा हस्त बढ़ा, उठा कर अपने दीन जन को खड़ा किया।

नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित हो चली, रोमाञ्चित हो रुग्ध वाणी से स्तुति करने लगे :—

जय सिय रघुराई, जन सुखदाई, कीर्ति-सुहाई-जगछाई।
गावहिं श्रुति शेषा ब्रह्म सुरेशा, शमन कलेशा गति दाई॥
जय जय सुर भूपा अद्भुत रूपा, छबि सु अनूपा अधिकाई।
जय युगल सु जोरी विमल अखोरी, श्यामल गोरी मन भाई॥
जय जय प्रियप्यारी प्रभु अवतारी, महिमा भारी विस्तारी।
जय जय जगकारन भव भय टारन, पावहिं पार न श्रुतिचारी॥
जय बहु तनुधारी सँग सुकुमारी, जनक दुलारी अतिप्यारी।
सेवहिं अलिवृन्दा पूरन चन्दा, दोउ सुख कन्दा मुदकारी॥
सुर नर मुनि झारी श्रृष्टि अपारी, शक्ति तुम्हारी तियरूपा।
तेहि सङ्ग विहारा रूचि अनुसारा, करहु उदारा सियभूपा॥
यह भेद सु गूढ़ा लखहिं न मूढ़ा विषय अरूढ़ा अघ कूपा।
प्रभु गति निरुपाधी हरन कु व्याधी, वरणत साधी श्रुतिचूपा॥
जय परम सुजाना देउ सुग्याना, जीवनि दाना हरिमाना।
जय करुणा सागर सब गुन आगर, नट नागर श्री भगवाना॥
निज जन पर दाया करि रघुराया, हरहु स्वमाया अज्ञाना।
निज रूप सु पावहिं येहि पुर आवहिं, प्रभुहिं रिझावहिं विधि नाना॥

तुम्ह समर्थ सब भाँति प्रभु, हेतु रहित जन पाल।
देहु भगति अनपायनी, संत संग सब काल॥
नरता धारी आतमा, परि जड़ माया फन्द।
ताहिं निवारि सु शरण निज, दीजै सिय रघुनन्द॥

इस प्रकार स्तुति कर वरदान माँगि आप पुनः चरणों पर गिर पड़े। सरकार बोले एवमस्तु। तब स्वामिनी जू मस्तक पर हाथ रख कर मन्द-मन्द मुस्कुराती हुई बोलीं। "हे प्रेमलता! मैं तुम पर परम प्रसन्न हूँ। तुम सुख पूर्वक श्री मिथिला जी में विचरो—हमारा युगल नाम रटो, व रटवाओ, जीवों का उद्धार करो। इस धाम की महिमा महात्म्य का प्रकाश करो। मेरी कृपा से अब तुमको अनेक रहस्य व अनुभव फुरेंगे, उनको सावधानता से मनन करते रहो, अब इतना कष्ट मत उठाओ।" इस प्रकार मधुर वाणी से अमृत वर्षा करती हुई, समाज सहित अन्तर्ध्यान हो गईं। आप अत्यंत विह्वल हो गये। बड़ी देर में शरीर की सुधि आई। वारम्बार पुलकावली सहित उस मधुर छबि का ध्यान करने लगे। तभी से आप को दिव्य, भाव पूर्ण, काव्य की स्फूर्ति होने लगी। जिसके फलस्वरूप १०८ प्रसंग संयुक्त 'श्री सद्गुरु कृपा प्रकाश' ग्रन्थ की दिव्य रचना हुई। जिसके अन्तरगत अनेक प्रकार के रहस्य श्रृङ्गारभाव उपासना, नाम रूप, लीला, धाम, वेष, स्वरूप, आदि की महिमा लगभग

३६००० पद, कवित, सवैया, छन्द, दोहा, और कुन्डलियों, में उपासकों के लिये प्रगट हुए। इस समय के बहुत अनुभव रहस्य और चरित्र हैं—उनमें से कुछ का वर्णन अगले खण्ड में किया जायेगा। कभी २ आप श्री सीतामढ़ी सिद्ध बाबा के दर्शन व सतसंग तथा रहस्य व चरित्र सुनने सुनाने जाते रहे। और परम तीव्र वैराग्य—अखण्ड अहिंनिशि नाम रटना करते हुए, वृक्षों के नीचे वास करते हुए विचरने लगे।

श्री काशी जी म

आप लीला स्वरूपों को साक्षात श्री युगल सरकार की दृष्टि भाव से देखते थे। लीला के बड़े प्रेमी थे, स्वरूपों के दरश, परश, सम्भाषण आदि करने की बहुत इच्छा बनी रहती थी। एक बार श्री काशी जी की लीला मण्डली वहाँ गई। स्वरूप बड़े प्रेम से इनसे बर्ताव करते रहे, और कहा, कि यदि आपको लीला में प्रेम है, तो प्रत्येक वर्ष काशी (रामनगर) लीला में आया करिये। बस इसी वाणी से आपको काशी यात्रा के संस्कार उत्पन्न हो गये। अषाढ़ का महिना था। श्री सिद्ध बाबा से यह इच्छा प्रगट की और आज्ञा माँगी। उन्होंने कहा, कि काशी परम वैष्णव, नाम जापकों में अग्र ग्रन्य भक्त शिरोमणि, श्री शङ्कर जी की नाम पुरी है:—

सो०—मुक्ति जन्म महि जानि, ग्यान खानि अघ हानिकर।
जहँ बस सम्भु भवानि, सो कासी सेइय कस न॥

अवश्य जाओ। वहाँ शङ्कर जी तुम्हारे मनोर्थ पूर्ण करेंगे, और रक्षा करेंगे। श्री हनुमन्त लाल जी की तुम पर बड़ी अनुकम्पा है—वे सदैव तुम्हारे साथ रहते हैं—तुम्हें किसी प्रकार की चिन्ता नहीं। फिर बड़े भाग्य की बात तो यह है कि श्री युगल सरकार ने तुम्हें वहाँ जाने के लिये स्वयं श्री मुख से कहा है। हर्ष पूर्वक जाओ। नाम को कमी न छोड़ना, हर्ष पूर्वक आज्ञा देकर आशीर्वाद दिया। आप हर्षित हो दंडवत कर चल पड़े। साथ में एक संत मिल गये, बहुत सत्संग करते हुये गाड़ी से दोनों रवाना हुए। संत जी ने कहा, महाराज जी, कुछ उपदेश कीजिये, जिससे कल्याण हो। महाराज जी बोले सत्संग और उपदेश क्या है, जो सार है, यही उसी को ग्रहण करना चाहिये:—

॥ सवैया ॥

नाम को स्वाद लियो न सुजीभ ते काहे को साधु भये तजि गेहा।
जाति जमाति विहाय भली विधि नाम सनेही सों कीन न नेहा।
काहे को स्वाँग बनायो फकीर को भावै जो मौज अमीर की येहा।
'प्रेमलता' सियनाम रटे बिनु भोग विरक्त को स्वान की खेहा।

फक़ीर वही रटि नाम तजै तनु वीर वही रन सीस कटावै।
धीर वही निज धर्म तजै न अमीर वही मिलि बाँटि के खावै॥
नीर वही तन ताप हरै गुरु पीर वही रघुवीर मिलावै।
प्रेमलता तक़दीर वही तजवीज तजै नित मौज उड़ावै॥२॥
श्री सियराम रटो निसि वासर ठाठ विरक्त को ठाठि सु अंगा।
मानुष देह को लाभ यही बड़ त्यागि कुसंगति कीजै सुसंगा॥
इन्द्रिन के सुख लागि वृथा जनि छाँड़ि स्वगेह बनावहु ढंगा।
प्रेमलता सिख मानि धरो उर नाम रटो अभिराम अभंगा॥३॥

पढ़ै सवैया ये सु नित, खोलि हिये के नैन।
प्रेमलता सियराम रटि, पावैं गे अति चैन॥

इत्यादि २ बहुत प्रकार का सत्संग करते हुए, काशी जी पहुँच गये। बाबा विश्वनाथ जी व माता अन्नपूर्णा जी के दर्शन किये, फिर श्री गंगा तट पर घाटों पर विचरने लगे। वहीं पर उन्ही लीला स्वरूपों से श्री रामघाट पर पुनः भेंट हो गई, बड़ा हर्ष हुआ। दर्श पर्श संभाषण होने के बाद आश्विन मास में भेंट होने का निश्चय हुआ। अब आप अधिक तर दशाश्वमेघ घाट पर ही टिकने लगे। महादेव नाम का पंडा, आप की बहुत प्रकार से सेवा करने लगा। आप फिर पूर्ववत वृत्ति से विचरने लगे। मधुकरी माँग कर पा लेते रहे।

श्री शिव पार्वती दर्शन अनुभव

एक दिन आप को पूरा उपवास हो गया। कुछ पाने को नहीं मिला। संध्या हो चली। मन ही मन विश्वनाथ जी व अन्नपूर्णा जी को कोसने लगे कि आप यहाँ काशी के राजा और पालन पोषण करने हारे हैं। किसी को अन्न की भोजन की कमी नहीं रहने देते। परन्तु यह व्रत और प्रभाव शिथिल होने का अनुभव हो रहा है? मैं आप के राज्य में इस प्रकार भूखा रहूँ? यह तो उचित नहीं दिखाता। बस यह करुणा पुकार भूत भावन भक्त वत्सल दयालु शङ्कर जी के कानों में तुरन्त पड़ी। आप नाम जापक भक्त को अपनी पुरी में कब दुखी देख सकते हैं। तुरन्त एक वृद्ध ब्राह्मण का रूप धारण कर सत्तू और छोटे छोटे २ आम लेकर पहुँचे। और हर्ष पूर्वक कहा, लो बाबा दिन भर के भूखे हो, कुछ प्रशादी पावो। आपने अपना कटोरा आगे कर दिया, ब्राह्मण ने एक चुटकी सत्तू और एक आम उसमें डाल दी। यह देख कर जी जल गया, और कहा, कि दिन भर के भूखे को यही तोला भर अन्न देने आये हो? ब्राह्मण ने कहा, कि इसको घोलो, और खाओ, भूखे रहोगे, तो फिर और

दिया जायगा। आप ने श्री गंगा जल में सत्तू घोलना शुरू किया, कटोरा भर गया और सत्तू गाढ़ा ही रहा। आप बड़े आश्चर्य में पड़े। हर्ष पूर्वक गुरू महाराज को भोग लगा कर आम के साथ पाने लगे। बड़ा अपूर्व स्वाद था। पाकर तुष्टि और पुष्टि दोनों ही हुई।

इतने में माता अन्नपूर्णा वृद्ध स्त्री का स्वरूप धारण कर वहाँ पहुँची और सिर खुजलाती हुई बोलीं, कि लोग जरा सा धैर्य नहीं रख सकते। जरा देर हुई, कि अन्नपूर्णा को कोसने लगते हैं। यह सुनते ही आप ने वृद्ध ब्राह्मण और स्त्री की ओर प्रेम और ध्यान पूर्वक देखा, तो बड़ा तेजो मयी चेहरा दिखाई दिया। आप चरण छूने को आगे बढ़े, तो दोनों मूर्ति गंगा जी में उतर अंतर्ध्यान हो गये। बड़ी आश्चर्य मय घटना हुई। साक्षात् शिव पार्वती जान, पड़ा, अह्लादित हुए। और फिर नाम के परायण और दृढ़ता पूर्वक प्रेमोन्मत्त हो काशी जी में विचरने लगे—

श्री काली दर्शन

आप कभी २ विचरते हुए राजघाट की तरफ निकल जाते रहे। वहाँ पर मिथ्या वासुदेव, काशी राज्य के किले पर, मस्जिदों, गुफाओं, दुर्गा देवियों के मन्दिर, श्री बरुना गङ्गा के संगम, आदि-केशव जी आदि स्थलों पर दो २ तीन २ दिन सियाराम नाम रटते रह जाते। एक दिन काली जी के मन्दिर के आगे सीढ़ियों पर बैठे हुए नाम रटते रहे। जब अर्द्ध रात्रि हुई, तो देखते क्या हैं, कि सैकड़ों मशालें जलती चली आती हैं। एक विमान पर श्री काली जी विराजमान हैं। बहुत सी चण्डी मुण्डी हाथों में अस्त्र शस्त्र लिये, उनकी रक्षा में उपस्थित हैं। रक्षकों ने उन्हें रास्ते में से हटाने की चेष्टा की, तो देवी जी बोलीं कि इनको मत छेड़ो, और महाराज जी से बोलीं, कि 'महाराज' आप श्रीजानकी जी के परिकर हैं। निर्भय भजन करिये। यहाँ इस भूमि में मेरा ही राज्य है, आप को किसी प्रकार का भय, व बाधा, नहीं होगी। श्री महाराज जी ने यह वाणी सुन कर हर्ष पूर्वक उठ कर प्रणाम किया, और परिचय पूछा। देवी बोलीं, कि मेरा नाम काली है। माता अन्नपूर्णा की सेवा में से लौट रही हूँ। ऐसा कह ऊपर मन्दिर में प्रवेश कर गईं।

एक बार आप तुलसी घाट पर बैठे हुए सियाराम वैखरी वाणी से (उच्च स्वर से) स्पष्ट जप रहे थे। कुछ विद्यार्थी पास में कोठरी के बैठे पढ़ते रहे। बाहर निकल कर आये, और बड़े क्रोध की आकृति करते हुये, व्यंग किया, कि बाबा, काशी में तो किसी भी प्रकार पड़ा रह कर शरीर छोड़ दे, तो भी

गति मुक्ति हो जाती है। फिर इतना परिश्रम करने, और कष्ट उठाने की, कौन आवश्यकता है, क्या इतना नाम रटे विना अकाज है? आप व्यंग का अर्थ समझ गये और गम्भीर वचन बोले:—

कवित्तः— रटत न नाम सियाराम सोई दुष्ट है।
ऊपर ते धोय धोइ खाल की सफाई करै,
भीतर मलीन मन अति उर कुष्ट है।
विमल विचार हीन खात मद मास मीन
स्वादिन में लीन चहै रहै देह पुष्ट है।
माया को गुलाम दाम धरणि बटोरे धाम
वाम सों सुनेह करि भयौ चहै तुष्ट है।
प्रेमलता दोऊ लोक शोक को समाज ताहि
रटत न नाम सियाराम सोई दुष्ट है॥१॥
रटत न नाम सियाराम सोई चोर है।
मानुष शरीर लह्यो केवल भगति हित
ताहि विसराय धावै भोगन की ओर है।
गर्भ में करार कियो पायो अति दुःख जहाँ
बार बार प्रभु सन्मुख कर जोर है।
रावरी सपथ नाथ रटिहौं सु नाम तव
नाशिये कृपालु वेगि यह नर्क घोर है।
प्रेमलता भूलि के करार रह्यो छिपि इत
रटत न नाम सियाराम सोई चोर है॥२॥

यह गम्भीर संत वचन सुन उनके हृदय पटल खुल गये; और वजाय पढ़ने में वाधा पड़ने से क्रोध आने के, शान्ति मिली, और प्रणाम कर शान्ति पूर्वक लौट आये।

श्री गंगा मिलन

एक दिन आप गंगा स्नान कर, तिलक स्वरूप से निवृत्त हो, सियाराम नाम रटते रहे। बड़ी भूख लगी थी। नाम में विक्षेप होना चाहता था। इतने में एक अद्भुत चरित्र देखते हैं, कि एक बुढ़िया बड़ी तेजवान् तिलक कण्ठी, धारण, किये हुए, एक थाल में वहुत प्रकार के व्यञ्जन—पकवान सजाकर लाई, और प्रेम पूर्वक महाराज जी के सन्मुख रख कर मधुर वाणी में बोली, कि वावा जी आप भूखे हैं, भोजन पा लीजिये। महाराज जी प्रसन्न चित से गुरू महाराज को भोग लगा कर, प्रसाद पाने लगे। पदार्थों का

स्वाद अलौकिक ही पाकर, बुढ़िया के रहस्य को जान गये। और प्रेम पूर्वक परिचय पूछा। बुढ़िया ने कहा मेरा नाम 'गङ्गा बाई' है। मैं सदैव काशी में रहती हूँ।आप जैसे दिव्य महात्माओं की सेवा पूजा करना मेरा कर्तव्य है। इतना कह गंगा जी की ओर जाती थोड़ी देर तक दिखाई दी फिर अन्तर्ध्यान हो गई। आप यह रहस्य देख बड़े विस्मित हुए।

इसी प्रकार आनन्द पूर्वक आप का समय व्यतीत होता रहा। फिर इसके पश्चात बहुत दिनों तक आप कुरुक्षेत्र पर रहे। यहाँ पर महात्मा रामदास जी आप की बहुत सेवा करते रहे। एक बार श्रावण के सोमवार को यहाँ पर संतों का समागम हुआ।

खूब धूम-धाम से सत्संग समागम हुआ। बहुत उपदेश व प्रवचन हुए। आप से भी कुछ बोलने की प्रार्थना की गई। प्रवचन करना नियम के विरूद्ध समझ आग्रह करने पर यह कवित्त पढ़ी :—

नाम सियाराम से न ब्रह्म राम रूप तुल्य
सीय सी न शक्ति वीर बाँकुरे न काल से।
भरत से न भ्रात अपर दास हनूमान से न
सन्त से कृपाल भूप जनक महीपालसे॥
भक्ति से न दिव्य नैन ज्ञान और विचार से न
त्याग से प्रमोद परम शोक मोह जाल से।
देव गुरुदेव से न प्रेमलता तीनि लोक
तारण भव सिन्धु ते कथा न भक्तमाल से॥१॥

संगन में सन्त संग रंगन में राम रंग
गंगनि में देवसरि धवल धार वही है।
नामन में राम नाम ग्रामन में तीनि मुख्य
तीरथ प्रयाग अपर सप्त पुरी सही है॥
मंत्रन में राज मंत्र तिलकन में उर्द्ध पुण्ड
गाथन में रामायण तुलसी दास कही है।
भूमिन में प्रेमलता जीवन उद्धार हेत
तैसेही अपेक्ष दिव्य मिथिला की मही है॥२॥

यह सुन कर सब बड़े हर्षित हुए, और वाह २ करने लगे। सब लोग प्रशंसा करते हुए विसर्जित हुए। फिर इसी प्रकार सम्मेलन होने लगा।

भाद्र पद शुक्ल चतुर्दशी को रामनगर लीला की क्षीर सागर की झाँकी हुई। बस आप रामनगर क्षीर सागर पर दुर्गा जी के मन्दिर पर आसन किये। आनन्द पूर्वक एक मास पर्यन्त लीला झाँकी का रहस्यमय सुख आस्वादन किये। आप को इतने अनुभव हुए, और अपार आनन्द मिला, कि

आप ने प्रति वर्ष आकर लीला देखने का नियम बना लिया। और लगभग सब संत और भक्त समाज के साथ ३३ वर्ष पर्यन्त यह आनन्द लूटा। लीला के आदि, मध्य, अन्त, और संध्या विश्राम के समय सामूहिक कीर्तन कराने का आपका नियम था। महाराज बनारस आप से बड़े प्रसन्न रहते। इस समय के अनेक चरित्र व घटनायें हैं, जिनमें से कुछ 'चमत्कार खन्ड' में आगे वर्णन की जायेंगी।

इसके बाद आप श्री संकट मोचन हनुमान जी के दर्शन करने आये। अस्सी नाले का पुल न था, विश्वविद्यालय स्थापित न होंने से उधर कुछ आबादी भी घनी न थी। जंगल का सा रूपक था। लखौरी ईंटों का बना नीचा मन्दिर था। वट का विशाल वृक्ष कूप व मूर्ति ही प्राचीन कालीन थीं।

दण्डवत करते ही मूर्ति के दाहिनी नेत्र में से तेजोमयी प्रकाश दिखाई दिया। हनुमान जी की सिद्धि व साक्षात रूप से विराजमान होने की कथा सुन चुके थे, अब स्वयं भी अनुभव किया। साक्षात रूप से हनुमान जी को विराजमान देख बड़े हर्षित हुए, और नाम सुनाने का निश्चय करके वहीं विराज गये। इस समय आपका श्री गुरु महाराज के साथ रहस्यमय पत्र व्योहार खूब होता रहा। उसी में खूब शङ्का समाधान होते रहे। उदाहरणार्थ एक पत्र गुरु महाराज का आपके नाम का दिया जाता है :—

अथ श्री गुरु पत्रिका

कवित्त :—

हे सिय लाल प्रपन्न प्रसन्न रहौ वशुयाम सु नाम पुकारि कै।
या भव सिन्धु अथाह प्रवाह से आप तरौ जन औरहु तारि कै॥
औसर देह प्रलभ्य मिली निशि वासर तात सो हीय विचारि कै।
श्री गुरु देवहि जो उपदेश हमेशहि सो दृढ़ कै हिय धारि कै॥१॥

सो अब पायके श्री रघुराय सु ध्याय कै खूबहि लीजै बनाय कै।
ऊँची सुदृष्टि कै सृष्टि बिलोकि कै पंचहि कृति प्रपंच विहाय कै॥
जौ अब लौं न मिल्यो मुद मोद सो संकटमोचन ही परिपाँय कै।
ले परमात्महि आल्प देय कै तमाय विहार बहार अभाय कै॥२॥

मोह भई निद्रा बिच सोये हैं अनन्त जीव
कोई बड़ भागी गुरुदेव कृपा जागे हैं।
तिन हिय भूमि में भजन रूपी खेत जाम्यो
तामें सीताराम दरशन फल लागे हैं॥

भजन स्वरूपी खेत रक्षा भली भाँति करै
ज्यों अनाज हेतु ही निशान अनुरागे हैं।
पशु चोर पक्षी अरु सूकर हरिए आदि
नाम की आवाज देवै, तब सब भागे हैं ॥३॥
भोग रूपी पशु, अहंकार रूपो चोर औ
संकल्प रूपी पक्षी दम्भ शूकर समान हैं।
हरिए स्वरूप ही प्रयोजन को जानो खूब
ऊब विना रक्षा किये पावै भगवान हैं ॥
जिन यह खेत को सचेत ह्वै न रक्षा कीन,
तिन हीं की साँची जानो होत महा हान हैं।
श्रीराम वल्लभाशरण श्री गुरु अवलम्ब लेय
दम्पति महल में सो रमै मुद मान हैं ॥४॥
जिनको समागम सु सन्त जन होत तेहि
लक्षण सु पाँच ही अवश्य होवै हीय हैं।
प्रथम सु मन गुरु शव्द का प्रकाश, दूजे
निज जीत हार को यथार्थ जननीय हैं ॥
तीजै मन माया अति वैरी को पछानै खूब,
चौथे स्वाँस स्वाँस नाम जीह रमनीय हैं।
पाँचै राम वल्लभाशरण परिवार सह
जन्म के सुफल पावै निज सीय पीय हैं ॥५॥

श्री महाराज जी पत्र पाकर परम आनन्दित हुए उत्तर में यह वीसिका लिखि भेजी :—

अथ प्रश्नोत्तर वीसिका

प्र०—को तुम हो, का वर्ग तव, कवन जाति, का नाम।
प्रेमलता कहु सत्य सब, कहा सो तेरो काम ॥ १ ॥
उ०—नारि वर्ग प्रभू अंश हो, जाति किंकरी मोर।
नाम जीव वर, काम यह, नाम रटो निशि भोर ॥ २ ॥
प्र०—कहाँ गमन, आगमन कित, रहना कहाँ तुम्हार।
कहा सुनो देखो कहा, प्रेमलता संसार ॥ ३ ॥
उ०—आना जाना है नहीं, रहना नित्य विहार।
सुन्यो सार भगवत भजन, असत लख्यो व्यौहार ॥ ४ ॥
प्र०—का सीखे वोले कहा, कहा गुनै वसु याम।
प्रेमलता अति प्रिय कहा, कहा मुख्य विश्राम ॥ ५ ॥
उ०—गुन सीखे प्रभु जस सुने, बोलै तव सियराम।
प्रेमलता सत्संग प्रिय, राम शरए विश्राम ॥ ६ ॥

प्र०—का लेना देना कहा, का संग्रह का त्याग ।
का सोना का जागना, प्रेमलता बड़ भाग ॥ ७ ॥
उ०—गुण संग्रह, अवगुण तजै, लेइ नाम, दे दान ।
सोना ब्रह्म विचार विनु, जग बसु आतम ज्ञान ॥ ८ ॥
प्र०—दम्पति को सर्वोपरि, को अति ऊँच बखान ।
प्रेमलता को नीच अति, को अति प्रबल महान ॥ ९ ॥
उ०—अबला माया प्रबल अति, पर दम्पति सियराम ।
भजत न रामहिं नीच सो, उत्तम संत सुजान ॥ १० ॥

प्र०—कौन अहारी भजन के, उ०—आलस नींद प्रमाद ।
प्र०—प्रेमलता को नर्क प्रद, उ०—निन्दा चोरी बाद ॥ ११ ॥
प्र०—राम भजन धन को ठगै, उ०—मान बड़ाई बाम ।
प्र०—प्रेमलता मति मन्द को, उ०—जो न रटै सियराम ॥ १२ ॥
प्र०—करै भगति में भंग को, उ०—कपट दम्भ अभिमान ।
प्र०—प्रेमलता को अधम नर, उ०—जो न भजे भगवान ॥ १३ ॥
प्र०—को ध्यानी उ०—जो नाम रत ।
प्र०—को त्यागी, उ०—गत कोह ॥ १४ ॥
प्र०—प्रेमलता अति दुखद को उ०—सुत बनिता धन मोह ।
प्र०—सतगुरु को, उ०—इच्छा रहित वेद विग्य धर्मिष्ट ॥१५॥
प्र०—प्रेमलता को शिष्य वर उ०—जाके गुरु पद इष्ट ।
प्र०—को पावै दोउ लोक सुख, उ०—रटै नाम तजि दोष ॥ १६ ॥
प्र०—प्रेमलता धनवान को उ०—जाके उर संतोष ।
प्र०—संत कौन उ०—परहित निरत ॥ १७ ॥
प्र०—पण्डित को उ०—समचित्त ।
प्र०—प्रेमलता को चुतुर नर, उ०—रटै नाम तजि वित्त ॥ १८ ॥
प्र०—को रोगी उ०—जो भोग रत ।
प्र०—को जोगी उ०—गत आस ॥ १९ ॥
प्र०—प्रेमलता को धर्म रत उ०—जो सेवत हरिदास ।
प्र०—को सुजान उ०—जो हरि भजै ॥ २० ॥
प्र०—कवन क्रूर उ०—रत बाम ।
प्र०—प्रेमलता को सूर सुचि उ०—जो जीतै मन काम ॥ २१ ॥
प्र०—हेतु रहित को सर्व हित उ०—सीताराम सुनाम ।
प्र०—प्रेमलता को धन्य तर उ०—रटै सदा सियराम ॥ २२ ॥
प्रश्नोत्तर दोहा लिखे प्रेमलता बर बीस ।
श्री गुरु पद अर्पण किये पावन पथ जगदीश ॥ २३ ॥

इस प्रकार आन्दकारी पत्र व्योहार होता रहा उदाहरणार्थ एक बार का प्रकाशित कर दिया।

पुनः श्री मिथिला को

अब आप पैदल ही गंगा जी के किनारे किनारे वकसर अहल्या स्थान, दानापुर, पटना, हरिहरक्षेत्र आदिक तीर्थों में होते हुए, श्री मिथिला जी की यात्रा किये। रास्ते में जहाँ कहीं सन्ध्या पड़ती वहीं विश्राम करते। वहाँ के लोगों को भगवत वेष और नाम का महत्व सुनाकर उपदेश करते। यह नियम कितने ही वर्ष तक चालू रहा। कितने विमुखियों को प्रभु सन्मुख किये, और 'जयसियराम' नाम का खूब प्रचार किये। तभी से आप की उपाधि 'जय सियराम जयजय सियराम नाम ध्वनि प्रचारक वैष्णव-धर्मावलम्बी' पड़ गई। जगह जगह कीर्तन की स्थापना की। भूत प्रेत इत्यादि तामसी उपासना, छुड़ा कर, श्री हनुमान जी की, पूजा प्रारम्भ करवाई। कई रोगियों के रोग निवारण किये। कई स्थानों की भूत बाधा शान्त की इत्यादि इत्यादि अनेक कार्य्य करते हुए यात्रा करते रहे। श्री हरिहर क्षेत्र पहुँच कर वहीं कुछ दिन निवास किया। लोग सत्संग करने आने लगे। एक महात्मा ने प्रश्न किया, महाराज उपासक के क्या लक्षण हैं, सो वर्णन कीजिये। आप ने मुस्काय के यह पद पढ़ा :—

उपासक सोइ जो नाम रटै॥
प्रथम तजै जग जाल जहाँ लगि, गुरु पद कमल सटै।
कंठी तिलक मंत्र माला दृढ़, वैश्नव ठाट ठटै॥१॥
जो गुरु कहैं करै सोइ सोइ सिषि, सपनेउ नाहिं नटै।
करि सेवा सम्बन्ध लिखावै, प्रण करि गुरु ढिग डटै॥२॥
सीखै भेद भाव वर नाना, जेहि फिर मन न हटै।
श्री सियराम विहार भक्ति रस, तन मन बच लपटै॥३॥
अनायास गुरु कृपा अनूपम, अनुभव सुख प्रगटै।
होय अनन्य उपासक साँचौ, भ्रम तम तोम फटै॥४॥
ममता मोह कोह कामादिक, तेहि उर पुनि न खटै।
परमानन्द रूप निसि वासर, प्रमुदित अवनि अटै॥५॥
दम्पति विमल विनोद पग्यो नित, तत सुख दृगनि चटै।
तारन तरन भयेउ तेहि सेवत, प्रेमलता दुख कटै॥६॥
उपासक सोइ जो नाम रटै॥

यह उपासक की परिभाषा सुन, सब बड़े प्रमुदित हुए। इस प्रकार राह में आनन्द वर्षा करते हुए, श्री सीतामढ़ी पहुँचे। जन्म स्थान, महल के दर्शन कर, श्री सिद्धबाबा के यहाँ पहुँच, सब कृपा अनुभव, और आनन्द का वर्णन किये। यह सुन सिद्ध बाबा बहुत हर्षित हुए। आशीर्वाद दिये, और कुछ काल रख कर, आनन्द पूर्वक, सतसंग द्वारा, रहस्य प्रदान किये।

श्री दिव्य मिथिला दर्शन

आज्ञा पाकर आप श्री मिथिलाधाम पहुँच कर, ज्ञान कूप के पास आसन किया। अब आप को त्रेता युग के दिव्य मिथिला जी का दर्शन करने की बड़ी प्रबल इच्छा उत्पन्न हुई। स्वामिनी जी अपने कृपा पात्र के मनोर्थ को कब अपूर्ण देख सकती हैं। एक दिन मध्यान में, नाम रटते हुए, तन्द्रा आगई। उसमें आप ज्ञान कूप के अन्दर उतर गये, वहाँ त्रेता युग के आकार का चौदह हाथ का मनुष्य पहरेदार, हाथ में बहुत सी लम्बी लम्बी कुञ्जी लिये, देखा। महाराज जी को देख, श्री जानकीजी का नित्य परिकर चीह्न कर पहरेदार ने उठकर इनको दंडवत किया। तब आगे चल कर स्वर्णमयी रत्नजटित बड़ा विचित्र रंगीन शोभायमान दिव्य विशाल फाटक देखा और पूछा, यह क्या है ? पहरेदार ने उत्तर दिया, कि महाराज, यह दिव्य मिथिला जी के उत्तर ओर का फाटक है। महाराज ने फरमाया, कि इसे खोलो। उन्होंने कहा कि महाराज बिना त्रेता युग आये, बीच में इसे खोलने की आज्ञा स्वामिनी जी की नहीं है। फिर महाराज जी कहे, कि अच्छा, जरा खिड़की ही खोल कर अन्दर की झाँकी करादो। उसने प्रार्थना किया, कि आप अन्दर तो नहीं जायँगे ? आपने कहा नहीं, बस यह वचन लेकर एक बड़ी ताली से खिड़की का ताला खोला। खिड़की खुलते ही, महँ महँ महकें आने लगी। शीतल मंद सुगन्धित वायु का स्पर्श होने लगा। दिव्य मिथिला अलौकिक रूप से त्रेता युग की सामने दिखाई पड़ी :—

पीत वरण नभ जल थल रचना * अद्भुत अकथ न कहि सक वचना ॥
सरित तड़ाग सुभग बहु बागा * देखत उपजत उर अनुरागा ॥
मारग सरल स्वच्छ बहुतेरे * दोउ दिशि सुन्दर विटप घनेरे ॥
सब तरु हरे फरे महि परसत * सब देवन के मन आकर्षत ॥
कोटिन भानु सरिस परकासा * उमगत परमानँद चहुँ पासा ॥
सब तरु कामद रूप सुहाई * घूमहिं कोटिन कामद गाई ॥
गुप्त प्रगट जहँ तहँ विहार थल * शोभित विपुल अकथ अनुपम भल ॥

दोहा—कंचन के कोटिन भवन, विलग विलग चहुँ ओर।
बनें सुभग राजहिं तहाँ, चातक कोकिल मोर ॥

यह अनुपम शोभा देख, देहाध्यास भूल गया। खिड़की के अन्दर महाराज जी जाने लगे, तुरन्त पहरेदार ने, आगे हाथ करके रोक दिया। तंद्रा भंग हुई। रोमांच हो आया, बड़ा आश्चर्य हुआ। पुनः पुनः हर्ष की लहर दौड़ने लगीं। तब आप ने दिव्य मिथिला की इस पद से स्तुति करने लगे :—

अस्तुति

जय जय मिथिलेश पुरी मिथिला सुखदाई ।
सप्तपुरी तीर्थधाम सकल सुभद पुन्य ठाम
सेइ तव सुपद ललाम सर्व सिद्धि पाई ॥१॥
तीनि लोक तीनि काल, तो समान तू दयाल ।
देखि राम भे निहाल, सहित लखन भाई ॥२॥
अमर संत सिद्ध भूप, सेवति तोहि लखि अनूप ।
पावत सिय राम रूप, कहत वेद गाई ॥३॥
निवसि तव सुअङ्कलोग, करत विविध जोग योग ।
व्यापत नहिं रोग सोग, तोर दया माई ॥४॥
अनुपम थल तीर्थ बाग, विपुल विमल सरितड़ाग ।
जागत अनुराग भाग हेरि के निकाई ॥५॥
जगत मातु सीय आय, जनमि तोहि कीन माय ।
हारे कबि गाय गाय, कीर्ति तव सुहाई ॥६॥
वीतराग सीयराम, रटत अटत महि अकाम ।
सेइ तोहि आठ याम, मुदित माँगि खाई ॥७॥
मिथिला सब विधि सुखैन, प्रेमलता जो न नयन ।
निरखी सो जिउ न चयन, लहत कहूँ जाई ॥८॥

इस प्रकार स्तुति गाकर अनुराग युक्त होकर नाम रटना करने लगे। इस प्रकार के अनेक अनुभव मिथिला जी में हुए जिनमें से कुछ आगे चमत्कार खन्ड में वर्णन किये जायेंगे।

श्रीनाम रहस्य की प्राप्ति

इस प्रकार वीतराग होकर, परम वैराग्य युक्त, विरति से विचरते हुए अखन्ड नाम जपते रहे। वृक्ष के नीचे सब ऋतु में वास करते। सर्प रेंग रहे हैं। बिच्छू चल रहे हैं। घनघोर वर्षा हो रही है। बिजली चमक रही है। परन्तु आप अपने नियम से नहीं विचिलित होते, सियाराम २ अखण्ड सप्रेम से, उच्च स्वर से, उच्चारण हो रहा है, यह वृति देख लोग मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते, और सिहाते। अब श्री गुरू पुर्णिमा का अवसर आ पहुँचा। आपकी इच्छा श्री गुरु महाराज की दर्शन करने की हुई। तुरन्त आप गाड़ी से रवाना हो, श्री अवध पहुँचे। श्री गुरुदेव भगवान जू के श्री

चरण कमलों में रोमाञ्चित हो वारम्वार साष्टाङ्ग दण्डवत किया। श्री गुरुदेव जू ने अति प्रसन्न हो आशीर्वाद देते हुए, आप को उठा कर वैठाया। कुशल प्रश्न के अनन्तर नित नये अनुभव और आनन्द प्राप्ति की चर्चा होती रही। श्री सत्गुरु कृपा कटाक्ष पाकर, अति प्रसन्न हुए। बड़े धूमधाम से गुरु पूर्णिमा उत्सव प्रतिपादित हुआ। सव गुरु भाई वहिनों से दर्श पर्श व सम्भाषण हुआ। आप श्रावण की झूला उत्सव देखने के लिये रुक गये। और इस नियम को जब तक गुरू महाराज का शरीर रहा, निभाते रहे।

एक दिन श्रावण मास के शुक्ल पक्ष में श्री सरजू तीर झूलन उत्सव के पश्चात श्री गुरू महाराज की नित्य की तरह चरण सेवा कर रहे थे। बड़ी दीन वाणी से अनुराग युक्त वाणी से प्रश्न किये, कि सरकार कुछ नाम का परत्व मिलना चाहिए। जिससे नाम रटने में अधिक अनुराग और अनुभव की प्राप्ति हो। दीन वचन सुन कर श्री गुरू महाराज का हृदय भर आया और प्रेम पूर्वक पास वैठाय कर वोले :—

सुनु सियलालशरण मम वानी * सावधान होइ अति सुखदानी ॥
कहेउँ न सवहिं जानि अति गूढ़ा * नाम रहस्य न बूझहिं मूढ़ा ॥
तीनउँ लोक भुवन दशचारी * नाम समान न कोउ हितकारी ॥
पोषक जन शोषक अघ भारा * राम नाम कामद श्रुति सारा ॥
अशरण शरण सुभग सव लायक * नाम सकल मुद मंगल दायक ॥
सत्य सुमति गति रति बुध ताई * सुभ समर्थ सुर तरु सुरगाई ॥
ज्ञान ध्यान परमारथ स्वारथ * नाम समान न सुखद यथारथ ॥

दोहा—श्री सियरामहुँ ते अधिक, नाम सुलभ सुखकारि।
यह प्रभाव लखि घरनि सह, निशि दिन रटत पुरारि ॥

अब वरणौं नव नाम प्रकारा * जिनि विनु खुलत न हृदय किंवारा ॥
प्रथम जगत के भोगन त्यागै * मोह निशा सोवत ते जागै ॥
दूजै तजै गेह अस्थाना * कर्म शुभा शुभ दुख प्रद नाना ॥
तीजै तजै पञ्च अभिमाना * कामादिक अवगुन अज्ञाना ॥
चौथे चञ्चलता जग आशा * तजै विपुल सुख विषय विलासा ॥
पाँचे पञ्च तत्व की काया * तेहि में राखे मोह न माया ॥
छठें करै गुरु वैश्नव जानी * भजनानन्द रसिक विज्ञानी ॥
यशी विरक्त लोक विख्याता * श्री सियराम नाम रस ज्ञाता ॥
सप्तम प्रभु शरणागत धर्मा * बूझै तिन्हि गुरु सन तजि भर्मा ॥
अष्टम धारि सुनाम उदारा * आयसु पाइ रटै इकतारा ॥
नवम नेम नामहुँ कर राखै * अपर धर्म धरि देह सुताखै ॥
करै वैखरी से उच्चारण * श्री सियराम नाम भव तारण ॥

त्यागि शुभा शुभ सर्वस नामहिं * जानि रटै निशि दिन जपि रामहिं ॥
तिन्ह कहँ सर्व काल कल्याना * निवसहिं निकट सदा भगवाना ॥
अब सुनु अपर भेद षट भाखौं * तो सन कछु दुराय नहिं राखौं ॥
तात देखि मति सुदृढ़ सु तोरी * राम नाम शसि रसिक चकोरी ॥
तेहि लगि होत हरष अति मोही * नाम रहस्य सुनावत तोही ॥
ये षट भेद न जानत कोई * सावधान सुनु धरु उर गोई ॥
प्रथम भेद यह सिय बिनु रामहिं * जजति भजति ध्यावति वशुयामहिं ॥
ते शठ सपनेउँ सुख नहिं पावत * जजि भजि ध्याइ सु प्रभुहिं खिझावत ॥
दूसर षट संयम विनु नामहिं * रटि चाहत खल कुशल सु धामहिं ॥
तीसरि भेद सुनों प्रिय येहा * नाम नेम कीजै भरि देहा ॥

हिय अनन्यता गति बिना, द्रवत न नाम कृपाल ।
रटै जानि अस सर्व तजि, नामहिं तीनहुँ काल ॥

चौथ भेद यह सुनि उर धारौ * मन वच क्रम ते हिंसहिं टारौ ॥
पञ्चम पञ्च कहाय प्रपञ्चनि * परि न जरै वहु विधि जग अञ्चनि ॥
षष्ठम भेद सभाव सप्रीती * रटै नाम तजि तर्क अनीती ॥
यहि विधि नाम रटत दिन थोरे * उपजहिं आनँद अति उर तोरे ॥
इन संयुत जे नाम उचरिहैं * गो पद इव ते भव निधि तरिहैं ॥
अब सुनु समुझि सु अष्ट विधाना * जानहिं कोउ कोउ सन्त सुजाना ॥
प्रथम विधान सु नाम उचारन * करै वैखरी ते भव तारन ॥
बाहिर नाम सु रटत रटावत * रोम रोम प्रति उर धुनि छावत ॥
बाहर ते भीतर धसि जाई * नाम रटत रटवावत भाई ॥
गजै रटै उचारै गावै * नाँचि नाँचि ध्वनि करै करावै ॥
द्वितीय विधान नाम कर नेमा * करै अचल अविछिन्न सप्रेमा ॥

धर्म कर्म व्रत तीर्थ तप, साधन सिधि समुदाय ।
तजि निर्भय प्रण करि रटै, नामहि नेह बढ़ाय ॥

तीसर वर विधान सुनु येहा * दाम काम मधि करिय न नेहा ॥
कंचन कामिनि काल समाना * भजनानँद कहँ वेद बखाना ॥
चौथ विधान मध्य चित दीजै * नाम रटत संदेह न कीजै ॥
त्रिविधि पाप तिहुँ कालनि केरे * जरत उचारत नाम बड़ेरे ॥
अब सुनु पंचम कहउँ विधाना * नाम अर्थ सह रटहिं सुजाना ॥

वैष्णव सन्त सबोध गुरु, करि सु नाम लवलीन ।
तेहि सन सीखै नाम के, अर्थ भेद होइ दीन ॥

षष्ठम वर विधान अब भाखौं * तो ते गोइ न कछु उर राखौं ॥
नाम जापकनि कर सुचि सङ्गा * कीजै खोजि सु सहित उमङ्गा ॥

नाम रहस्य सु सुनै बखानै * मनन करै सप्तम उर आनै ॥
अष्टम अव विधान सुनि लीजै * मन वच कर्म सुधारन कीजै ॥
राम नाम बल करिय न पापा * काहुहि भूलि न दीजै तापा ॥
भजनानन्द पाप जो करहीं * ते सब प्रभु के माथे परहीं ॥
मिथिला अवध सु कामद काशी * तजहिं न जे सियराम उपासी ॥
जाति पाँति विद्या परिवारा * गुण बल बुद्धि सु सकल पसारा ॥
जहँ लगि जो कछु वेद उचारा * नामिनि सकल नाम पर वारा ॥
रटहिं सुनाम सदा निरुपाधी * सबते सब प्रकार चुप साधी ॥
परहिं न ते भव निधि भ्रम जारा * कवनिउँ विधि जिन्हि नाम सु धारा ॥
नाम रटन निज जीवन जानै * तेहि बिनु मृतक शरीर सु मानैं ॥
चाहै कवनिऊँ सिद्धि न सामा * रटै निरन्तर नाम अकामा ॥
यहि विधि करि उपदेश उदारा * लगे रटन गुरु नाम सु प्यारा ॥
तब प्रभु हरषि दंडवत कीना * जो कछु कहेउ सु शिर धरि लीना ॥
पुनि कर जोरि सु विनय सुनाई * बार बार चरणनि शिर नाई ॥
सतगुरु कीन सु कृपा अपारा * दै उपदेश हरेउ भ्रम भारा ॥
सतगुरु बिनु यह भेद सु गूढ़ा * सपनेउँ लहहिं न मन मुख मूढ़ा ॥
कीन अहेतुक कृपा कृपाला * प्यायेउ नाथ नाम रस प्याला ॥
रटिहौं नाम सदा अब स्वामी * जन्म जन्म प्रभु अन्तरयामी ॥

इस प्रकार नामामृत पान कर आनन्दित हो सत्संग पूर्वक कुछ काल वास कर झूलन बाद काशी यात्रा की ।

सप्त प्रश्न

अब रामनगर की लीला का समय सन्निकट था, अतः काशी पधारे, और चौकाघाट पर लक्ष्मी नारायण के मन्दिर पर आसन किया। अब आप का प्रायः यहीं नियम प्रति वर्ष का हो गया था, कि गुरु पूर्णिमा और झूलन अवध में, रामलीला काशी मैं, विवाह पंञ्चमी और परिक्रमा जनकपुर में और श्री रामनवमी और जानकी नवमी सीतामढ़ी में, करते थे। कुछ दिन बाद आपने श्री संकट मोचन हनुमान जी में आकर वास किया। हनुमान जी का मन्दिर बड़े सघन जंगल में था। बहुत कम लोग दर्शन करने आते थे। आप ने हनुमान जी की प्रभुता प्रत्यक्ष और सिद्धि होने का प्रचार लोगों में किया, और जो कोई कुछ मनोर्थ लेकर महाराज जी के पास आता तो, आप श्री हनुमान जी को नाम सुनाने का, नियम कराते। इस रीति से कार्य्य सिद्ध हो जाता, और आज भी हो रहा है। फिर क्या था, हर मंगल

शनिवार को, भक्तों की अपार भीड़ दर्शनों को आने लगीं। आप के लिये लोगों ने ठहरने को एक कुटिया बनवा दी। जिस से प्रति वर्ष आकर आप हनुमान जी को नाम सुगमता से सुना सकें। इस प्रकार से नाम रटते सत्संग समागम होते, समय व्यतीत होता रहा।

एक बार प्रभु सुख आसीना * सेवक बचन कहेउ अति दीना ॥
सप्त प्रश्न मम कहहु अधारी * प्रणत पाल दीनन हित कारी ॥
प्रभु मुस्काय कही यह बाता * पूछउँ सप्त प्रश्न सुखदाता ॥

यह आज्ञा पाकर सेवक ने सात प्रश्न पूछे और सरकार ने इस प्रकार उनका उत्तर दिया :—

प्रश्न—(१) सरकार 'रहस्य त्रयी' का कुछ विवेचन कीजिये।

उत्तर—(१) राम तारक मंत्र (२) शरणागत मंत्र (३) चरम मन्त्र यही रहस्य त्रयी हैं।

(१) राम तारक मंत्र :—

रां—यह बीज है जगदुत्पत्ति लय स्थिति का कारण है, पर ब्रह्म परमात्मा परमेश्वर परात्पर परम पुरुष श्री रामचन्द्र जी महाराज के ऐश्वर्य्य का वाचक है। प्रणव से अभेद है।

र—सर्व जगत् कारण, शेषी, भगवान सीता पति।

अ—आचार्य रूप—दोनों का सम्बन्ध जनाने वाले।

म—अनन्य शेष—अनन्यभोग अचितवत, परतन्त्र सर्वविधि कैंकर्य्य निपुण जीव।

राम—अनन्त कल्याण गुण सागर राम जी

आय—स्वरूपानुकूल कैं कर्म प्रार्थना।

नमः—दो प्रकार का है एक अखण्ड दूसरा सखण्ड। सखंड नमः का अर्थ मकार वाची—याने अनन्य शेष, अनन्य योग अचित वत्—परतन्त्र सर्व विधि कैंकर्य्य निपुण जीव—र कार वाची सर्व जगतकारण सर्व शेषी भगवान् सीता पति श्रीराम जी के वास्ते है। और किसी के लिये नहीं। अखण्ड नमः उपाय वाचक है नाम नमस्कार ही उपाय हैं और कोई दूसरा उपाय नहीं न० म० नाम जो मैं हूँ 'न' और का नहीं हूं। हम केवल श्रीराम जी के लिये हैं। श्रीराम जी के हम अनन्य सेवक और भोग्य हैं उन्हीं के शेष हैं। और किसी ईश्वर व देवता के नहीं। इसलिये मैं भगवान् श्री रामचन्द्र जी के वास्ते हूं।

यह षड़ाक्षर राम तारक मन्त्र सब मन्त्रों का राजा है। अन्य सब मन्त्र इसकी प्रजा हैं, अर्थात् यह मन्त्र सबका मूल है। संसार का विशेषतः छुड़ाने वाला है।

(२) अष्टाक्षर शरणागति मंत्र :—

श्री—से भगवान की अविनाशभूता दिव्य शक्ति श्री सीता पद वाच्या ज्ञान शक्ति बल ऐश्वर्य तेज और वीर्य्य सम्पन्न भगवती स्वरूप श्री जनकनन्दनी जी को जानना चाहिये। ये सब जगत की आश्रय भूता हैं। इनकी शरण का आश्रय लेने से ही जीव श्री राम जी की प्राप्ति का अधिकारी बन सकता है अन्यथा नहीं।

राम :—पद से वातसल्य-करुणा, दया, कृपा, सौन्दर्य, माधुर्य्य, सर्वज्ञ, सौलभ्य, सौशील्यादि अनन्त गुण विशिष्ट श्री रामजी प्रतिपादित होते हैं।

शरण—पद उपाय वाचक है। जीव की भगवत प्राप्ति के लिये एक मात्र उपाय शरण ही है। शरणागति को छोड़ दूसरा उपाय नहीं।

मम—पद से शेष अंशज स्वरूप जीव को सर्व गुण सम्पन्न श्री सीता रामजी की प्राप्ति साधन और सिद्धिरूपा है—अर्थात् उनकी प्राप्ति के लिये उनकी कृपा ही साधन है। जिसको चाहे दर्शन दे प्राप्ति करावें।

(३) चरम मन्त्र—

(ओं) सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।
अभयं सर्व भूतेभ्यो ददाम्येद्व्रतं मम॥

अर्थात् सरकार से 'मैं आप का हूँ' ऐसा एक वार भी कह कर जो शरण में जाय—चाहे कैसा भी पापी होय सरकार उसको सब प्राणियों से व सब तरह से अभय प्रदान कर देते हैं, ऐसा उनका व्रत है।

संकृदेव प्रपन्नाय—एक वार ही, यह मानसी प्रपति है।

तवास्मीतिचयाचते—यह वाचकी प्रपति है।

सरकार का वंशतः स्वभाव—दयादान शरणागत रक्षक, फिर परात्पर प्रभु होने से सबके आश्रयभूत उत्पादक पालक हैं। तो जो शरण में आवे उसको अपनाना शरणागति देने का आप का व्रत है।

सर्वभूतेभ्यो—सर्व जीवों से तथा अपने से भी अभय प्रदान करना (पंचमी विभक्ति में)

चतुर्थी में—केवल विभीषण को नहीं वरन् कोई भी कैसा भी दीन हीन मलीन जीव हो उसको भी अभय देते हैं। इससे यह भी ध्वनि निकली कि केवल मनुष्य या देवता को ही नहीं वरन् कोई भी प्राणी हो सब जीवों का शरणागति में अधिकार है।

"अभयं ददामिएतद्व्रतंमम" मैं शरण में आये हुए जीवों, सब जीवों को अभय देता हूं यह मेरा व्रत है। अर्थात् किसी भी अवस्था में शरणागत त्याज्य नहीं चाहे कैसा भी अयोग्य हो अभय नाम मोक्ष का भी है। अर्थात् ब्रह्म विद्या का फल स्वरूप ज्ञानी होकर मोक्ष को पाकर अभय हुआ।

प्रश्न—(१) सरकार! तत्वत्रय का कुछ भेद बताया जाय।

उत्तर—(१) ब्रह्म (२) जीव (३) माया यहीं तीनों का भेद जानना तत्व त्रय है :—

(१) ब्रह्म—

राम ब्रह्म व्यापक जगजाना * परमानन्द परेस पुराना ॥
राम सच्चिदानंद दिनेसा * नहिं तहँ मोह निसा लवलेसा ॥
सहज] प्रकास रूप भगवाना * नहिं तहँ पुनि विज्ञान विहाना ॥
सब कर परम प्रकाशक जोई * राम अनादि अवध पति सोई ॥
राम ब्रह्म परमारथ रूपा * अविगत अलख अनादि अनूपा ॥
जगत प्रकास्य प्रकासक रामू * मायाधीस ज्ञान गुन धामू ॥
जासु सत्यता ते जड़ माया * भास सत्य इव मोह सहाया ॥
कासी मरत जन्तु अवलोकी * जासु नाम बल करौं विसोकी ॥
सोइ प्रभु मोर चराचर स्वामी * रघुवर सब उर अन्तर्यामी ॥
व्यापक व्याप्य अखंड अनंता * अखिल अमोघ शक्ति भगवंता ॥
अगुन अदभ्र गिरा गोतीता * नित्य निरंजन सुख संदोहा ॥
प्रकृति पार प्रभु सब उर बासी * ब्रह्म निरीह विरज अविनासी ॥
राम ब्रह्म चिनमय अविनासी * सर्व रहित सब उर पुर बासी ॥

इस प्रकार का सरकारी स्वरूप जान कर ध्यान करे।

(२) जीव :—

ईश्वर अंस जीव अविनासी * चेतन अमल सहज सुख रासी ॥
सो माया बस भयउ गोसांई * वंध्यो कीट मरकट की नाईं ॥
जड़ चेतनहिं ग्रंथि परिगई * जदपि मृषा छूटत कठिनई ॥
तब से जीव भयेउ संसारी * छूट न ग्रन्थि न होइ सुखारी ॥
हरष विषाद ग्यान अज्ञाना * जीव धर्म अहमिति अभिमाना ॥
जांनिअ तबहिं जीव जग जागा * जब सब विषय विलास विरागा ॥

माया ईस न आप कहुँ, जान कहिअ सो जीव।

पद—(जीव) आतम मेरो नाम, मैं तो राम की दुलहिया।
मेरे पति की प्रीति अपारी मोपै कबहु करत न न्यारी,
मैं तिन्ह त्यागि भई मतवारी ओढ़ी कपट कुलहिया।
जबते ये नस्वर तन पाये तबते नाना नाम धराये,
झूठे नाते नेह बढ़ाये प्रभुते मिटी सुलहिया॥
जाति कर्म बर्णाश्रम धर्मा धरेउ सीस आलम परिभर्मा,
ऐसी परी नीचता कर्मा बनि गई डोम जुलहिया।
त्रिजग योनि धरि विविध शरीरा जन्मति मरति सहत बहु पीरा
बिसरेउ ग्यान सुमति रघुबीरा अहमति अधिक उलहिया॥
दई मोह बस प्रभु सन पीठी मीठी रही भई सो सीठी,
को मैं हती गई सो दीठी फूकन लगी चुलहिया।
नरतन धरि उर नरकनि जावै आतम सोई प्रभु विमुख कहावै,
प्रेमलता टुक चेत न आवै भयेउ सु बुद्धि लुलहिया॥

(२) माया—

मैं अरु मोर तोर तैं माया * जेहिं बस कीन्हें जीव निकाया॥
गो गोचर जहँ लगि मन जाई * सो सब माया जानेउ भाई॥
तेहि कर भेद सुनहु तुम सोऊ * विद्या अपर अविद्या दोऊ॥
एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा * जा बस जीव परा भवकूपा॥
एक रचहि जग गुन बस जाके * प्रभु प्रेरत नहिं निज बल ताके॥
यह सब माया कर परिवारा * प्रबल अमित को बरनै पारा॥
शिव चतुरानन जाहिं डराहिं * अपर जीव केहि लेखे माहिं॥

व्याप रहेउ संसार महँ, माया कटक प्रचण्ड।
सेनापति कमादि भट, दंभ कपट पाखण्ड॥
सो दासी रघुबीर कै, समुझै मिथ्या सोपि।
छूट न राम कृपा बिनु, नाथ कहहु पद रोपि॥

जो माया सब जगहि नचावा * जासु चरित लखि काहु न पावा॥
सोई भ्रू विलास खगराजा * नाच नटी इव सहित समाजा॥

इत्यादि २ माया का स्वरूप समझो—

माया खल नृतकी विचारी, माया सब सिय माया माहू।
श्रुतिसेतु पालक राम तुम जगदीश माया जानकी।
यनमाया वश वर्ति विश्वमखिलं ब्रह्मादि देवा सुरा।

इस प्रकार से तीनों का स्वरूप जान कर मनन करे।

प्रश्न (३)—सरकार ! सुना है कि बिना श्री हनुमन्त लाल जी के कृपा के प्रभु दर्शन प्राप्त नहीं हो सकते। तो श्री हनुमान जी की कृपा कैसे प्राप्त की जा सकती है, सो कहिये :—

उत्तर :—श्री हनुमन्तलाल जू सरकार के नाम और चरित्र से बड़े प्रसन्न होते हैं। उनको यथा शक्ति सरकारी नाम और चरित्र सुनाना चाही। पाठ में बत्तीस प्रकार के दोष लग जाते हैं—उनसे सावधान रहे-नहीं तो पाठ निष्फल जाता है। परन्तु नाम को किसी भी प्रकार से जपे तो भी सुफल होता है। फिर उनके गुरुदत्त हनुमत मन्त्र का विधि पूर्वक क्रिया सहित जप करें तो भी वशीभूत होते हैं। एक स्तोत्र बताते हैं। इसको सप्रेम गाकर नित्य २५००० नाम हनुमान जी को सुनावे तो निश्चय ६ मास में हनुमान जी की कृपा प्राप्त हो।

श्री हनुमत् स्तोत्रम्

संकट मोचन नाम तिहारौ है, संकट काहे न मोचत हौ जू।
बंदि निवारहु संतन की बलि, बैठि कहा अब सोचत हौ जू॥
वृद्ध भये किधों भूल गये प्रण, कै लखि काल सँकोचत हौ जू।
साँच कहौ हनुमान बली उठि, काहे न दुष्ट दबोचत हौ जू॥१॥
तीनहुँ लोक अँधार भयो अति, धर्म सुकर्म भये गति हीना।
केशरि नन्दनि लील लियौ रवि, कीजे कहा सब मंत्र सु कीना॥
आय सबै गुण गाय भली विधि, नाथ रिझाय तुम्हें वर दीना।
मातु हँसाय कपोल ते भानुहिं, दीन छुड़ाय मिट्यो दुख पीना॥२॥
बालि के बन्धु को सोच हर्यो तुम, दै बल बांह अशोक बसायो।
श्री रघुनाथहिं आनि मिलायसि, प्रीति कराय सुराज दिवायो॥
दूरि किये दुख दोष कुसंकट, पावन पुण्य तिहूँ पुर छायो।
सो बलि बुद्धि विचार कर्यौ हित, आतुर मैं शरणागत आयो॥३॥
पालत हो शरणागत के खल, पालक हो कपि कुंजर धीरा।
बानर रूप धर्यो अति सुन्दर, पावन परम सु रुद्र शरीरा॥
केवल सो परमारथ के हित, हेरि हिये देखउ कपि बीरा।
बैठि रहेउ धरि मौन कहो कस, भक्त सहैं इत दारुण पीरा॥४॥
लै मुदरी गढ़ लंक गये तुम, कौतुक ही कपि सिन्धु अपारा।
सुरसहिं जीति हनी दुख दायक, मारग में दुष्ट दारुण दारा॥
पैठि गये पुर मांहि अभय धरि, देह लघू निशि सहित विचारा।
खोजि थके सिय पाये नहीं तब, बैठि अटा प्रभु नाम सँभारा॥५॥

हे करुणानिधि नाम हरो दुख, सीते वेगि दिखाइये स्वामी।
हेरि थक्यो कहुँ पायो नहीं प्रभु, कीजे कहा अब अंतरजामी॥
देखि परै प्रति भौन हजारन, सयन किये खल खेचर कामी।
नाथ विना मम कौन यहाँ, चहुँ ओर लखौं विकटानन वामी॥६॥
सोचत ही गइ बीति निशा तव, नाम कृपा एक भौन लखायो।
राजत भक्त विभीषण जू जहँ, हर्षि चले द्विज रूप बनायो॥
नाम सुनाय चिन्हारि किये तव, तासन भेद सिया कर पायो।
नाइ परस्पर शीश चले कपि, होइ विदा हिय मोद वढ़ायो॥७॥
सीतहिं भेंटि प्रवोधि भली विधि, पाइ रजाइ अशोक विदारयो।
बीर विशाल हनै करि कौतुक, अक्षय राज कुमारहिं मारयो॥
बंधन के मिस रावण की तुम, जाइ सभा अभिमान निवारयो।
दीन्ह सुवोध न कानि करयो खल, कोपि तबै गढ़ लंक उजारयो॥८॥
पूँछ बुझाइ वहोरि सिया ढिग, आय सु सादर शीश नवायो।
पाइ अशीश रजाय चूड़ामणि, हर्षि चले उर आनन्द छायो॥
नाम प्रताप कियो अति दुर्घट, काज चढ़े नभ वेग वढ़ायो।
लीलहि लाँघ वहोरि पयोनिधि, कीसन के तुम प्राण वचायो॥९॥
आइ सँदेश दियो कपिराजहिं, जानि बली उठि कंठ लगायो।
जाय सबै रघुवीरहिं सों, सब हाल कह्यो प्रभु, के मन भायो॥
हौं हनुमान तुम्हार ऋणी अब, राम कह्यो कपिराज सिहायो।
देउँ कहा प्रिय तोहि लियो मोहि, मोल अनूप संदेश सुनायो॥१०॥
साजि चढ़े दल वाँधि पयोनिधि, घेरि लियो गढ़ लंकहि जाई।
होन लग्यो संग्राम महाभट, भूरि हने रण सहित सहाई॥
कोपि तबै घननाद निशाचर, लक्ष्मण पर खर शक्ति चलाई।
लाइ सजीवन दूर कियो दुख, हर्षि मिले उठिके रघुराई॥११॥
जाइ पताल हत्यो अहिरावण, नाथ सो जानत हौं बिधि नीके।
हाथ गदा गिरि धार घने खल, मार किये रण में अति फीके॥
रावण आदि दले रजनीचर, काज किये रघुनाथ वली के।
रामहिं आनि मिलाय दई सिय, संकट सोच हरे सब जी के॥१२॥
राज सुदीन विभीषण को सुर, संतन केरि कुसंकट टारे।
संकट मोचन नाम परयो तव, ताहि ते श्री रघुवीर दुलारे॥
हे हनुमान सुजान सुनो जन, आरत की विनती कछु प्यारे।
भक्त सहैं विनु कारण हीं दुख, मोचत काहे न हो वल भारे॥१३॥
कारण कौन न वूझि परै जेहि, लागि धरी इतनी निठुराई।
भोरहि ते तब द्वार दयानिधि, नाम रटौं प्रभु को लय लाई॥
ऐतेहु पै न प्रसीदत हो कछु, आइ कहा मन में गरुआई।
जानि परी कछु आलस के बस, बोरिहो नाम प्रताप की नाई॥१४॥

कीजै सोई जोइ बूझि परे जग, मैं प्रभू होय न लोग हँसाई ।
लोक प्रसिद्ध सो नाम तिहारो है, संकट मोचन हे कपिराई ॥
ता मधि लागे न दोष कहूँ, इतनी विनती सुनिये मन लाई ।
प्रेमलता तेहि लागि पुकारत, बारहि बार सुनाइ सुनाई ॥ १५ ॥
श्री रघुनायक पायक हौ कपि, नायक हौ सब लायक लोने ।
दायक हौ मन वांछित के वर, धायक हौ दश चारिहु भोने ॥
भायक हौ सिय रामहिं के मन, गायक हौ गुण केशरि छोने ।
घायक कोटि कुसङ्कट के जग, धंकट वीर न तो सम होने ॥
सङ्कट मोचन पोडसी, पाठ करै रटिनाम ।
प्रेमलता हनुमान ढिग, सो पावै मनकाम ॥

प्रश्न (४)—श्री वैष्णव, कृपा पात्र राम भक्तों के लक्षण बताइये, जिसके कारण वे इसी जन्म में प्रभु सामीप्यता के अधिकारी बन जाते हैं :—

उत्तर :—

सुनहु उपासक के गुन जेते * कहि न सकत श्रुति सारद तेते ॥
नाम रूप प्रभु लीला धामा * सेवहिं होइ अनन्य वशु यामा ॥
करत राम पद दृढ़ विश्वासा * अपर देवतनि की नहिं आशा ॥
रँगे रहहिं प्रभु भजन सुरंगा * सादर करहिं सु सन्तनि संगा ॥
पाँचौ रस उपासना भेदा * जानहिं सब उर परम अखेदा ॥
डरैं न कालहु करैं न पापा * रटैं नाम नाशक त्रय तापा ॥
तिलक छाप कण्ठी गर माला * युगल मंत्र उर परम रसाला ॥
षट विकार जित अनघ अकामा * अचल अकिंचन सुचि सुख धामा ॥
सावधान मानद मद हीना * धीर धर्म गति परम प्रवीना ॥
निज गुन श्रवन सुनत सकुचाहीं * परगुन सुनत अधिक हरषाहीं ॥
तजहिं सकल उर ते जग नाते * परम अनन्य भक्ति रस राते ॥

दो० अलिन वस्तु मासादि मद, अमल तमाकू भङ्ग ।
खात पियत तिन्ह केर ते, करहिं न कबहूँ संग ॥

सम शीतल नहिं त्यागहिं नीती * सरल सुभाव सबहिं सन प्रीती ॥
जप तप व्रत दम संयम नेमा * गुरु गोविंद विप्र पद प्रेमा ॥
विरति विवेक विनय विज्ञाना * बोध जथारथ वेद पुराना ॥
दंभ मान मद करहिं न काऊ * भूलि न देहिं कुमारग पाऊ ॥
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं * परुष वचन कबहूँ नहिं बोलहिं ॥
प्रभु प्रतिकूल पदारथ जेते * खोजि खोजि सो त्यागहिं तेते ॥
प्रभु अनुकूलनि ते अति प्रीती * करत सदा त्यागत नहिं नीती ॥
तन सम्बन्धिनि निज सम करहीं * वेष दिवाय सकल अघ हरहीं ॥
वैष्णव धर्म हीन के भोजन * करत न उत्तम वैष्णव जो जन ॥

सेवहिं मन वच क्रम गुरु चरणा * मोते अधिक जानि करि परणा ॥
गुरु चरणोदक सीथ प्रसादा * लेत नेम करि हरण विषादा ॥
तुलसी सहित अशन जल आदी * अरपि मोहिं पुनि पावहिं स्वादी ॥
वैष्णव धर्म पंथ में धीरा * पियत न कबहुँ अनछनों नीरा ॥
श्रृङ्गारादि रसनि कर ध्याना * होत जथारथ हृदय सुजाना ॥
निवसहिं जो वे गेहहु माहीं * भजहिं प्रभुहिं दूसरि गति नाहीं ॥
उपदेसहिं संगिनि नित एही * भजहु भाव सियराम सनेही ॥
का षट सम्पति का सरना गति * अर्थ सुपंचक का वैश्नवमति ॥
कवन अवस्था सेवा ध्याना * रसनि केरि वर भाव सु ध्याना ॥
कवन रूप रँग रस उपासना * भाव प्रकार सुभेद वासना ॥
संस्कार का पंच सुहाये * भव तारक जो वेदनि गाये ॥
अंतष्करन विषय इन्द्री गन * का जप तप का प्रान पंच अन ॥
कहा सु वैष्णव धर्म स्वरूपा * कहा निजातम रूप अनूपा ॥
तत्व त्रय का रहस तीन वर * कहा विशिष्टाद्वैत सुमत पर ॥

शिरी सम्प्रदा केर का, असली दृढ़ सिद्धान्त।
जाने यह वर भेद सब, उत्तम वैष्णव सन्त ॥

प्रश्न—(५) भक्ति के भेद भाव व प्रकार वर्णन कीजिये।

उत्तर—(१) भक्ति के रूप में तीन भेद हैं:—
(क) विशुद्ध—ईश्वर भावना से
(ख) पंचरस रूप।
(ग) प्रेयान:—सेवक सेव्य भाव से
(२) गुन भेद से भक्ति के दो रूप
(क) साधन (ख) सिद्धि भक्ति
(३) फल भेद से तीन प्रकार:—
(क) द्रष्टा फला—जिसका फल इसी लोक में मिल जावे
(ख) अद्रष्ट फला—जिसका फल परलोक में मिले
(ग) द्रष्टाद्रष्ट फला—जिसका फल यहाँ भी मिले और परलोक भी बने (उदाहरण में विभीषण जी)
(४) अधिकारी भेद से दो प्रकार:—
(क) गौणी भक्ति-इसके चार भेद-ज्ञानी-जिज्ञासु-अथार्थी-आर्त
(ख) पराभक्ति—वालमीक जी कथित १४ प्रकार के भक्तों के हृदय में प्रभु वास बताये अनुसार।
(५) भागवत में कही गई—श्रवण-कीर्तन इत्यादि नव प्रकार की है
(६) मानस में कही गई—सवरी के प्रति नवधा भक्ति है

(७) वैष्णवी भक्ति के द्वादश प्रकार यह हैं :—

प्रथम भक्ति वैष्णवी सुभेदा * संस्कार धारै निज देहा ॥
दूसरि भक्ति सुगुरु सेवकाई * करै कपट छल मान विहाई ॥
गुरु सेवा विनु मम पद माहीं * प्रीति प्रतीति होत कछु नाहीं ॥
तीसरि भक्ति सजातिन संगा * करत चढ़ै उर अनुपम रंगा ॥
चौथी भक्ति सुनौ तुम ताता * पढ़ै सुनैं मम भक्तिनि गाथा ॥
पञ्चम भक्ति सु षट शरणागति * षट सम्पति सह धारहिं सुचिमति ॥
षष्टम भक्ति रटन सियरामा * सब विधि सो दायक मन कामा ॥

सप्तम भक्ति सरूप प्रभु, वत्तिस दोष विहाइ ।
पूजै विधिवत लाय मन, मुदित होइ गुन गाइ ॥

अष्टम भक्ति सु प्रभु गुन ग्रामा * गावैं सुनैं गुनैं वसुयामा ॥
नवम भक्ति मम धाम में वासा * करै सनेम सश्रद्धा खासा ॥
दशम भक्ति प्रभु मानस पूजा * करै भावना भरोस न दूजा ॥
प्रेमाभक्ति एकादश रूपा * परिकर होय तजै जग कूपा ॥
भक्ति द्वादसी परा उर आवत * प्रेमहुँ की तव दसा वहावत ॥
द्वादस भक्ति अराधहिं साधक * आत्मज्ञान दृढ़ लहहिं अवाधक ॥
द्वादस में एकौ दृढ़ धारै * आप तरै भव अपरनि तारै ॥
आत्म ज्ञान विनु सहज सरूपा * लखत न जीव परे भव कूपा ॥

द्वादश भक्ति अराधक, साधक अति प्रिय मोर ।
करौं साहि तिन्ह की सदा, नासि कु संकट घोर ॥

प्रश्न—(६) श्रृङ्गार रस के भेद भाव वर्णन कीजिये :—

उत्तर :—शास्त्रोक्त ६ रसों में उपासना के कारण ५ रस माने गये हैं। इन में से श्रृङ्गार रस रसराज और सब रसों के कारण हैं। साक्षात् प्रभु स्वरूप ही हैं। श्रुति कहती है "रसौवैसः।" श्रृङ्गार रस के अष्ट भेद हैं :—(१) रसोत्तम (२) रस उद्दीपन (३) रसनायक (४) प्राप्ति शक्ति (५) नायका भाव संचारक (६) किशोर अवस्था (७) स्थायी सुख (८) रस कारण।

श्रृङ्गार रस के चार अंग हैं :—

(१) स्थाई—इसके ६ भेद हैं रति, हास्य, शोक, क्रोध, उत्साह-भय, जुगुप्सा (घृणा) आश्चर्य, ज्ञान (निर्वेद)। हास्य के तीन भेद उत्तम-मध्यम-अधम। उत्तम के दो भेद :—स्मित, हंसित। मध्यम के दो भेद :—विहँसित, उपहँसित। अधम के दो भेद :—अपहँसित, अतिहँसित।

(२) संचारीभाव-इसके ३३ भेद हैं :—निर्वेद, ग्लानि, चिन्ता, त्रास, शंका असूया, आमर्ष, मद, गर्व, श्रम, आलस्य, विषाद, मोह, जड़ता, वितर्क, स्मृति, दीनता, धृति, स्वप्न, निद्रा, उत्सुकता, अवहित्य, विवोध, व्रीडा, हर्ष, उग्रता, आवेग, उन्माद, व्याधि, अपस्याद, मरन, चपलता, जाग्रत ।

(३) अनुभाव—इसके ९ भेद हैं :--स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च स्वरभङ्ग, कम्प, अश्रु, प्रलय, वैवर्ण, जृम्भा, (जयांई) ।

(४) विभाव—इसके ११ भेद हैं :—लीला, विलास, विक्षिप्तिदान, विभ्रम, कुट्टुमित, विव्वोक्त, कटुभाषन, हेला, ललित, किल किञ्चत, विहृत ।
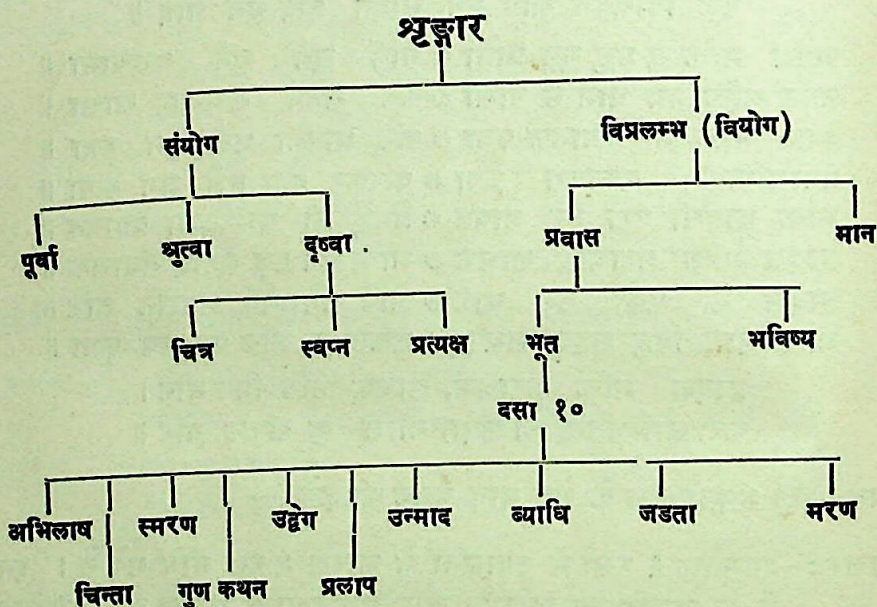
इस प्रकार रसराज के अनन्त भेद और प्रकार हैं, इनका भेद भाव जानने से ही रस का महत्व, आधीनता, और गम्भीरता, जानी जा सकती हैं। तभी भक्ति जो कि रस विशेष है उसकी वृद्धि होती है।

रसों का रंग तथा निवास :—

रस	रंग	निवास
शृङ्गार	श्याम	मुखपर
वात्सल्य	श्वेत	उदर में
सख्य	अरुण	भुजापर
दास्य	पीत	चरण पर
शान्त	,,	सर्वाङ्ग में

प्रश्न (७) आत्म स्वरूप का बोध कराइये ?

उत्तर :—

आत्म बोध दर्शन

पुरुष जगतपति राम हैं, जड़ चेतन जिउ नारि।
रमत सदा सो सबनि सँग, विविध सरूप सुधारि ॥
अपर नाम धारी पुरुष, करनी अवलनि केरि।
भूले आतम रुप निज, चिन्ह वाहिरी हेरि ॥
अवगुण वशु जो तियनि के, सो तिन्ह में भरपूर।
दरशत देखहिं ध्यान दै, जो वे निज निज ऊर ॥
साहस अनृत चपलता, माया भय अविवेक।
निर्दयता अरु अशुचिता, पुनि कामादि अनेक ॥
पराधीन जो रहत नित, पुरत न मन के काम।
करतब हीन बखानहीं, पुरुष पुरुष यह नाम ॥
सत्य पुरुष श्री राम में, लक्षण पुरुषनि केरि।
भरे अमित को कहि सके, नेति नेति श्रुति टेरि ॥
शरणपाल सर्वज्ञ शुचि, सत्य सुव्रत सु उदार।
अतुलित करुणा कोष बल, ज्ञान विवेक विचार ॥
धीर वीर गम्भीर अति, सरल समर्थ स्वतंत्र।
ब्रह्मादिक सुर सिद्ध शिव, पूज्य जपत जेहि मंत्र ॥
देव दनुज नर नाग मुनि, सकल चराचर जीव।
नारि रूप सब बदत बुध, राम सवन के पीव ॥
सब कोउ भाषत राम की, माया यह संसार।
तेहि कर मालिक राम इक, पति स्वामी भरतार ॥
सबहिं रमावत आप सँग, स्वयम् रमत सब साथ।
तेहि लगि भाषत राम इन्हि, बुध रघुपति रघुनाथ ॥
भोग रुप संसार यह, भोक्ता पुरुष पुरान।
बहु विधि सब कर लेत रस, धरि बहु रूप सुजान ॥
देखि सूँघि असपर्स करि, पहिरि चखि सुनि बोलि।
रमि रमाय भोगत सबहिं, यहि विधि प्रभू श्रुति मोलि ॥
रसो वैसः श्रुति कहत जेहि, सब कर रस जो लेति।
रसिक भक्त आतमनि सँग, विहरि अधिक सुख देत ॥
विमुखी करुये कुकरमी, रुखे ज्ञानी जीव।
तिहि दिशि लखत न भूलिहूँ, प्रेमलता के पीव ॥
रसिक शिरोमणि रसनिधि, रस ज्ञाता रस रूप।
रसिकन सँग विलसत सरस, रस भोक्ता सु अनूप ॥
पुरुष ज्ञान मदमान में, जो जन चकनाचूर।
ते पर पदहूँ पाय पुनि, गिरत प्रभू ते दूर ॥

सक्ति भाव ते भक्ति करि, तेहि द्वारा रटि नाम ।
लहहिं प्रभुहिं जीवात्मा, भाषत अस श्रुति साम ॥
भक्ति विना प्रभु मिलत नहिं, भक्तिन बिनु तिय भाव ।
तेहि लगि प्रभु जेहि विधि मिलैं, सुजन सु करत उपाव ॥
भक्ति रूप सिय तासु यह, शक्ति चराचर जीव ।
तेहि लगि करति न लाज केहु, सेवत आपन पीव ॥
मुनि जन ससुर पितादि के, सन्मुख निज पति साथ ।
विलसत बैठत लाज तजि, अंसन डारि सु हाथ ॥
लीला हित सिय की सखी, धारेउ विपुल सरूप ।
सासु ससुर गुरु मातु पितु, जन भ्रातादि अनूप ॥
जनकादिक ज्ञानी महा, निज पति रामहिं जानि ।
पुत्रिन सह निज आतमा, अरपि दीन सुखमानि ॥
तिमि श्री दशरथ अरपेऊ, आतम निरखि वियोग ।
यह प्रसंग अति गूढ़ तर, वेगि न जानहिं लोग ॥
ज्ञान योग तप निष्ठ मुनि, बन महँ रामहि देखि ।
पति पहिचानि सुभाव तिय, प्रगटेउ उरनि विशेखि ॥
पुरुष भाव अज्ञान अति, तप बिनु नाश न होय ।
अछत ताहि सखि रूप निज, लखि न सकहिं जन कोय ॥
लीलाहित इत आतमा, आवै नर तनु धारि ।
बनैं सत्य सोइ रूप निज, प्रेरक प्रभुहिं बिसारि ॥
श्रुति पुराण आचार्य सब, आतम ज्ञानी जौन ।
भाषत आत्म सरूप तिय, मानत अज्ञ न तौन ॥
बुद्धि विषय सुख में सनी, अमल कीन मद पाँच ।
हम हमता रुज ग्रसेउ उर, समुझत झूठ न साँच ॥
जड़ नरत्व वहिरंग जो, मित काली अभिमान ।
फुर मानेउ सोइ आत्म निज, असली रूप भुलान ॥

इस प्रकार से आत्म को मनन करे ।

॥ सप्त प्रश्न समाप्तम् ॥

श्री मिथिला परिक्रमा

इस प्रकार से आनन्द पूर्वक सत्संग शङ्का समाधान करते हुए काशी बास आनन्द पूर्वक प्रति वर्ष होता रहा ! फिर रामनगर की लीला देख कर आप मिथिला जी पहुंचे । अब आप के द्वरा श्री परमानन्द शरण जी-श्री सद्‌गुरु राम शरण जी—श्री दाशरथी शरण जी—श्री सिया रघुनाथ

शरण जी—श्री सीताराम शरण जी इत्यादिक परम धार्मिक धीर वीर वैराग्यवान भजनानन्द मूर्ति शिष्य शरणागति हो चुके थे। ये लोग श्री महाराज जी की प्रत्येक लीला में सहयोग व साथ देते रहते थे। और इसी प्रकार आजन्म साथ इन्होंने निभाया और बहुत से रहस्य और कृपायें प्राप्त की। अब महाराज जी का अनुभव सिद्ध "श्री सतगुरु कृपा प्रकाश" नामक ग्रन्थ समाप्त हो चुका था, तथा लगभग ३३ ग्रन्थों में से (जिनकी सूची आदि में दे दी गई है) अधिकांश प्रकाशित होने लगे थे। अब आप की रुचि मिथिला धाम के प्राचीन लुप्त तीर्थों को उजागर करने और जीर्ण स्थलों का जीर्णोद्धार करने की अकांक्षा उत्पन्न हुई। "फल अनुगामी महीप मनि, मन अभिलाष तुम्हार" के अनुसार मनोर्थ सिद्धि में अधिक देर न लगी। 'मिथिला महात्मय' और पुराणों के अनुसार खोज करके अष्टकूप :—सिरध्वज कूप—सतानन्द कूप—अक्रूर कूप, सैमन्त कूप—विद्या कूप और ज्ञान कूप इत्यादिक और ७२ सरोवर :—पुरन्दर सर, दशरथ सर, भार्गव सर, माण्डना सर, रक्ष सर, विडाल सर, रूकमणी सर, जनक सर, सुनैना सर, बलदेव सर, गोपाल सर, धनुष सर, पाद प्रक्षालन सर, पयश्वनि सर, लक्ष्मण सर, सन्कादिक सर, लोमश सर, जानकी कुण्ड, विहार कुण्ड, गंगासागर, अंगीरा सर, गौतम सर, विशिष्ट सर इत्यादिक का ठीक २ पता लगा कर नेपाल राज्य के दीवान द्वारा जो कि किशोरी जी की इच्छा से स्वतः ही दर्शन के लिये उपस्थित हुए, सब का जीर्णोद्धार करा कर प्रत्येक के नाम का पत्थर व सरोवरों के बीच में खम्भा गड़वाया। २ या ३ वर्ष में यह कार्य्य सम्पादन हुआ। इस के बाद आप की दृष्टि मिथिला धाम की 'मध्यमा परिक्रमा' की ओर गयी। इस परिक्रमा में जंगल होने, तथा कोई मार्ग स्पष्ट न होने, और महात्माओं का पूर्ण सहयोग न होने, व गृहस्थों में महात्मय का विशेष प्रचार न होने के कारण यह प्राय ? लुप्त हो चली थी। महाराज जी ने ५० मूर्ति के साथ परिक्रमा उठाई और ढोलक झाझ पर अखण्ड कीर्तन करते हुए शास्त्रोक्त ५ दिन की परिक्रमा के मार्ग के ग्राम और लोगों को जाग्रत करते हुए, हनुमान नगर, कल्याणेश्वर, गिरजाबाग, मटियानी, जलेश्वर, मड़ई, ध्रुवाश्रम, कंचन बन, पर्वता, धनुष खण्ड, सप्त ऋषि सरोवर, विमला सर, रामसरोवर, विश्वामित्राश्रम और विहार कुण्ड वास करते हुए १५ दिन में पूर्ण की। कवित्त बोलना, मिथिला बिहारी का डोला चलना, मिथिला महात्म की कथा तथा उपदेश होना, परिक्रमा भर नाम ध्वनि होते चलने से लोग आकर्षित होने लगे। और इधर महाराज जी के शिष्य शिष्याओं की संख्या बढ़ने लगी जंगल कट गये। जल का सुपास हो गया। बूढ़ों को भी परिक्रमा सुलभ हो गई। फल यह हुआ कि १० वर्ष बाद ही १५-२० हजार व्यक्ति परिक्रमा का लाभ प्रति वर्ष उठाने लगे। फाल्गुन अमावस्या को जनकपुर से चलकर द्वादशी को परिक्रमा समाप्त कर धाम में

लौट आते, चतुर्दशी को अन्तरग्रही कर, होली उत्सव महल में मना कर नये संस्कार लेकर घर लौटते। कितनों को स्वप्न में, कितनों को प्रत्यक्ष में अनुभव होने लगे। शुद्ध अन्तःकरण कराने वाला १५ दिन पर्यंत सारा मार्ग नाममय हो जाता। यह अद्भुत कार्य्य तथा जीवों उद्धार व लाभार्थ यह विशेष कार्य्य सम्पादन हुआ। अब उन्हीं के वंश के लगभग एक हजार मूर्ति गृहस्थ और विरक्त विशेषतः भाई श्री परमहँस सिया सुन्दरी शरण जी, प्रिया प्रीतम शरण जी राम जगन्नाथ शरण जी, राम दयाल शरण जी, भरत शरण जी सिया भुवनेश्वरी शरण जी इत्यादि और जनक पुर, अयोध्या, सीतामढ़ी आदिक धामों के महात्मा इस कार्य्य को यथा शक्ति पूर्ववत कीर्तन पूर्वक वाहन कर रहे हैं। और बहुत से जीव प्रभु सन्मुख हो रहे हैं। नाम वेष के प्रचार के हेतु महान् कार्य्य सम्पादन हुआ। जिससे कि महाराज जी का नाम अमर हो गया और ख्याति शताब्दियो तक के लिये फैल कई। यह परिक्रमा आपने ३०-३२ वर्ष पर्यन्त की तथा कराई—इस समय के बहुत चरित्र हैं। जिनका उल्लेख ग्रन्थ बढ़ने के कारण करना उचित नहीं। बहुत सेवक लोग चेत गये, जो आज तक स्थान २ पर निस्वार्थ भाव से सीधा सामान प्रदान करते है तथा हर प्रकार की सेवा को प्रस्तुत रहते हैं। यह श्री मालवीय जी के विश्व-विद्यालय स्थापन करने के समान ही महान तथा कल्याण कारी यह कार्य्य सम्पादन हुआ। आप की बार २ बलिहार।

श्री सतगुरू निवास सीतामढ़ी की स्थापना

महाराज जी को घूमने तथा वृक्षों के नीचे वास करने की वृति से शिष्य शिष्याओं को जाने आने दर्शन करने और सत्संग लाभ उठाने में बड़ा कष्ट होने लगा। नेमी प्रेमी लोगों को भी दर्शन दुर्लभ रहता। सब लोगों ने मिलकर वारम्वार महाराज जी से आग्रह किया कि सरकार कहीं पर कुटिया बन जाय तो बहुत सुपास होगा महाराज जी कुटिया के पक्ष में न थे। आप ने कहा :—

संत रहैं अलमस्त जक्त में रामनाम गुण गाते हैं।
ऋधि शिद्धि सुख सम्पति सारा, संग चलें, जित जाते हैं॥
भक्ति ज्ञान वैराग्य बोध वर जीवों को सिखलाते हैं।
प्रेमलता करि संगति जिनकी पापिउ मुक्ति पाते हैं॥

परन्तु भगवान ही जब-भक्तों के आधीन हैं, तब उनके जन-भगवान के आधीन क्यों न हों। महाराज जी ने फरमाया "अच्छा किशोरी जी के धाम में लक्ष्मणा जी के किनारे निर्जन स्थान में कोई आश्रम बनालो।" बस फिर क्या था। बातों बातों में सब प्रवन्ध हो गया किशोरी जी की

सहचरी श्रीमति राम प्रिया और सिया सहचरी तथा रामसखी जी इत्यादिकों ने जमीन लेकर आश्रम की नींव डाल दी। किशोरी जी की कृपा से बड़ा दिव्य आनन्द मयी-मन रमन एकान्तिक स्थल लक्ष्मण जी के हृद में सिद्ध-बावा की कुटिया के पास पीत रंग का आश्रम बना-देख कर सब लोग बड़े हरषित हुए। और आकर आनन्द पूर्वक दर्शन सत्संग लाभ उठाने लगे। कुछ काल पश्चात भाई साहिब सद्‌गुरू रामशरण जी की अनुमति से सिया सहचरी जी ने ठाकुर जी की स्थापना-दालान का निर्माण कराया और कुछ भूमि स्थान में लगादी। अब प्रायः जन्म उत्सव-झूलन-होरी-गुरू पूर्णिमादि उत्सव स्थान में आनन्द पूर्वक होने लगे। सती सेवक आकर जन्म सफल करने लगे। कितने ही जीव सत्संग द्वारा प्रभु सन्मुख होने लगे।

अब महाराज जी की वही वृति कि गुरू पूर्णिमा व झूलन के समय श्री अवध में, रामलीला के समय काशी—रामनगर में, विवाह पञ्चमी और परिक्रमा के समय जनकपुर धाम में और शेष समय सीतामढ़ी में व्यतीत करते।

श्री सदगुरू सदन गोलाघाट अयोध्या की महन्थी तथा उसका त्याग :—अनन्त श्री अखिल जीवोद्धार सन्त शिरोमणि श्री स्वामी राम वल्लभाशरण जी महाराज ने अपनी गद्दी का उत्तराधिकारी अपने प्रिय और सर्व प्रधान शिष्य श्री महाराज को नियुक्त किया। श्री दादा जी की साकेत यात्रा के पश्चात् उक्त गादी रिक्त हुई और संत मंडली तथा सम्बन्धी भक्त समाज ने आप को महन्थी स्वीकार करने का आग्रह किया। आपने इस प्रार्थना को अस्वीकार करते हुये कहा कि मुखिया कभी न बनना चाहिये और यह सब वृत्ति भजन में बाधक होती है तथा 'जमीन जोरू जर' यह तीनों झगड़े की जड़। इस स्थान के प्रपञ्च में हम नहीं पड़ेंगे। इसके उपरान्त श्री किशोरीरमण प्रसाद जी काशी वालों ने जो कि ट्रस्ट के अध्यक्ष हैं तीन मूर्ति के नाम की चिट्ठी श्री महाराज जी के चित्रपट के सम्मुख छोड़ी उसमें फिर श्री महाराज जी के लिये महन्ती की आज्ञा निकली, परन्तु आपने अपने अपूर्व त्याग का ही परिचय दिया। तव श्री किशोरी रमण प्रसाद जी ने कहा कि स्थान के अधिपति आप हैं आप स्वतः चलावें या किसी के द्वारा चलवायें जिम्मेदारी आप की होगी। इसके पश्चात आपके छोटे गुरूभाई श्री राम कृपालु शरण जी महाराज श्री मिथला दास जी को साथ लेकर काशी जी में श्री संकट मोचन हनूमान जी के मंदिर में श्री महाराज जी के पास आकर महन्ती का अधिकार प्राप्त करने के लिये प्रार्थना किये। महाराज जी ने सहर्ष अपना अधिकार उनको प्रदान किया। सब उपस्थित संत तथा भक्त मंडली ने इस भाव तथा उदारता का स्वागत किया और मुक्त कंठ से कहा कि त्याग मूर्ति परम हंस श्री सियालाल शरण जू महाराज की जय जय कार हो।

सं १९९० माघ कृष्णमावस सोम दिन ईश्वरी लीला

पद—प्रभुजी की महिमा अपरम्पारा ॥ टेक ॥
पल में करैं सृष्टि की रचना, पालन पुनि लयकारा ॥ १ ॥
छिति जल पवन अनल नभ पांचो, तत्वनि केर पसारा ।
रचि प्रगटहिं अद्भुत जग नाटक, तेहि मँह करत विहारा ॥ २ ॥
करत भरत संघरत होत नहिं, हरष विषाद विकारा ।
सब विधि अगम प्रताप प्रबल अति, वेद पुरान उचारा ॥ ३ ॥
का जानैं प्रभु की गति पामर, जीव ग्रसे मद मारा ।
करिहैं कहा खलक में सियवर, कौतुक पलक मझारा ॥ ४ ॥
सम्वत उनइस साल सुनब्वे, अर्धमाघ शशिवारा ।
फटी भूमि हलि कोस हजारनि, प्रलयकाल करि डारा ॥ ५ ॥
छन महँ गिरे भवन बहु प्रानी, मरे भयेउ दुख भारा ।
हा हा कार परेउ सब देशनि, को केहि करै सम्हारा ॥ ६ ॥
महि ते उड़ैं नीर के बम्बा, रेत लिये चिकरारा ।
जहँ देखौं तहँ भूमि जलामय, भई बहहिं बहुधारा ॥ ७ ॥
टूटेउ पुल स्टेशन पटरी, परम सु दृढ़ बरियारा ।
महिनन आवागमन रेल कर, मिटेउ सुतार उखारा ॥ ८ ॥
तिरहुत प्रांत विहार मध्य बहु, नगर सु भयउ उजारा ।
रहहिं कहाँ जन दुखित भवन बिनु, फिरत लिये सुतदारा ॥ ९ ॥
हलै भूमि नित पानी बरसै, उमगि चलेउ नद नारा ।
मिलत न ठौर वास हित जीवन, सूखल सुखद सुढ़ारा ॥ १० ॥
भयउ सशंकित जीव सकल जग, अति दुख टरत न टारा ।
जन धन गेह बसन बासन भये, धर्म कर्म संघारा ॥ ११ ॥
बाचे जे सियराम बचाये, कृपाशील आगारा ।
प्रेमलता तिन्हिकर निसिवासर, रटहु नाम यकतारा ॥ १२ ॥

दोहा—दसौ दिसनि व्यापउ महा, कोलाहल भूचाल ।
धर्म कर्म छूटेउ सकल, भा अति आफत काल ॥
रहेउ नाम अबलम्ब इक, लोगनि कहँ सुख रूप ।
छायउ गामनिगाम ध्वनि, जय सियराम अनूप ॥

॥ इति श्री प्रेमलता वृहद चरित्रे तृतीय खण्डम् समाप्तम् ॥

जय सियाराम जय जय सियाराम । जय सियाराम जय जय सियाराम ॥
जय सियाराम जय जय सियाराम । जय सियाराम जय जय सियाराम ॥

॥ श्री प्रेमलतिकायै नमः ॥

चतुर्थ चमत्कार खन्ड

भूत निवारण—चित्रकूट में विचरते हुए एक जंगल में संध्या हो गई। पास में हनुमान जी का इकान्ति मन्दिर था। किवाड़ा बन्द थे। चबूतरे पर आसन किया। रात्रि को १० वजे के लगभग भूत प्रेतों का आक्रमण हुआ। अब आपके पास सिवाय नाम के और कोई साधन रक्षा का न था। दृढ़ होकर उन भयानक मूर्तियों से २ घंटे तक सियाराम नाम का युद्ध होता रहा। वे लोग चबूतरे के नीचे रहते। इनको स्पर्श तो न कर पाते, परन्तु भयानक शब्द व शक्ल बनाकर डराते। जिधर से नाम रूपी तीर छूटते उधर से हट जाते, तब दूसरी ओर से वार करते इस प्रकार संघर्ष होते १२ बज गये। रात्रि को मन्दिर में से गम्भीर शब्द "हूं हूं" का हुआ। उस शब्द के होते ही सब बाधा निवारण हो गई। और आप प्रमुदित होकर शयन किये। हनुमन्त लाल जी के कृपा के लिये धन्यवाद दिया।

अखण्ड भजन—एक बार चित्रकूट में वयो वृद्ध महात्माओं का समागम हुआ। हरि चर्चा होते हुए भजन का प्रसंग चला कि कौन कितना भजन करता है। एक मूर्ति बोले कि "महाराज हमारा तो एक लक्ष का नित्य का नियम है"। दूसरे बोले कि "हमारा सवा लक्ष का नियम है"। तीसरे बोले कि "हम एक संध्या थोड़ी प्रसाद निर्वाह मात्र सेवन करते हैं और केवल तीन घंटे सोते हैं।" बाकी समय लगभग इक्कीस घंटे सियाराम नाम ही रटते हैं। चाहे जितनी संख्या होती हो। एक वयोवृद्ध लम्बी श्वेत डाढी वाले महात्मा उस सभा में बैठे थे उन्होंने कहा कि यदि "तुम लोगों को भजन करना सीखना है तो मिथिला जी में ज्ञान कूप पर 'सियाराम' बाबा रहते हैं। वहाँ जाओ और उनका कुछ दिन साथ करो" २० घंटे भजन करने वाले महात्मा ने कहा कि "क्या इससे भी ज्यादा भजन हो सकता है"? वृद्ध महात्मा जी ने उत्तर दिया कि "जाकर देख क्यों नहीं लेते"। बस महात्मा जी तुरन्त यह आश्चर्य देखने के लिये मिथिला जी चल पड़े। विहार कुन्ड पर पता पूछा तो लोगों ने बता दिया तब ज्ञान कूप पर पहुँच महात्मा जी को देख दंडवत प्रणाम किया और पास ही में थोड़ी दूर पर भजन करने बैठ गये। महाराज जी किशोरी जी की कृपा से रहस्य को जान गये। बस दोनों का अपार, अखन्ड, स्वर, तान

उतार, चढ़ाव, अलाप-मद्र-तीव्र चाल के भेद भाव से तैल धारवत भजन प्रारम्भ हुआ। दोनों को रोमांश्च हो गया—हृदय गद्गद्‌ हो गया अश्रु धारा बह चली। भावना में तल्लीन हो गये। यह कौतुक प्रातः ७ बजे प्रारम्भ हुआ। चित्रकूट वाले महात्मा जी को ११ बजे दिन को एक सन्ध्या ही कुछ प्रसाद पाने का अभ्यास था। ठीक ११ बजे महाराज जी से बोले सरकार आप मधुकरी कब पाते हैं? यह संध्या कि सायङ्काल"। महाराज जी बोले। "महात्मा जी आप मधुकरी का ध्यान करते हैं कि भजन करते हैं। आपको जब इच्छा हो तब पाइये। हमें जब आवश्यकता होगी तब हम पा लेगें।" महात्मा जी चुप हो गये। चित्रकूट वाले महात्मा जी को रात्रि को ११ बजे से २ बजे तक ३ घंटा सोते थे। सो ११ बजे आसन पर बैठे हुए निद्रा आने लगी। महाराज जी बोले "महात्मा जी सूत जाओ—भजन में ऊँघना निषेद है" महात्मा जी ने तब बड़ी कठिनाई से, खड़े होकर, आँख धो कर अंगूठा खुजलाते हुए सोने के समय भजन निद्रा की मुद्रा में करते हुए बिताया—महाराज जी ने २—३ बार सावधान किया। किसी प्रकार भोर हुआ। महात्मा जी ने महाराज जी की प्रदक्षणा करके, दंडवत किया। महाराज जी मुस्करा कर पूछे "क्या बात है" महात्मा जी ने चित्रकूट की सभा का सब प्रकरण कह सुनाया और कहा कि मुझे दुर्भिमान उत्पन्न हुआ था कि इससे अधिक भजन सम्भव ही नहीं, सो छूट गया। पूछा कि सरकार इस मुद्रा में भजन कितने काल तक आप कर सकते हैं। महाराज जी बताये कि ३ दिन तक तो ऐसा करके अजमाया है। यह सुन महात्मा जी चरणों में पड़ गये। बड़ी स्तुति की और कहा कि "यह कलि के जीवों को तो सामर्थ के बाहर की बात है आप साधारण महात्मा नहीं हैं कोई विभूति विशेष हैं" ऐसा कह चले गये और सब समाचार चित्रकूट आकर सुनाया। तबसे भजन का नियम और संयम महात्माओं में विशेष हो गया। और नाम जापक जगत में इस घटना से बड़ा हलचल व उपकार हुआ।

सरकार का अनुगमन—एक बार स्वर्ण मंडप की ओर से श्री किशोरी जी के महल की ओर मिथिला जी में खेत २ नाम रटते हुए मस्त चले जा रहे थे। एक कृपापात्र महात्मा रतन सागर के पास नाम रट रहे थे। जोर से चिल्ला कर बोले कि "ऐ बाबा जी तुमको दया नहीं आती। इन दोनों सुकमार राजकुमारों को खेत के ढेलों में होकर क्यों घसीटते लिये जा रहे हो। राह से क्यों नहीं चलते?" महाराज जी ने यह शब्द सुन कर पीछे की ओर घूम कर देखा तो सुन्दर श्याम व गौर राजकुमारों को कूदते फाँदते पीछे पीछे चले आते देखा। हाथ जोड़कर विनय करने लगे और बोले 'प्रभु यह कार्य्य तो आपको उचित नहीं यों तो नाम रटने और विचरने में बाधा पहुँचेगी।" ऐसा कह कर दंडवत करके ऊपर देखा तो

दोनों मूर्ति अन्तर्ध्यान हो गई। धन्य है प्रभु की भक्त वत्सलता, और नाम जापक भक्तों का योगक्षेम वाहनता, यह घटना देख महाराज जी बड़े विस्मित हुए ? और अह्लाद में भर गये। आप के मुख से अनायास यह सवैया निकला :—
सवैया—[मेरे तो अधार एक सीताराम नाम हैं।]

काहू के अधार ज्ञान भगति विराग योग,
काहू के अधार जप दान तप धाम हैं॥
काहू के अधार व्रत नेम नृत्य गान तान,
काहू के अधार ध्यान भजन अकाम हैं॥
काहू के अधार बुधि विरति विवेक बल,
मेरे तो अधार एक सीताराम नाम हैं॥

गई बहोरि एक दिन मिथिला जी में, विहार कुण्ड, पर रात्रि को आसन किया। आप डोलडाल से लौटने पर देखते हैं, कि तिलक की थैली, आपकी कोई चोर चुरा ले गया है। बहुत खोजा, और पूछा, परन्तु कुछ पता न लगा। स्नान करके तिलक स्वरूप किये बिना ही रह गये। और आपने कुछ अन्न जल भी ग्रहण नहीं किया, और प्रतिज्ञा की, कि जब तक तिलक न कर लूँगा अन्न जल ग्रहण न करूँगा। और मन में विचारने लगे, कि यहाँ तो प्रत्यक्ष रूप में श्री किशोरी जी विचरती हैं, यहाँ चोर कैसा! उनकी रक्षा में कौन, चीज चुरा सकता है? इस प्रकार विचार मग्न व नाम रटन में संध्या हो गई। मन बड़ा खिन्न और उदास हुआ। इतने में एक छोटा सा साँवला बालक घुँघराले बाल वाला खेलता हुआ, सामने से आकर, आप से बोला, कि "बाबा जी" यह थैली किसकी है, हमको मिली है।" ऐसा कह थैली सामने रख कर गायब हो गया। आप बहुत प्रसन्न हुए, तिलक स्वरूप कर अन्न जल ग्रहण किया, और श्री किशोरीजी को, कृपा के लिये धन्यवाद दिया।

एक बार आप काशी जी में अस्सी संगम पर, तुलसी घाट पर बैठे हुए सियाराम नाम रट रहे थे। एक ब्रह्मचारी ने आकर तर्क करते हुए पूछा, कि नाम रटने से क्या लाभ? आप बोले कि नाम से बहुत फ़ायदा है। यह लोक और परलोक दोनों बनते हैं, खोई हुई वस्तु आय प्राप्त होती है......इत्यादि। ब्रह्मचारी यह सुनकर बोला, मेरे भी ५००) रु० खो गये हैं, क्या, यदि मैं यह सियराम नाम रटूँ, तो वह मुझे प्राप्त हो जायँगे? महाराज जी ने कहा 'अवश्य'। ब्रह्मचारी ने वहीं बैठ कर रात भर नाम रटा। सुबह ही एक मनुष्य खोये हुए रुपयों के मिल जाने की सूचना देने, दौड़ा हुआ आया। यह सुन कर वह (ब्रह्मचारी) बड़ा प्रसन्न हुआ, और श्री महाराज जी के चरणों में गिर पड़ा और पक्का नाम जापक बन गया। जीवन पर्यन्त नाम रटने का नेम लेलिये।

मृतक जियावना—आपके गुरू भाई श्री सियाविहारी शरण जी को मिथिला जी में हैजा होगया, दाँति बंद हो गई, हाथ पैर ठंडे हो गये। आप को बड़ी चिन्ता हुई, कि यह तो धाम तथा वेष दोनों को ही धब्बा लगेगा। यह विचारि ज्ञानकूप, और विद्याकूप के बीच की भूमि से श्री किशोरीजी का स्मरण करते हुए, थोड़ी सी धूल उठा कर कपड़े में छान, गिलास में घोल, चम्मच से मुँह खोल, सियाराम कहते हुए मुँह में डाला, डालते ही उन महात्मा ने नेत्र खोल दिये, और हाथ पैर हिलाने लगे। वही क्रिया दो तीन बार और करने से, चंगे हो गए। उस धूरि का साक्षात प्रभाव देख श्री महाराज जी ने एक थैली में, धूरि भर कर समय पर काम देने के लिए, बाँध कर रख ली। रात्रि को श्री किशोरीजी छोटी कन्या के रूप में आकर मिट्टी वहीं रखदेने और सिद्धाई न फैलाने के लिए, कह कर चली गईं। आपने प्रातः होते ही थैलियाँ खोल कर झाड़ दी, और अपराध की क्षमा माँगी।

एक बार काशी जी में, श्री संकट मोचन में राम जी के मंदिर के ऊपर दालान में एक गुरूभाई रोग ग्रसित हुए, व्याधि अधिक बढ़ गई, व नाड़ी छूटने लगी अल्पायु योग आ पहुँचा। बेहोशी में देखते हैं, कि यमदूत उनको लेने आरहे हैं। ये जोर से चिल्ला उठे "कि महाराज जी! महाराज जी! दूत पकड़ने आये हैं। बचाइये, सरकार-रक्षा कीजिये।" इतनी देर में एक तेज पुंज उतरता दिखाई दिया, उसमें से अलफी टोपा धारण किये हुए तेज पुञ्ज महाराज जी का रूप प्रगट हुआ, और "हूँ" शब्द करते हुए तिरछी भृकुटी किये नीचे उतरा। यह शब्द सुन, व रूप देख, दूत पराय गये। महाराज जी ने मस्तक पर हाथ फेरा, और अन्तर्ध्यान हो गये। गुरू भाई अच्छे हो गये और यह घटना का पत्र, महाराज जी को, जो कि उस समय सीतामढ़ी में थे, बड़ी विनय दीनता, अनुराग, और धन्यवाद देते हुए लिखा। महाराज जी ने उत्तर दिया कि "मुझे मालूम है जो घटना हुई है।" यह चमत्कार देख बड़ा आश्चर्य हुआ, और सद्गुरू भगवान की बार बार बलि गये।

एक बार सीतामढ़ी में श्री सिद्ध बाबा के स्थान पर श्री परमानन्द शरण जी की हैजे की बिमारी से मृत्यु होगयी। रात्रि का समय था सब लोग बहुत दुःखी हुए। इस समय वहाँ पर श्री सिया रघुनाथ शरण जी, सतगुरू रामशरण जी, सीतारामशरण जी, धनुषधारी शरण जी, इत्यादि उपस्थित थे। महाराज जी ने आज्ञा दिया कि ढोलक झांझ लाओ और कीर्तनकरो। श्री परमानन्द शरण जी का शव बीच में रख कर चारो ओर बैठ कर सब बड़े अनुराग पूर्वक कीर्तन करने में तल्लीन हो गये। पाँच छः घंटे कीर्तन होने के बाद भोर में ३ बजे शव हिला, और जयसियाराम करते हुए उठ बैठे

मानों सो कर उठे हैं। सब बड़े चकित हुए। और बोले श्री गुरूदेव भगवान जू की जय। इस प्रकार के नाना चरित्र हैं। केवल उदाहरणार्थ १—२ दे दिये जाते हैं।

श्री रामनामार्थ

एक बार आप ज्ञान कूप पर बैठे हुए थे। संत सभा लगी हुई थी। सतसंग हो रहा था। उत्तरा खण्ड के एक महात्मा सब तीर्थों का पर्यटन करते हुए मिथिला जी आये और कोई सिद्ध और विख्यात महात्मा का परिचय पूछा। लोगों ने ज्ञान कूप पर सियाराम बाबा का परिचय दिया। महात्मा ज्ञान कूप पर पहुँच महाराज जी का रूप-विरति-तेज देख मुग्ध हो गये। दण्डवत प्रणाम कर बैठे। और किशोरीजी की कृपा का तथा हनुमान जी की सिद्धि का मन्त्र पूछा। महाराज श्री सतगुरू रामशरण जी द्वारा उत्तम रीति से साङ्गोपाङ्ग कहला दिये। यह मनोभिलषित मनोर्थ की सिद्धि पाकर महात्मा बहुत प्रसन्न हुए, और कहा, सचमुच आप इस समय में संसार के विख्यात महात्मा हैं, और सब वस्तु का भंडार आप के पास भरा है। मैं चारों धाम घूमा और सब जगह प्रश्न किया, परन्तु उचित उत्तर से वञ्चित रहा। अब आकर आप से शान्ति पाई। अब आशा है कि शेष शङ्काओं का भी समाधान हो जायगा।

प्रश्नः—अच्छा सरकार! अब आप श्री 'राम' नाम का भावार्थ, तात्पर्यार्थ, रूपार्थ, गुणार्थ, प्रताप व प्रभावात्मक अर्थ साङ्गोपाङ्ग व्याख्या पूर्वक कीजिये? श्री महाराज बोले:—

बहुत सुन्दर प्रश्न किया—अच्छा सावधान होकर मन, बुद्धि, चित लगा कर सुनिये:—

उत्तर— वन्दौ सतगुरु पद कमल, नवल अमल मन होय।
नाम अर्थ जेहि उर फुरै, प्रेमलता कह सोय ॥१॥
राम नाम कर अर्थ अति, सुन्दर विशद विशाल।
शेष महेश न कहि सकहिं, प्रेमलता मति बाल ॥२॥
नाम रूप गुण धाम शुचि, चारिउ यदपि समान।
नाम तदपि कारण समुझि, वरणौं प्रेमलतान ॥३॥
प्रथम अर्थ श्री नाम कर, लिखौं यथामति जोय।
नाम प्रताप प्रभाव जग, प्रेमलता नहिं गोय ॥४॥
निज मन सम्बोधन हित, वर्णत वर्ण सु अर्थ।
प्रेमलता मति बाल लखि, छमिहहिं सुजन समर्थ ॥५॥

राम नाम युग आखर, सकल विश्व अभिराम ।
प्रेमलता बन्दै सदा, आदि मध्य परिणाम ॥ ६ ॥
रेफ सुबिन्दु अवर्ण दुइ, चढ़े वर्ण के माथ ।
छत्र मुकुट सम शोभित, प्रेमलता के नाथ ॥ ७ ॥
उर्द्ध सुगति सूचित करैं, प्रेमलता जन हेत ।
जीव पीव कर रूप लखि, चलि सुजान साकेत ॥ ८ ॥
बर्ण सुशीसहिं रेफ चढ़ि, अर्द्ध उर्द्ध गति देइ ।
शिव बिरँचि हरिपद लहैं, प्रेमलता जेहि सेइ ॥ ९ ॥
रेफ सुरेश परेश प्रभु, सीताराम स्वरूप ।
परम तेज कहि जाय किमि, प्रेम सु लता अनूप ॥ १० ॥
अनिर्वाच्र्य निर्वर्ण वर, अर्ध सुरेफ विराज ।
प्रेमलता जन जोग करि, ध्यावहिं त्यागि कुसाज ॥ ११ ॥
ब्रह्म निरावय रेफ लखि, इच्छा बिन्दु सुजान ।
अविनाशी सेवक सदा, जीव सु प्रेमलतान ॥ १२ ॥
मायिक भोग विलास लखि, भूल्यो नाम स्वरूप ।
प्रेमलतहि चेताय तब, धरि गुरु रूप अनूप ॥ १३ ॥
अर्ध रेफ वर वरण शिर, शोभित छत्राकार ।
प्रेमलता सठ ताहि भजि, सहित सु बिन्दु उदार ॥ १४ ॥
नाम रूप भलि भाँति कहि, सतगुरु दीन्ह लखाय ।
प्रेमलता हुलसाय हिय, पिय पद परसेउ जाय ॥ १५ ॥
शरणागत लखि जीव निज, रेफ लीन्ह उर लाय ।
प्रेमलता भ्रम भेद भव, मेटि परम सुख पाय ॥ १६ ॥
जीव स्वरूप अकार लघु, मिल्यो रेफ मधि आय ।
प्रेमलता तब "र" भयो, निज प्रिय जीवहिं पाय ॥ १७ ॥
दम्पति विमल विहार लखि, रेफ मध्य सो जीव ।
तत्सुख भोगत मुदित मन, सतगुरु कृपा अतीव ॥ १८ ॥
जीव सु ललित अकार लघु, रेफ मध्य परिचाइ ।
दीर्घ अकार स्वरूप धरि, पुनि प्रगटे गुरु आइ ॥ १९ ॥
दम्पति रूप सुरेफ मधि, जीव सु मधुराकार ।
आचारज पर रूप जो, राजत दीर्घ अकार ॥ २० ॥
दम्पति इच्छा बिन्दु जो, दिव्य रूप जग मूल ।
मधुर मकार स्वरूप सो, सर्व भाँति सुख मूल ॥ २१ ॥
मधुर रकार मकार के, मध्य अकार विराज ।
प्रेमलता त्रय वर्ग मिलि, राम नाम भल भ्राज ॥ २२ ॥
प्रथम रकार अकार पुनि, मधुर मकार निहारि ।
प्रेमलता रटि बैखरी, अर्थ अनूप विचारि ॥ १३ ॥

जीव सु मधुर अकार जो, भयो ब्रह्म लय लीन।
संजय तजि त्रय वर्ग कर, अर्थ विचारु प्रवीन ॥२४॥
ओंकार जो वेद कर, प्राण कहत बुध लोग।
प्रेमलता सो प्रणव ते, प्रगट्यो ओम अशोग ॥२५॥
प्रणव मध्य त्रय वर्ग बर, मधुर अकार उकार।
ह्रस्व हलन्त मकार जो, प्रेमलता सुखसार ॥२६॥
राम नाम ते प्रणव सो, प्रगट भयो गुण धाम।
प्रेमलता तजि संशय, भजु सियराम ललाम ॥२७॥
महा रमायण मध्य जो, शिव गिरिजा संवाद।
प्रेमलता सुनि समुझि करि, मिटहिं कुतर्क विवाद ॥२८॥
तत्वमसी ते आदि जे, वेद वाक्य बर चारि।
राम नाम के अंग सब, प्रेमसुलता निहारि ॥२९॥
सात करोर सुमंत्र वर, चित भ्रम कारक जानि।
राम सुनाम परेश प्रभु, प्रेमलता मुद खानि ॥३०॥
सतपद ब्रह्म रकार लखु, चित पद जीव अकार।
परमानन्द मकार जो, प्रेमलता सुख सार ॥३१॥
अमल निरक्षर ब्रह्म जो, मधुर रकार विचारि।
अक्षर जीव अकार लखु, प्रेमलता उर धारि ॥३२॥
क्षर मकार संसार कर, कारण माया रूप।
शिव बिरँचि कहँ मोहई, प्रेम सुलता अनूप ॥३३॥
तम गुण मधुर मकार जो, महा शम्भु कह वेद।
रज गुण दीर्घ अकार में, बसहिं विरँचि अखेद ॥३४॥
सतगुण रूप रकार हरि, परम तेज मय जोइ।
प्रेमलता सियराम रटि, प्रकट प्रताप न गोइ ॥३५॥
त्रय गुण मय त्रय देवता, ब्रह्मा विष्णु महेश।
प्रेमलता प्रेरक प्रभु, राम सु नाम परेश ॥३६॥
विमल विराग सु तीव्रकर, कारण मधुर रकार।
ज्ञान स्वरूप अकार लखि, भक्ति अनूप मकार ॥३७॥
अग्नि सुबीज रकार लघु, परम तेज दरशाय।
कर्म शुभा शुभ सेइ जेहि, बिनु प्रयास जरि जाय ॥३८॥
दीर्घ अकार प्रकाश मय, भानु बीज जिय जानि।
हरहि मोह अज्ञान तम, प्रेमलता भव भानि ॥३९॥
हिमकर रूप मकार लखु, अमृत मय करुपान।
जन्म मरण त्रय ताप रुज, नाशहिं प्रेमलतान ॥४०॥
अवध स्वरूप रकार जो, ऐश्वर्य लीला खानि।
कामद दीर्घ अकार सो, मिश्रित खेल प्रमानि ॥४१॥

मिथिला मधुर मकार लखि, दम्पति दूलह वेष ।
प्रेमलता माधुर्य मय, लीला कीन्ह रमेश ॥ ४२ ॥
ऐश्वर्य मिश्रित माधूरी, त्रय लीला त्रय धाम ।
प्रेमलता त्रय वर्ण मधि, लखि जापक अभिराम ॥ ४३ ॥
त्रय बिभूति मय सर्व जग, श्री, भू, लीला देवि ।
प्रेमलता त्रय वर्ण कर, रुख लखि सादर सेवि ॥ ४४ ॥
श्री सियराम स्वरूप जो, मधुर रकार अनूप ।
दीर्घ अकार सु जानि जिय, श्री रामायण रूप ॥ ४५ ॥
ललित मकार सुधाम लखि, मन परि पूरण काम ।
अर्थ अनूप विचारि जिय, प्रेमलता वशुयाम ॥ ४६ ॥
दैहिक ताप रकार हर, दैविक दीर्घ अकार ।
भौतिक ज्वर भक्षण करै, प्रेम सुलता मकार ॥ ४७ ॥
सँचित कर्म रकार हर, कृत प्रारब्ध अकार ।
क्रीयमान बहु जन्म कर, हरत अनूप मकार ॥ ४८ ॥
प्रवल मकार भविष्य कर, पाप ताप हरि लेइ ।
राम नाम त्रय काल मँह, प्रेमलता सुख देइ ॥ ४९ ॥
मही मकार अकार नभ, मधुर रकार पताल ।
जल, थल, नभ त्रय गधि सदा, व्यापत नाम कृपाल ॥ ५० ॥
जन मन जग त्रय वर्ण वर, शिव, विरँचि हरि तीन ।
श्रृजत सुपालत हरत पुनि, राम सुनाम प्रवीन ॥ ५१ ॥
श्रृजत अकार स्वरूप विधि, जन उर सुगुन अदोष ।
पालत मधुर रकार हरि, रूप सु करुणा कोष ॥ ५२ ॥
ग्यान रकार अकार जो, दीर्घ कर्म की खानि ।
भक्ति सु पर्म उपासना, मधुर मकारहि जानि ॥ ५३ ॥
त्रिबिध काण्ड त्रय वर्ण मय, अवराधक त्रय भाँति ।
रटि सुनाम सुख पावहीं, नशहिं कठिन दुख पाँति ॥ ५४ ॥
राम नाम कर अर्थ अति, वेद न पावहिं पार ।
प्रेमलता केहि भाँति; कह अति मति मन्द गँवार ॥ ५५ ॥
रटहिं नाम जो जीव जग, जीह पुकारि पुकारि ।
बिचरहिं महि मन मोद भरि, आशा पास निवारि ॥ ५६ ॥
ते जानेंगें नाम रस, सतगुरु चरण प्रसाद ।
राम नाम कर अर्थ उर, फुरै हृदय अह्लाद ॥ ५७ ॥
राम मंत्र बर नाम मधि, जो जानत कछु भेद ।
प्रेमलता सो गुरु बिना, कबहुँ कि होय अखेद ॥ ५८ ॥
एक सविधि जपि मंत्र बर, पावहिं परमानन्द ।
येन केन विधि नाम रटि, एक होहि सुखकन्द ॥ ५९ ॥

मंत्र विधान समेत बिनु, भजन करत जो कोइ ।
यथा जोग सुख नहिं मिलै, प्रेमलता श्रम होइ ॥ ६० ॥
नाम रटै लय लाय मुख, ऊँच नीच जो कोय ।
विधि विधान कालादि बिनु, प्रेमलता सुख होय ॥ ६१ ॥
षट आखर मय मंत्र वर, बीज नमः रामाय ।
सोई षट पद नाम मधि, प्रेमलतहिं दरशाय ॥ ६२ ॥
राम रूप लखि रेफ पुनि, मधुर अकार सु सीय ।
सेवक दीर्घ अकार जो, प्रेमलता कमनीय ॥ ६३ ॥
त्रय पद मधुर मकार महँ, जापक जन जिय जोय ।
प्रेमलता सतगुरु कृपा, मनन करे सुख होय ॥ ६४ ॥
प्रथम सु बिन्दुहिं भरत लखि, जग पोषण भरनीय ।
अर्ध चन्द्र श्री सत्रुहन, सम सीतल सुचि हीय ॥ ६५ ॥
ह्रस्व अकार विचारि उर, मारुत सुवन स्वरूप ।
सब लायक शुभ गुण सदन, प्रेमसुलता अनूप ॥ ६६ ॥
अन्य रीति सुनु प्रीति करि, प्रेमलता मन मूढ़ ।
राम स्वरूप सु नाम मधि, बरणहिं सन्त सु गूढ़ ॥ ६७ ॥
रेफ सुशीस ललाट दृग, तेजोमय करु ध्यान ।
ह्रस्व अकार सु बदन बद, नाशा ग्रीव सुकान ॥ ६८ ॥
दीर्घ अकार सु हृदय भुज, जापक जन अनुमानि ।
उभय लोक रक्षा करैं, प्रेमलता सुख खानि ॥ ६९ ॥
अर्ध चन्द्र लखि उदर वर, उदधि समान गँभीर ।
नाभि मनोहर अमिय ह्रद, हरत सकल जन पीर ॥ ७० ॥
कटि प्रदेश वर बिन्दु जो, प्रेमलता जग मूल ।
मधुर अकार उदार पद, हरण घोर भव शूल ॥ ७१ ॥
नख शिख अङ्ग अनूपम, राम नाम मय जोय ।
प्रेमलता सतगुरु कृपा, नित नूतन सुख होय ॥ ७२ ॥
राम नाम कर अर्थ अब, और सुनहु मन लाय ।
षट सम्पति मय समुझि सुनि, प्रेमलता दुख जाय ॥ ७३ ॥
संयम रेफहिं जानि जिय, दश प्रकार तेहि माँहिं ।
प्रेमलता जेहि सेवत, सकल कुरोग नशाहिं ॥ ७४ ॥
नेम स्वरूप अकार लघु, प्रेम बढ़ावन हार ।
दश विधान पहुमा समुझि, प्रेमलता श्रुति सार ॥ ७५ ॥
संयम दश-दश नेम कर, कारण एक रकार ।
प्रेमलता जेहि सेइ जन, बिनु श्रम उतरहिं पार ॥ ७६ ॥
दीर्घ अकार विकार हर, पावन परम अनूप ।
लखहु तितिक्षा रूप जेहि, तेहि दुख सुख इक रूप ॥ ७७ ॥

ह्रश्व अकार मकार कर, तेहि जानहु उपराम।
विषय भोगते कर्षि मन, रटवावहिं सियराम ॥ ७८ ॥
श्रद्धा मूल मकार कर, विन्दु सु इन्दु समान।
सदा प्रकाशित विमल उर, प्रिय नभ प्रेमलतान ॥ ७९ ॥
श्रद्धा रूप सु विन्दु विनु, को जग पावै छेम।
भजन भावना भार जेहि, प्रेमलता विनु प्रेम ॥ ८० ॥
अर्ध सु चन्द्राकार जो, शिव स्वरूप विश्वास।
सतगुरु वैद्य सु वचन वर, प्रीति प्रतीति हुलास ॥ ८१ ॥
रेफ विवेक अकार लघु, ज्ञान सरूपहिं जानि।
दीर्घ अकार विराग बर, प्रेमलता सुख खानि ॥ ८२ ॥
विन्दु सुभक्ति स्वरूप लखि, मङ्गल मोद प्रदानि।
ह्रश्व अकार मकार कर, विमल विचार वखानि ॥ ८३ ॥
सहन शीलता खानि जो, अर्ध सु चन्द्राकार।
प्रेमलता बहु गुण भरे, राम सु नाम उदार, ॥ ८४ ॥
सुन्दर रूप सुरेफ लखि, शोभा मधुर अकार।
प्रेमलता शृंगार बर, दीर्घ अकार विचार ॥ ८५ ॥
विन्दु सु छवि पुनि नम्रता, लघु अकार मधि जोइ।
परम प्रेम कर रूप जेहि, अर्ध चन्द्र कह सोइ ॥ ८६ ॥
षट रिपु षट रस वश भये, प्रेमलता जग जीव।
ते न भजै षट पद विमुख, बिसरे नाम सु सीव ॥ ८७ ॥
षट उर्मिनि दुख प्रद सदा, षट पद जपे नशाँहिं।
नाम अर्थ जाने बिना, प्रेमलता सुख नाँहिं ॥ ८८ ॥
सतगुरु कृपा कटाक्ष बिनु, दुर्लभ नाम स्वरूप।
प्रेमलता छल कपट तजि, सेउ सु गुरु सुर भूप ॥ ८९ ॥
राम नाम के चरित गुण, अर्थ अनूप अपार।
शेष महेश न कहि सकैं, निगमहुँ नेति पुकार ॥ ९० ॥
राम नाम युग आखर, विमल वेद के नयन।
चन्द्र सूर्य सम विश्व हित, प्रेमलता सुख दयन ॥ ९१ ॥
लोक वेद हितकार दोउ, हेतु रहित जिय जानि।
प्रेमलता जन जीह जपि, होहिं महा मुद खानि ॥ ९२ ॥
सुकृत सुतरु के पत्र फल, भवनिधि के दोउ कूल।
भक्ति सुतिय कल करण के, प्रेमलता युग फूल ॥ ९३ ॥
मुनिवर हृदय सु पक्ष पढु, राम नाम युग अङ्क।
पर पद देत चढ़ाय जो, प्रेमलता सु निशङ्क ॥ ९४ ॥
दीर्घ रकार मकार लघु, सीताराम स्वरूप।
प्रेमलता जपि जीह जन, पावहि मोद अनूप ॥ ९५ ॥

जापक शालि स्वरूप नित, रटत पियास पियास ।
सावन भादौं मास हुइ, हरैं सकल जग त्रास ॥ ९६ ॥
राम नाम दोउ आखर, निर्गुण सगुन सु वर्म ।
प्रेमलता सतगुरु बिना, बेगि न पावहिं मर्म ॥ ९७ ॥
जापक जन सु मयूर के, राम नाम युग कान ।
राम श्याम घन रटन ध्वनि, सुनत सु प्रेमलतान ॥ ९८ ॥
राम स्वरूप सु लखन हित, राम नाम युग आँखि ।
रटन सुअँजन आँजि प्रिय, प्रेमलता जनि माखि ॥ ९९ ॥
राम नाम मय विश्व लखि, नाना अर्थ विचारि ।
प्रेमलता लय लाय रहु, मायिक भोग विसारि ॥ १०० ॥
श्री नामार्थ सु सतक यह, पढ़ै सुनै मनलाय ।
रटै नाम सतगुरु कृपा, प्रेमलता दुख जाय ॥ १०१ ॥

यह अनुपम रामनामर्थ सुनि महात्मा कृत कृत्य हो गये। जय जय कार करते हुए चरण में लोट गये। कुछ काल सत्संग कर, दिव्य यश गान करते विदा हुए।

वेष परत्व :—एक समय आप काशी जी में, कुरुक्षेत्र पर बैठे हुए तिलक स्वरूप कर रहे थे। एक कौतुकी ने आकर कटाक्ष पूर्वक कहा कि तिलक छाप क्या है और इसके लगाने से क्या लाभ है। महाराज जी ने फरमाया :—

श्लोक :—तिलकं राम रूपं च, विन्दु रूपं विदेहजाम् ।
श्रियमाचार्य रूपं च' धारयेद्धि प्रयत्नतः ॥
तुलस्या माला तिलकं धनुर्वाणाङ्कितौ भुजौ ।
राम मन्त्राभि नामाढ्यं संस्कारोः रामसेवकः ॥

दोहा—तिलक छाप कंठी युगल, युगल मंत्र निजनाम ।
संस्कार ये पाँच शुभ, हरण शोक सुखधाम ॥

पाँचहुँ संस्कार प्रभु अङ्गा * चेतन अमल अखेद अभंङ्गा ॥
सकल सिद्ध, प्रद आनन्द दायक * सवहिं सुलभ सब विधि सब लायक ॥
त्रिविधि ताप मन, वच, क्रम, पापा * हरण विषाद प्रलाप कलापा ॥
तीन काल के कर्म कठोरा * अनमिटहूँ जो पातक घोरा ॥
नाशहिं सकल विकार अपारा * संस्कार ये पाँचहुँ सारा ॥
धारण करत जीव प्रभु रूपा * होत पूज्य तिहुँ लोक अनूपा ॥

संस्कार पाँचो सुभग, हेतु रहित हितकार ।
मुक्ति, भुक्ति, रति, भगति, प्रद, साँचे सरल उदार ॥

भाई, तिलक छाप लगाने से बहुत लाभ हैं। उनका वर्णन करना कठिन है। तुम उन्हें समझोगे भी नहीं। तुम्हें 'व्योहारिक' मोटी बात बताते हैं सुनों कि जिसके :-(१) सिर में दर्द रहता हो, वह छूट जाता है (२) जिसके शिर भूत आता हो वह नहीं आता (३) मुक़द्दमा इत्यादिक में नहीं हारता। यह वाणी, सुन वह कौतुकी, तीनों प्रकार के प्राणी खोज कर लाया, और बोला तब आप की वाणी सत्य जानें, जब इन तीनों की बाधा, सिर दर्द-भूत आने-और, मुकद्दमे हारने की हटजाय? महाराज जी ने गुरू महाराज का स्मरण कर तीनों के तिलक लगाये। सुनने में आया, कि तीनों की बाधायें हट गईं। तीनों प्रकार के वचन सफल हो गये। वे लोग फिर अपने बन्धु बान्धवों सहित, वैष्णव धर्म के अनुयाई बन गये। सच है, वेष की अपार महिमा व महात्म्य है, प्रभु कृपा से विरले जान पाते हैं।

दिव्य प्रसादी :—एक बार दुग्धमती के किनारे नाम रटते हुये विचरते रहे। दो दिन का पूरा उपवास हो गया। मधुकरी लाने का कोई स्थल न था। और कोई खाद्य पदार्थ उपलब्ध भी न था। कुछ व्याकुलता आई। इतने में एक बड़ी तेजस्वी बुढ़िया हाथ में दधि चूड़ा लिए हुए आई और प्रार्थना की, कि "लीजिए महाराज जी प्रसाद पाइए।" ऐसा कह कर उसने वह पदार्थ उनके सामने रख दिए। श्री महाराज जी ने गुरु महाराज को भोग लगा कर प्रसाद पाया। यह प्रसाद बड़ा अलौकिक था। ऐसा दही चूड़ा कभी पाने को न मिला था। महाराज जी ने फर्माया, कि तुम्हारा नाम क्या है? बूढ़ा ने मन्द स्वर से कही, कि मुझे लोग "मिथिला," "मिथिला" करके पुकारते हैं। ऐसा कह कर दुग्धमती के तट तक जाती हुई दिखाई दी, फिर अन्तर्ध्यान हो गई। महाराज जी बड़े विस्मय में हुए और प्रसन्नचित्त होकर कहा, कि आज तो श्री मिथिला मइया ने बड़ी कृपा की।

एक बार भाई धनुषधारी शरण श्री महाराज जी से ज्ञानकूप पर मिलने गये, वहाँ महाराज जी के दर्शन नहीं हुए, पास में एक महात्मा से पता मिला, कि दुग्धमति के किनारे कहीं रमरमा रहे होंगे। ये खोजते हुए वही दुग्धमति के तट पर पहुँचे, तो उस पार अलग-अलग वृक्षों के नीचे शिष्यों सहित महाराज जी मन्द स्वर से नाम रटते हुए, दिखाई दिये। इधर से इन्होंने नाम की गर्जन की, महाराज जी इनको देखकर सब शिष्यों को साथ लेते हुए आसन पर (ज्ञानकूप) आये। मध्याह्न का समय था आज भी मधुकरी नहीं आई थी, सबके मुँह सूख रहे थे, महाराज जी ने कहा, कि ढोलक झाँझ लाओ, कीर्तन करेंगे। बड़े उत्साह के साथ सबने एक घंटा कीर्त्तन किया, इतने में देखते हैं कि एक मारवाड़ी अपनी स्त्री के साथ एक थाल कपड़े से ढ़क कर लाया, और महात्माओं के पास रख दिया। महाराज जी को नमन कर थोड़ी दूर वापिस जाता दिखाई दिया, फिर अन्तर्धान हो

गया। कीर्त्तन समाप्त कर महाराज जी ने वह थाल मँगाया, कि देखें इसमें क्या है, ज्योंही कपड़ा उतार कर देखा, तो थाल में उत्तम कोटि के पेड़े थे, जो कि सुगन्ध से गमगमा रहे थे, और मेवा से सम्पुटित थे। पाँच पत्तल मँगाई, सबने पेट भर दुर्लभ दिव्य प्रसादी पाई, और शेष को भाई धनुषधारी शरण जी को साथ घर ले जाने के लिये दे दिया। क्योंकि आप एक समय की सामग्री दूसरे समय को नहीं रखते थे। सबको इनके स्वाद पर इस प्रकार की प्राप्ति पर, व इस घटना पर, बड़ा आश्चर्य हुआ। श्री महाराज जी से पूछा, कि वह सेठ कौन था, क्या कोई परिचित व्यक्ति रहा ? महाराज जी उत्तर दिये, कि उस जगत नियन्ता प्रभु और परम कृपालुनी स्वामिनी जू को छोड़ कर वे अन्य व्यक्ति और कौन हो सकते हैं, जो कि अपने नाम जापक भक्तों के लिए हर समय और हर जगह योग क्षेम वहन करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। इस प्रकार की अन्य और भी कई लीलायें हैं, उदाहरण मात्र एक-दो का उल्लेख कर दिया गया है।

श्री हनुमत दर्शन—सम्बत् १९६९ के कार्तिक मास में श्री अवध में महात्मओं का गोवध के ऊपर मुसलमानों से झगड़ा छिड़ गया। उसमें बहुत मुसलमान मारे गये। गवर्नमेन्ट ने मुसलमानों का पक्ष लिया, और सब प्रमुख महात्माओं को पकड़ कर जेल भेज दिया। इन महात्माओं में महाराज जी के गुरुदेव भगवानजू भी थे ; उनको भी सात वर्ष की कारागार की सज़ा सुनाई गई। महाराज जी ने जो कि इस समय काशी में थे, जब ये समाचार सुने, बड़े खेद खिन्न मन हो कर, रूदन करते हुए श्री संकटमोचन हनुमान जी के सम्मुख आकर पछाड़ खाकर गिर पड़े, और कहा, कि मैं अपने गुरुदेव भगवान को अपना शरीर रहते कारागार में नहीं देख सकता। अन्न, जल का त्याग कर दिया, और रात्रि को सोना भी छोड़ दिया। खम्भे से बैठे-बैठे अखण्ड नाम श्री हनुमान जी को सुनाने लगे। श्री गुरु महाराज जो कि इनकी वृत्ति और निष्ठा को जानते थे, सिया मोहनी शरण द्वारा सँदेशा भिजवाये, कि "वह घवड़ाये नहीं, हम शीघ्र ही आकर मिलेंगे, प्रेम पूर्वक हनुमान जी को नाम सुनाता रहे।" सिया मोहनी शरण जी ने यहाँ संकट मोचन में आकर, इनकी विचित्र उन्मादित दशा देखी, और उन्हें शुभ, संदेश सुना कर समझाया। सन्देश पाकर इनको बड़ी शान्ति और आधार मिला। कहने सुनने से एक समय फलाहार करने लगे, और रात्रि के तीन घंटे, बैठे ही बैठे खम्भे के सहारे ही सो लेते रहे। यह वृत्ति साढ़े पाँच महीने चली। श्री हनुमत लाल जी का सिंहासन डोला, रात्रि को वैभव सहित अपने नगर और विभूति का दर्शन कराने के बाद, अपना साक्षात्कार कराया। महाराज जी हाथ जोड़ कर खड़े हो गए, और गद्गद् कण्ठ से स्तुति करने लगे :—

श्री हनुमत् स्तुति

जय जय कपि नायक, जन सुखदायक, महावीर वलवन्ता ।
जय संकट, मोचन, पंकज लोचन, संकट सहहिं सु सन्ता ॥
जय जय जगदीशा, करि दुख खीसा, राम दास हनुमन्ता ।
जय जय अविनासी, आनँदरासी, भव भय हरन अनन्ता ॥ १ ॥
जय जयति कृपाला, दीनदयाला, सुर नर मुनि हितकारी ।
जय जय गुन आगर, करुना सागर, हरहु कुसंकट भारी ॥
जय खल दल-गंजन, विपतिविभंजन, मारुत सुत अघहारी ।
जय जयति उदारा, तेज अपारा, समर धीर असुरारी ॥ २ ॥
जय अंजनि नंदन, दुष्ट निकंदन, परमारथ सुख रूपा ।
जय जय नभ चारी, महिमा भारी, द्रवहु वेगि कपि भूपा ॥
जय जय प्रिय नीता, इन्द्रिय जीता, ज्ञान विवेक अनूपा ।
सियराम सु जापक, घट घट व्यापक, हरहु नाथ भवधूपा ॥ ३ ॥
जय जय निरदूषन, भक्त विभूषन, श्री सियराम उपासी ।
जय अभिमत दाता, गुरु पितु माता, शरनागत भयनासी ॥
जय जय बजरंगी, जय सत संगी, सियवर चरित प्रकासी ।
जय जयति सुजाना, मोद निधाना, प्रेम सुलता विलासी ॥ ४ ॥

ऐसी स्तुति करते ही शरीर रोमाञ्चित हो गया, कण्ठ रुक गया, नेत्रों से अश्रु धारा वह चली, और त्राहिमाम्, पाहिमाम् कह कर दण्ड की नाईं चरणों में गिर पड़े। श्री हनुमत लाल जी गम्भीर वाणी में बोले, कि मैं प्रसन्न हूँ, वर माँग। श्री महाराज जी ने उठ कर विनय किया, कि मेरे गुरुदेव भगवान् जी को कारागृह से मुक्त कर दीजिए। यही वरदान चाहता हूँ, और कुछ नहीं। श्री हनुमत लाल जी बोले कि आज के छठे दिवस तुम्हारे गुरु महाराज कारागृह से मुक्त होकर तुमको यहीं दर्शन देंगे। और बोले कि हमको नाम के समान और कुछ प्रिय नहीं है, यह हमको निरन्तर सुनाया करो। श्री महाराज जी ने कहा, यह परम पवित्र आज्ञा शिरोधार्य है परन्तु सरकार यह शरीर तो एक जगह बँध कर रहता नहीं। श्री हनुमत लाल जी, ने कहा कि "अपने वंश द्वारा यह सियाराम नाम रटना इस दरबार में सदैव कराते रहो" ऐसा कह कर अन्तर्ध्यान होगये। महाराज जी बड़े प्रसन्न हुए। दूसरे दिन स्वप्न में देखा, कि श्री हनुमत लालजी बड़े अफ़सर "लाट साहब" का रूप धारण कर रजिस्टर में गुरु महाराज को छोड़ देने की आज्ञा लिख आये हैं। वरदान अनुसार छठे दिन गुरु महाराज संकट मोचन में दर्शन देने पधारे। महाराज जी देखते ही उठ कर दौड़े, और दण्डवत किया, गुरु महाराज ने हृदय से लगा लिया, और वहुत आशीर्वाद दिया। श्री हनुमत लाल जी की आज्ञा-

नुसार आज तक नियम पूर्वक श्री संकट मोचन दरबार में नियम से नाम सुनाया जाता है। श्री महाराज जी ने यह सेवा अपने यहाँ न रहने पर भाई-साहिब श्री सिया रघुनाथ शरण जी, को दी, और इनके रामघाट नाव पर निवास करने लगने पर, इस तुच्छ सेवक को दी। उनके आशीर्वाद से यह नियम आज तक निभा चला जारहा है।

एक बार आप चौकाघाट से एक शिष्य के साथ श्री संकट मोचन जी की आरती में सम्मिलित होने के लिए पैदल ही चले आते थे। देरी होने के कारण आप लोग दौड़ने लगे, रास्ते में थाने के एक सिपाही ने उन्हें कोई बदमाश समझ कर पकड़ लिया, और थाने को ले चला। आपने यह विपत्ति देख श्री हनुमान जी की दोहाई दी। इतने में क्या देखते हैं कि संकटमोचन भी उसका अफसर दरोगा का रूप बना कर इक्के पर सवार हो, सामने से पहुँचे। और सिपाही को ठीक ड्यूटी पर मौजूद न रहने के उपलक्ष में डाँटने लगे। यह मौक़ा पा आप चम्पत हुए, और उनके देखते ही देखते वह दरोगा, तथा इक्का आँखों से ओझल हो गया। श्री महाराज जी यह चरित्र देख बहुत प्रसन्न हुए, और मन ही मन श्री संकट मोचन हनुमान जी को धन्यवाद दिये।

श्री विश्वनाथ दर्शन :—श्री काशी जी में ज्ञानवापी पर एकरोज कथा सुनने के बाद लघुशङ्का करने के लिए ज्योंही बैठे, त्योंही एक सिपाही पकड़ कर थाने में चालान करने के लिए ले चला। यह अचानक भारी विपत्ति देख पास में कोई सहायक न देख श्री विश्वनाथ जी महाराज जी को पुकारा। भक्त की टेर प्रभु के कानों तक पहुँचने में कुछ भी देर न लगी। झट एक महाजन के रूप में आ पहुँचे। सिपाही से उन्हें छुड़ा, मन्दिर की ओर वापिस चले, और श्री महाराज जी के देखते, देखते, अन्तर्ध्यान हो गए। श्री महाराज जी, विश्वनाथ जी की कृपा समझ कर बार बार प्रमुदित हो उनको धन्यवाद देने लगे :—

रामायण कथा :—श्री रामनगर की लीला में शामको ५ बजे से १० बजे तक लीला दर्शन का लाभ और दिन में श्री रामायण कथा प्रवचन और अनेक प्रसंगों का विवेचन होता, और प्रेमी समाज उसको ध्यान और प्रेम पूर्वक श्रवण करते, एक बार एक भक्त ने प्रश्न किया।

प्रश्न :—"गो गोचर जहँ लगि मन जाई, सो सब माया जानेहु भाई" इस चौपाई को भाव सहित अर्थ समझा कर कहिए :—

उत्तर :—शब्दार्थ—"गो" नाम इन्द्रिय 'गोचर' माने इन्द्रियों का

विषय, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पद, गुदा, लिंग, कर और मुख, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, श्रवण, नयन, नासिका, रसना, त्वचा और मुख, और इनके देवता, श्रवण के दिशा, त्वचा के वायु, नेत्र के सूर्य, जीभ के वरुण, नासिका के अश्विनी कुमार, पग के विष्णु, गुदा के यमराज, लिंग के प्रजापति, हाथ के इन्द्र और मुख के अग्नि, ये दशो देवता, दशों विषय का भक्षण करते हैं। पंच ज्ञानेन्द्रियों के शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, और कर्मेन्द्रियों के चलन, विसर्ग, मैथुन, व्यवहार, भक्षण ये पंच विषय हैं। अर्थात् जहाँ तक इन्द्रियाँ तिनके विषय में और देवताओं के भोग, के हेतु, और जहाँ तक मन की गति जाय वहाँ तक माया जानना।

भावार्थ—माया दो प्रकार की होती है। एक जड़—दूसरी चैतन्य। जड़ माया प्रत्यक्ष संसार रूप दिखलाती है। चैतन्य—जिन्हि को आदि माया अह्लादिनी शक्ति, अखिल ब्रह्माण्डेश्वरी, भी कहि वेदादि गान करते, हैं सो वह श्री जानकी जी रूप हैं। श्री राम जी की अह्लादिनी, प्राण प्रिया, अनुक्षण समीप निवास करने वाली शक्ति हैं। श्री राम जी महाराज सदैव उनके हृदय कमल में विराजते हैं। यथा—यहि के हृदय बस जानकी, मम जानकी उर वास है। उन्हीं श्री जानकी जी की विभूति अन्तर्गत, जितनी देवीं दुर्गा, चैतन्य जीवात्मा, लघु, दीर्घ, द्रष्टा, द्रष्ट, कार्य, कारण लोका, लोक, अखिल ब्रह्माण्ड, ब्रह्माण्ड नायक, ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि सम्पूर्ण देवता हैं। जब अखिल ब्रह्माण्ड अपने उदर में धारण करि श्री रामचन्द्र जी ही जिन्हि के हृदय में निवसते हैं? तब बाकी ही क्या रहा? "माया सब सिय माया माहूँ" बिना माया की आराधना किये, ब्रह्म की प्राप्ति कदापि नहीं हो सकती? कारण प्रधान माया ही है। इसी लिए प्रथम श्री सीता कहि, तब राम कहे जाते हैं। माया से रहित ब्रह्म, कभी हो नहीं सकते? माया द्वारा ही ब्रह्म की पहचान, और सेवा, पूजा, आराधना, होती है। देखिए लोक में भी, जो ब्रह्म मूर्त्ति मन्दिरों में विराजमान हैं। उनकी रक्षा, और शोभा, सुश्रूषा बिलकुल माया, के ही पदार्थों से हो रही है। मंदिर, सिंहासन, सजावट, शृंगार, भोगराग, उत्सवादि, सर्वानन्द तो, माया के ही प्रभाव से है? दर्शन करने वाले प्रेमी—शोभा शृँगार, सजावट ही खोजते हैं। ब्रह्म की, मूर्त्ति तो भूषण वस्त्रों करि माया के आवरण में ढकी रहती है। खाली मुख ही देख पड़ता है। मुख पर भी नाशा मणि, अधरों में पान की लाली, ललाट पर तिलक, चन्दन शोभित रहता है। सो तो सब माया ही की चीजें हैं। फिर भी सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय, तो वह ब्रह्ममूर्त्ति भी तो माया की पदार्थ ही की है? उस मूर्त्ति में वेद विधि से ब्रह्म की प्राण प्रतिष्ठा, आवाहन की गई है। इसलिए उस माया की मूर्त्ति के अन्तर्गत ब्रह्म का निवास रहता है। सो श्री जानकी जी के

हृदय में, श्री रामजी का निवास कहा ही है। दिव्य विभूति में भी ब्रह्म का निवास, माया के अन्तर्गत, और प्रकृति विश्व विभूति में भी ब्रह्म का माया के अन्तर्गत ही निवास देखने सुनने में आता है। शरीरों से लेकर भीतर बाहिर माया का ही कारखाना नज़र में आता है। ब्रह्म का नाम ही नाम सुनते हैं ? और देखते हैं, दशौ दिशाओं में माया का ही स्वरूप, बड़े २ ब्रह्मवादी, शिवादि, माया के भय से थर थर काँपते रहते हैं। "शिव विरंचि कहँ मोहई, कोहै वपुरा आन।" ब्रह्म का इतना डर और सत्कार प्रभाव नहीं। जितना माया देवी का है। ब्रह्म का इतना खोज और खबर लोक में नहीं देखते हैं, जितना माया देवी की हो रही है। जब ब्रह्म ही स्वयं ही माया शक्ति के आधीन है, तब इतर तुच्छ देवादि—मनुष्य जीवों की गिनती ही क्या है ? इसी कारण इस अखिल विश्व को, श्री अहलादिनी, आद्या शक्ति, श्री जानकी जी की, विभूति जानि, वेदों ने स्त्रिलिंग करि कहा है। विश्व में जितनी जीवात्मा नाटक करि रही है। वे सब श्री जानकी जी की शक्ति है। पुरुष एक ब्रह्म मात्र है। जो सबमें रमण करता है। इसीसे उसका नाम, राम पड़ा है। और जगत्पति, विश्वनायकादि नाम भी उन्हीं के हैं। और जितने पुतले, स्त्री-पुरुषों के नज़र आवते हैं। वे सब माया के ही स्वरूप हैं। कार्यार्थ, माया ने नाना रूप धारण किये हैं। जैसे कोई वहुरूपिया नाना वेष वनाया करता है। आप भिन्न हैं। और पुरुष एक परमात्मा है। और सर्वात्मा मात्र स्त्री रूपा हैं। 'श्री राम एव पुरुषो ब्रह्माद्या स्त्रिय एवच'। ब्रह्म जो पुरुष एक है, सो भी सब प्रकार माया के ही आश्रित अन्तर्गत हैं। इत्यादि २। यह अर्थ सुन सब समाज के लोग बड़े आनन्दित हुए। इसी प्रकार रामायण के प्रकरण चलते रहते।

श्री सरयू दर्शन :—अवध में श्री महन्त, लषन लाल शरण जी, की आज्ञा से और श्री सरयू शरण जीं पुजारी की अनुमति से लक्ष्मण किला पर श्री रामदेव शरण जी महाराज, के साथ आप रहते, मधुकरी पाते, और भजन करते। एक बार सर्प वाली कच्ची गुफा में सरयू किनारे अगहन की शुक्ल पक्ष की रात्रि में बैठे हुए, आनन्द पूर्वक भजन कर रहे थे, कि अचानक दृश्य बदला। रेती, रजत मय चमकने लगी, जल, दुग्ध की तरह श्वेत और निर्मल बहने लगा। एक सुनहरी, और चार चाँदी के पुष्प वहते हुए दिखाई दिये। एक स्वर्ण मयी नौका पर चन्द्र के समान छटा वाली, चन्द्रिका धारण किये हुए, महा तेजस्वी देवी विराजमान थी। जिनके अगल वगल अष्ट सखी चमर छत्र, व्यजन आदि सेवा की सामग्री हाथ में लिए हुए, विराजमान थीं। यह दिव्य श्री सरयू दर्शन का अद्भुत चरित्र देखकर बड़े अह्लादित हुए और श्री सरयू अष्टक की रचना की।

अजगर पर विजय :—श्री अवध में सिया सुहाग बाग में श्री महाराज जी की सेवा में रहते हुए, आप की प्रभाती और जल की सेवा थी। एक दिन संयोग वश प्रभाती नहीं रही, जल बरस रहा था। गुरू महाराज के तीन बजे भोर में उठने का समय हो रहा था। बस आप तुरन्त दौड़ कर प्रभाती लेने को चले। आप को राह में एक प्रेत मिला, उससे न डर कर गुरू महाराज का ध्यान करते हुए, और नाम रटते हुए, रास्ता बचा कर दूसरी ओर से वृक्ष के समीप पहुँचे। तो देखा कि एक अजगर, पेड़ पर लिपटा हुआ है। आपने मन में सोचा, कि यदि गुरु प्रभु, की सेवा कार्य करते हुए शरीर चला जाय तो कोई हर्ज नहीं विना प्रभाती लिए हुए नहीं लौटूँगा। ऐसा कह कर आप पेड़ पर चढ़ गए, और प्रभाती तोड़ी, और ज्योंहीं उतरने लगे त्योंहीं अजगर ने आपकी टाँग पकड़ ली। आपने विनय किया कि हे! श्री लषन लालजी के वंशज! अवध वासी! मैं गुरु महाराज को यह सेवा पहुँचा दूँ, तब मुझे खाजाना।" अभी कृपा करके छोड़ दो, और आँखें बन्द करके गुरु महाराज का ध्यान किया, नेत्र खोल कर देखा तो अजगर गायब हो गया। बड़े हर्षित होकर दौड़े हुए, प्रभाती लेकर पहुँचे। तब तक गुरु महाराज प्रतीक्षा ही कर रहे थे। प्रणाम कर सब चरित कहि सुनाया, और कृपा के लिये बधाई दी। गुरु महाराज ने कहा कि रात्रि में कभी इस प्रकार न जाया करो, सब अवध वासी नाना रूप से रात्रि में विचरण करते हैं। और आज तुम पर भारी कृपा हुई जो तुम इस समय जीवित लौट आये।

एक बार मिथिला परिक्रमा में महात्मा लोग एकान्त में आसन किये हुए थे। अचानक एक बहुत बड़ा अजगर निकल कर इन लोगों की ओर आया। सब लोग भागने को उद्यत हुए, महाराज जी ने कहा, कि भागने से जान नहीं बचेगी, ढोलक-झाँझ लाओ, सब कोई मिल कर कीर्त्तन करें। सब ने कीर्त्तन किया, अजगर थोड़ी देर वहीं बैठा रहा, फिर वहीं गायब हो गया। सच है, गुरु, प्रभु के चरित अतर्क्य, और बड़े अद्भुत होते हैं। और नाम की महिमा संसार में प्रत्यक्ष ही देखने को मिलती है।

सिंह पर विजय :—एक बार आप ज्ञान कूप पर बैठे हुए, नाम रट रहे थे। किधर ही से भूल कर एक सिंह उधर आ निकला। और बड़े जोर से दहाड़ा। सब महात्मा अपना २ दण्ड-कमण्डल उठा कर विहार कुण्ड की कुटियाओं में जाकर छिप गये। श्री महाराज जी ने सोचा, यदि हम भी भाग जाते हैं, तो गुरु प्रभु को नाम व वेष में बट्टा लगेगा। और फिर स्वरूप का ज्ञान कहाँ रहेगा? यदि सिंह खाजाएगा तो खा जाय? शरीर तो नाशवान है ही, किन्तु हम भागेगें नहीं? ऐसा कह कर वहीं पुवार पर लेट गये।

सिंह आप के समीप तक आया, आपने गुरु महाराज का ध्यान किया, इतने में आप क्या देखते हैं कि गुरु महाराज धनुष वाण धारण किये, अपने चारों ओर घूम रहे हैं। सिंह धनुष वाण देख कर भयभीत हो, चिघाड़ मार कर भागा। इतने में गुरु महाराज भी अन्तर्धान हो गये, आप ने उठ कर गुरु महाराज की शरण में गये, और गुरु स्तोत्र की रचना की, और लिखे:—
"प्रभु कहँ न रक्षा कीन्ह जन की, धाय धरि धनु सायकम्।"

कीर्त्तन में देव मूर्त्ति:—आपका दोनों सन्ध्या सोलहध्वनि युक्त-कीर्त्तन करने का अखण्ड नियम था। एक बार श्री संकट मोचन हनुमान जी में कोई मूर्त्ति कीर्त्तन करने को न रहे। श्री सिया रघुनाथ शरण जी उन दिनों पूजा में थे। राम सखी जी भी यहीं थीं। तीनों मूर्त्तियों ने कीर्त्तन शुरू किया। कीर्त्तन जमा नहीं। श्री महाराज जी को मूर्त्ति न होने का खेद हुआ। इतने में देखते हैं कि तीन दिव्य, तिलकधारी मूर्त्ति श्री राम मन्दिर की ओर से और एक मूर्त्ति हनुमान जी के मंदिर की ओर से, निकल कर इनकी कुटिया की ओर सवेरे ४ बजे आकर कीर्त्तन में सम्मिलित हुए। सबके चेहरे वड़े तेजवान, सुरीला कण्ठ और गान कला के बड़े प्रवीण थे। खूब झमाझम कीर्त्तन हुआ, और गान-वजान और पद पदारथ खूब हुए। महाराज जी को इतना आनन्द रोमाँच और अश्रुधारा पहले कभी न हुई थी। आपका कीर्त्तन सिद्ध था।

एक दिन आपने जेठ की दोपहरी में श्री हनुमान संकट मोचन जी को घूँघुरू बाँध कर कर्ताल बजाते, नृत्य करते हुए, मधुर ध्वनि से जय सियराम नाम कीर्त्तन करते हुए सुना, और बड़े प्रसन्न हुए।

पागलपन छुड़ाना:—ज्ञान कूप पर बैठे हुए जब आप प्रातःकाल का नित्य कर्म करते थे, तो एक पागल, हाथ में बताशे लेकर आता, और महाराज जी के ऊपर डालकर, बड़े ज़ोर से भाग जाता। सब लोग जप में बैठे रहने के कारण उसको न रोक पाते, न बरज पाते। ऐसा जब दो-तीन दिन करते हो गया। तो महाराज जी ने श्री सियारघुनाथ शरण, श्री सद्गुरू राम शरण जी इत्यादि को कहा, कि अब के वह आवे, तो उसको पकड़कर बाँध लो, और खूब मार लगाओ। अगले दिन ऐसाही किया गया। उस पागल को पकड़ कर सबों ने मारा, फिर महाराज जी उठे, तो उसको बाँध कर पेड़ में उलटा टाँग दिया, और खूब मारा। एक घण्टा चिल्लाने और पसीने में तरा बोर होने के बाद, उसे छोड़ दिया। तीसरे दिन वह पागल साफ़ सुथरे कपड़े पहन कर महाराज जी की शरण में आया, और प्रार्थना किया कि सरकार ने बड़ी कृपा की, जो मेरा ६ मास का पुराना उन्माद छुड़ा दिया इससे मैं आपका बहुत ऋणी हूँ।

सिद्ध बनाना :—एक दिन काशी वाले श्री सीताराम शरण जी, लोठवा ग्राम में श्री महाराज जी से कहे, कि सियाकिशोरी शरण बड़े सिद्ध हैं। हम तो यों ही रह गये। श्री महाराज जी यह बचन सुन कर बड़े क्रोधित हुए, और एक डण्डा उठा कर इतनी मार मारे, कि हाथ, कमर, और पैर में, से खून बहने लगा। ये भयभीत होकर चरण पर गिर पड़े। और एक पेड़ के नीचे जाकर पड़ गये। शरीर की वेदना से व्याकुल थे, और दर्द के कारण उठ बैठ भी नहीं सकते थे। रात्रि को प्रसादी पाने को बुलाया तो नहीं आये। श्री सियारघुनाथ शरण जी ने कहा—सरकार उनको क्यों इतना डण्ड दिया है। महाराज जी बोले कि "साला" सिद्ध होना चाहता था, अब पक्का सिद्ध बन गया। सीताराम शरण जी को रात्रि भर बड़े अद्‌भुत चरित्र और गुरू कृपा के, चरित्रों का अनुभव हुआ। प्रातः उठे तो न कहीं कटा हुआ था, और न कहीं पीड़ा, न दर्द, शरीर एक दम स्वस्थ था। महाराज जी के पास आये, महाराज जी बोले, आइए सिद्ध जी, उनके चरणों में गिर कर रात्रि की कृपा का धन्यवाद दिये। और सचमुच में तब से उनकी विचित्र विचार धारा, अनुभव और क्रियाएँ शुद्ध-सात्विक और भगवत मयी हो गईं। और चित्रकूट में अखंड निवास कर साक्षात श्री सीताराम जी का दर्शन प्राप्त कर शरीर त्याग साकेत यात्रा कर गये!

पारस भाग की कथा :—आप प्रायः सत्संग में पारस भाग की कथा का वर्णन करते थे, एक बार एक जिज्ञासू ने प्रश्न किया, कि पवित्रता कितने प्रकार की होती है, और कैसे रक्खी जाती है?

उत्तर—पवित्रता चार प्रकार की होती है। (१) जीवात्मा की—अर्थात् जीव को देह और अन्याय पदार्थों से अलग मानना (२) हृदय की—मलिन भाव से, ईर्षा, अभिमान पाखण्ड, तृष्णा वैर, इत्यादि से शुद्ध रहना (३) इन्द्रियों की—पापों से जैसे निन्दा, झूठ, चोरी, पर स्त्री पर दृष्टि करना इत्यादि त्याग करना (४) शरीर, वस्त्र, पात्र, स्थान की—ये शुद्ध जल, मृत्तिका, वायु, और शुद्ध, अहार, व्यवहार, द्वारा होती है। इसको स्थूल पवित्रता कहते हैं, परन्तु महत्व और महात्म्य सूक्ष्म पवित्रता का है। इसके छः भेद हैं (१) शुभ कर्म को अवश्य करना—अर्थात् विद्या पढ़ना, सत्संग करना और शुद्ध जीविका उपार्जन करना, और भजन इत्यादि करना। सब आलस्य और भोगों को छोड़ कर। (२) कपट और अभिमान से अपने हृदय को बचाये रखना (३) अधिक संशय युक्त न होना—अर्थात् जैसा संयोग हो उसी भाँति बर्त्तना (४) पवित्रता विषय किसी मनुष्य को दुःख न पहुँचाना—ऐसे कर्म का त्याग करना (५) आहार और व्यवहार, वचन, और वासन, को सदैव शुद्ध रखना। (६) पवित्रता में इतना आसक्त न होना, कि विशेष कार्य की हानि हो—जीविका और भजन में हानि पड़े इत्यादिक।

भक्त माल की कथा—यह कथा आप प्रायः विवाह पञ्चमी और परिक्रमा के बीच के समय में कहते सुनते थे। एक बड़े भक्त माली विहार-कुण्ड में कथा कहते थे। विना आप के आये वे, कथा प्रारम्भ नहीं करते थे। और जब कभी लोग आप को घेर लेते, तो आप भी भक्तमाल के प्रसंग के चौबिस निष्ठाओं को अर्थात् (१) आर्चा प्रतिमा निष्ठा (२) अहिंसा, दया (३) शरणागति, आत्मनिवेदन (४) उपवास, व्रत (५) कर्म, धर्म, निष्ठा (६) कीर्तन (७) गुरूनिष्ठा (८) दास्य (९) धर्म (१०) धाम (११) नाम (१२) प्रेम (१३) वेष (१४) महाप्रसाद (१५) माधुरी श्रृङ्गार (१६) लीला मूर्त्ति में निष्ठा (१७) वात्सल्य (१८) वैराग्य और शान्ति (१९) श्रवण निष्ठा (२०) धर्म-सत्य (२१) सत्संग, (२२) सेवा निष्ठा (२३) सौहार्द निष्ठा (२४) ज्ञानी भक्तों की निष्ठा का विवेचन पूर्वक वर्णन करते थे, और विशेषकर नाम, वेष, शरणागति और संत सेवा के रहस्य, महात्म्य को उदाहरण पूर्वक समझाते थे।

श्री सीताराम नाम प्रताप प्रकाश आदि ४ ग्रन्थः—बस आपको चार ग्रन्थों में प्रथम यही (१) रामायण (२) भक्तमाल (३) और पारसभाग (४) उनमें भी श्री सीताराम नाम प्रताप प्रकाश के पढ़ने सुनने और कथा कहने का चाव था। कभी कभी वृहद् उपासना रहस्य के प्रसङ्गों, को भी वर्णन करते थे। रेल यात्रा में या तो नाम रटन होता। या उपरोक्त पुस्तकें विशेषतः श्रीसीताराम नाम प्रताप-प्रकाश साथ रहती थी। आप प्रत्येक गृहस्थ को २५,००० नाम जपने का और विरक्त को १ लक्ष से, सवा लक्ष तक नाम जपने का आदेश देते थे। और प्रमाण, महिमा और महात्म में इन्हीं पुस्तकों के श्लोकों को उद्धृत करते थे। और प्रायः यह दोहा बोलते थे:—

नाम प्रताप[१] प्रभाव[२], महिमा[३] करतब[४] रीति[५] गति[६]।
पद[७] गुण[८] पावनताव,[९] शील[१०] सनेह[११] स्वभाव[१२] रति[१३] ॥१॥
गरुता[१४] प्रभुता[१५] प्रीति,[१६] षोड़श भेद विचारि उर।
धरै होय जग जीति, छूटै आवागमन फुर ॥२॥

पेयं पेयं श्रवण पुटकैः रामनामामि रामं।
ध्येयं ध्येयं मनसि सततं तारकं ब्रह्मरूपम् ॥
जल्प्यं जल्प्यं प्रकृति विकृतौ प्राणिनां कर्णमूले।
वीथ्यां वीथ्या मटति जटिलः कोपि काशी निवासी ॥
राम नामजपतां कुतो भयं सर्वताप शमनैक भेषजम्।
पश्यतात मम गात्र सन्निधौ पावकोपि शलिलायतेऽधुना ॥
सप्त कोटि महामंत्राश्चित्त विभ्रान्त कारकाः।
एक एव परो मंत्रो राम इत्यादि अक्षरद्वयम् ॥

अष्टयाम भावना सिद्धि :—(१) भोजन कुञ्ज—एक समय सीता-

मढ़ी में आश्रम से अलग एकान्त में एक वृक्ष के नीचे बैठ कर, आनन्द में विभोर होकर यह पद गा रहे थे—

पद :—सिया सँग जेंवत राजकुमार ।
विविध भाँति के व्यञ्जन साजिसु, भरि लाई अलि थार ।
साग सलोने मधुरे रूचि गर, चटनी चटक अचार ॥ १ ॥
मोवन मिली सोहारी प्यारी, खीर मशाले दार ।
सूपोदन घृत पगी फुलकियाँ, पापर निबुआ खार ॥ २ ॥
सोंधी कढ़ी पकौरिन मिश्रित, दधि चूरा उपहार ।
खाजा खुरमा ललित इमरती, मगद सुवरफी ढार ॥ ३ ॥
अशन अमी सम स्वाद भरे सब, परसहिं अलिकरि प्यार ।
देत लेत मुख कौर परस्पर, हिलि मिलि दोउ सरकार ॥ ४ ॥
सिय रुख लखि बहु साज सम्हारि सु ढोलक झाँझ सितार ।
हरषि निरखि छवि ललना लालहिं, हँसि हँसि गावहीं गार ॥ ५ ॥
सुनहु रसिक मणि राम श्याम तुम, शृँगी ऋषि के सार ।
तात एक सोउ बूढ़ लाडिले, सात सौ मातु तुम्हार ॥ ६ ॥
केहि बिधि सवहिं सुतोषत हुई हैं, अचरज हमहिं अपार ।
जानहु तौ तजि लाज कहहु पिय, प्यारे प्राण अधार ॥ ७ ॥
पूर न परत करत मन मानी, रानी करम छिनार ।
तेहि लागि कोउ गोरे कोउ कारे, जाये पूत सुझार ॥ ८ ॥
अज बकरा को नाम वंश तेहि, गुरु गणिका को यार ।
शृँगी ऋषहि व्याहि दइ भगिनी, वर वश लखि कुल भार ॥ ९ ॥
अज़मायेउ प्रथमहिं अवलन पर, वल तुम्ह जायेउ जार ।
प्रेमलता सब अगुन सगुन भये, सिय नाते एक बार ॥ १० ॥

ऐसा गाना गाकर आनन्द से विभोर हो भावना के सरकार के भोग की प्रसादी पान करने लगे, इतने में स्थान पर से कोई ने आवाज दी, कि चलिए महाराज जी भोग तैयार है। यह वाणी सुनते ही आप चौंके, और मुख से दूध की धार निकल पड़ी। महात्मा लोग यह देख बड़े चकित हुए, और सब समाज ने आपकी सराहना की, कि महाराज जी की भावना सिद्ध है। और महली अष्टयाम से एकीकरण है ।

(२) शयन—एक बार रात्रि को आप शयन करते समय अनुराग से यह पद गाया—

पद :—सिया छबि निरखत नख शिख राम ॥टेक॥
पूरण भाग भये सबही विधि, पाइ सु अनुपम बाम ॥ १ ॥
मणि खम्भन प्रतिविम्व झलक दोउ, सुन्दर गौर सुश्याम ॥
अवलोकत तहँ दुलहिनि सिय की, मूरति परम ललाम ॥ २ ॥

लाजत निज अँग हेरि श्याम रँग, सिय तनु जनु दुति दाम ॥
मनहीं मन बलि जात वारि बहु, आपु सहित रति काम ॥३॥
मूँदि नयन कहुँ हृदय नेह वश, मृदुल मजुँ सिय पाम ॥
ध्यावत लाय जानि निज सर्वस, जपि रसना सिय नाम ॥४॥
श्रवण लगाय सुनत कहुँ नूपुर, ध्वनि गावत जनु साम ॥
परसि होत कहुँ कर सु कृतारथ, पिय सिय अँग सुखधाम ॥५॥
चतुर सखी लखि कहति मर्म लगि, कान सुनिय गुण ग्राम ॥
सेवहु सिय पद प्रेमलता बसि, श्री मिथिला वशुयाम ॥६॥

ऐसा पद प्रेम पूर्वक गाते हुए शयन किया, सुवह को उठकर देखा, तो माँग में सेन्दुर भरा हुआ था, और वाल बने हुए थे, यह देख बड़े आश्चर्य-मय हुए, और प्रभु को धन्यवाद दिया। इस प्रकार के हर कुञ्ज के चरित्र हैं उदाहरणार्थ देही दिये गये हैं।

वंश चलाना :—श्री मुन्नीलाल अग्रवाल काशी में निर्वंशी थे, चौथा पन आ पहुँचा, कोई सन्तति न थी। महाराज जी से श्री संकट मोचन मंदिर में आकर करुणा स्वर में भाई के सहित यह कष्ट निवेदन किया। और कहा, कि सरकार किसी भी प्रकार वंश परम्परा चलाइये। महाराज जी ने फर्माया, कि श्री संकट मोचन हनुमान जी परम सिद्ध और साक्षात रूप में विराज रहे हैं, इनको भगवत का नाम और चरित बहुत प्रिय है। सो नियम पूर्वक सुनाया करो, तो तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा। उन्होंने कहा कि सरकार रोज का नियम तो नहीं चल सकता, एकादशी को दूकान की बन्दी रहती है, उसी दिन मैं रामायण गान, और कीर्तन करने का नियम लेता हूँ। महाराज जी आशीवाद दिये, कि अच्छा जाओ, दो प्रिय पुत्र श्री हनुमान जी की कृपा से प्राप्त होंगे। समय पाकर महाराज जी का आशीर्वाद सफ़ली भूत हुआ, वे दोनों पुत्र सदाचारी और जीते जागते श्री हनुमत परायण हैं। श्री मुन्नीलाल जी महाराज जी के बड़े कृतज्ञ और आभारी हैं। और आज तक उनका वही नियम विना विघ्न बाधा के एक रस चल रहा है। और श्री हनुमत जयन्ती और सार्वभौम रामायण सम्मेलन बहुत उत्साह पूर्वक प्रति वर्ष करते जाते हैं।

रोग जीतना :—एक बार राम नगर में महाराज जी के पैर में बहुत भारी फोड़ा निकला। लीला में न आने से काशी नरेश ने पूछा, कि सियाराम बाबा आज कल क्यों नहीं आते। इनके विना कीर्त्तन और लीला सूना दिखाता है। लोगों ने निवेदन किया कि "सरकार उनके गोड़ में (टाँग में) फोड़ा हुआ है।" महाराज ने सिविल सर्जन को आज्ञा दिया, कि क्षीर सागर पर जागर सियाराम बाबा के फोड़े का शीघ्र उपचार करो। आज्ञा पाकर

सिविल सर्जन बड़े भोर ही महाराज जी के पास पहुँचा, और व्यँग्य पूर्वक महाराज जी से बोला, कि आप इतने बड़े नाम जापक हैं। क्या सन्तों को भी रोग सताते हैं ? महाराज जी गम्भीर वाणी में बोले, "तुमको यहाँ किसने बुलाया है ?" "चले जाओ यहाँ तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं" महाराज जी को बिगड़ा हुआ देख कर वे महाराजा साहब के बिगड़ने के डर से वह चरणों में गिर पड़ा, और कहा महाराज अपराध क्षमा कीजिए मुझे काशी नरेश ने भेजा है। यदि मैं उपचार नहीं करूँगा तो आज्ञा उलघंन में पदच्युत हो जाऊँगा। महाराज जी बोले "आज तो हम उपचार नहीं ही करायेंगे और अगर तुमको करना ही है तो कल आकर करना" सिविल सार्जन लौट गया, महाराज जी ने बैठ कर शास्त्र कथित रोगों के स्वरूपों में से फोड़े के सूक्ष्म स्वरूप की भावना करके विनय किया कि "हे रोग महाराज! कर्मानुसार भोग देने के लिये आप पधारे, सो कार्य पूर्ण हुआ, अब भगवत नाम और वेष पर धब्बा लगाने की पारी है, इसलिए आपको भगवत नाम और वेष की शपथ है, आप पधारे" ऐसा विनय करके शिष्यों से कहा कि नीम ती पत्ती का पानी गर्म करके लाओ। पानी से खूब सेंका, सेंक कर कपड़े में पैर को लपेट कर ऐंठा तो पाव भर के लगभग मवाद निकल कर अलग जा पड़ा। नीम की पत्ती कूँच कर घाव मैं भर कर बाँध दी, और पट्टी बाँध दी। पीड़ा सब दूर हो गई, जो गोड़ (टाँग) दो घण्टे पहले हिला नहीं सकते थे अब पालथी मार कर जय सियराम करने लगे। सब लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। अगले दिन सिविल सर्जन आया तो प्रसन्न चित्त बैठे और नाम रटते देख कर बड़ा चकित हुआ, और चरणों में गिर कर अपराध की क्षमा माँगी। महाराज जी ने कहा कि "कृपा पात्र को रूज मिले, निर्धनता अपमान" के अनुसार सन्त लोग यही शरीर में भोग, भोग कर स्वर्ण की तरह तप कर विशुद्ध होकर प्रभु सामिप्यता को प्राप्त करते हैं।

दोहा :—कृपा पात्र दुख ही चहैं, जेहि में सुमिरण होय।
काम, क्रोध, मन, मोह, बल, व्यापत नहीं उर कोय ॥ १ ॥
दुख में आवत दीनता, नयनन टपकत नीर।
होत विमल उर जरत अघ, समझत पर की पीर ॥ २ ॥

सन्त लोग दुख को निवारण करने में समर्थ हैं, परन्तु अपना भजन इन तुच्छ मायिक कार्यों में व्यर्थ नहीं खर्च करते, इत्यादि बहुत सी बातें बता उपदेश देकर उसका समाधान कर उसको बिदा किया।

षट उामन :—

"भूख प्यास निद्रा लरिकाई * पुनि पुनि जन्म मरन बिरूधाई" ॥

निवारण—ये षट उर्मिन हैं इनकी बाधा को महाराज जी ने नाम के बल से निवारण कर दिया था।

षट प्रयोग :—

"आर्कषन उच्चाटन मारण * अस्तम्भन मोहन वश कारण" ॥
ये छओ प्रयोग महाराज जी जानते थे, और इनमें से आर्कषण उच्चाटन और वशीकरण उनका बहुत सिद्ध था। उसकी कई घटनाएँ हैं।

अष्ट सिद्धि :—

"अष्ट सिद्धि, नव निधि, गति पाँचो * सिद्ध होत रटि नाम सु साँचो ॥
नवधा भगति परा अरु प्रेमा * पावहिं रटि सियराम सु नेमा" ॥
यह वचन महाराज जी ने सत्य और चरितार्थ कर लिए थे। और वे प्रेमाभक्ति के पात्र थे।

षट शरणागति :—महाराज जी छओ शरणागति के भेद को धारण किये हुए थे। और इसके भेद भावों के पूर्ण ज्ञाता थे। जिन लोगों को उपदेश देते थे :—

"संग्रह प्रभु अनुकूलहिं करिये * निन्दा स्तुति होय न डरिये ॥
प्रतिकूलहिं कहँ त्याग सु दीजे * होय परम प्रिय मोह न कीजे ॥
गोपत्रत्तु प्रभु घट घट व्यापा * अस लखि काहुइ देइ न तापा ॥
सोइ प्रभु रक्षा करहिं हमारी * सदा सकल दिशि सब दुख टारी ॥
प्रभु सन्मुख सिर नाय निहोरी * निज अवगुन भाषै कर जोरी ॥
सब सन दीन वचन लघुताई * धारि रटै सियराम सदाई ॥
कारपण्यता यहि कर नामा * राखै उर न कपट छल कामा ॥
षष्ठम सर्व समर्पण कीजै * प्रभु कर तन मन धन सुख लीजै ॥
होइ इकान्त रटै नित नामहिं * बैठि निचन्त सकल सुख धामहिं ॥
एक भरोस आस विश्वासा * राखे प्रभु कर तजि सब आशा ॥
प्रभु जो करैं धरैं शिर सोई * ममहित जानैं यहि महँ होई ॥
दोहा—जीवनि कर प्रभु हित सदा, चाहत अनहित नाँहिं।
यह विश्वास सुधारि दृढ़, मुदित रहिय मन माँहिं ॥"

षट सम्पत्ति :—

"सम दम श्रद्धा अरु विश्वासा * अपर तितिक्षा करहिं प्रकाशा ॥
भाषहि पुनि स्वरूप उपरामा * प्रेम सहित रटवावहिं नामा ॥
षट सम्पति यह अति सुखदाई * जिज्ञासुन की समुझहु भाई ॥"

महाराज जी षट सम्पत्तिवान थे, और उपरोक्त वचनों से दूसरों को धारण करने का उपदेश भी देते थे।

रसिकाई :—सरकार बहुत बड़े रसज्ञ थे, और उतने ही उन भावों को गम्भीरता पूर्वक छिपाये रखते थे। उन भावों को न तो कभी लिखते ही थे, और न कभी लिखने ही देते थे। प्रसंग चलने पर जिज्ञासू और अधिकारी पात्रों को श्री सरवेश्वरी जी की कला कौशलता सरकार की मानलीला का पर्यंक, रति लीला, कन्दुक; पतंग, जलक्रीड़ा, रास बिहार, महली वर्णन इत्यादि प्रसँगों को बड़े प्रेम में निमग्न होकर गोपनीय भाव से वर्णन करते थे। जिनको ये प्रसँग सुनने का सौभाग्य उनके श्रीमुख से हुआ है, वह इस रस के सुख और अश्वादन को भली भाँति जानते हैं। आप इन दोहों का अर्थ बहुत समझा कर भाव पूर्ण वर्णन करते—

"श्री रघुनन्दन सखिन ते, अपनी करले चौंरि।
जनक लली के प्रेम से, आप उड़ावत भौंरि ॥१॥
गर्व करौ रघुनन्दन, जनि मन माँहिं।
आपन मूरति देखो, सिय की छाँहिं ॥२॥
जनक लली सिय पद कमल, जब लगि हृदय न वास।
राम भँवर आवत नहीं, तब लगि ताके पास ॥३॥
प्रेम सरोवर प्रेम को, भरो रहे दिन रैन।
जहँ जहँ प्यारी पग धरैं, लाल धरैं दोउ नैन ॥४॥"

इत्यादि, इत्यादि।

पण्डिताई :—नाम जापक विरक्त व रसज्ञ होने के अतिरिक्त आप बड़े धुरन्धर पण्डित भी थे, और सब शास्त्रों का विषय और भाव व सिद्धांत खींच खींच कर आपने अपने ग्रन्थों में भर रक्खा था। यह सेवक की मनोवृत्ति जब वाह्य हुई, तब शिव संहिता, मधुर केलि कादम्बनी, लोमश संहिता, अगस्त संहिता, कौशल खण्ड, श्री रघुवर गुणदर्पण, सत्योपाख्यान, आदिक शास्त्रीय ग्रन्थ, व श्री कृपानिवास जी, किले वाले महाराज जी तथा रामसखे जी, इत्यादि आचार्यों के ग्रन्थों को देख कर भी जब मन को सन्तोष न हुआ, तब श्री मधुकर कुञ्ज (श्री अयोध्या) के महाराज जी से जो कि बड़े सिद्ध और रसज्ञ थे, और रसिकाई के ग्रन्थों की याचना की। उन्हों ने मुँह पर थप्पड़ लगाया, कि तुम अपने महाराज जी का स्वरूप नहीं जानते, वे क्या थे? और क्या वह ग्रन्थों में लिख कर छोड़ गये हैं? यों तो शिष्य को अपने गुरूग्रन्थ और वाक्य बाहर जाना ही नहीं चाहिए। और फिर तुम्हारे महाराज जी तो परम सिद्ध और कृपा पात्र थे। उनकी वाणी सुनकर महाराज जी के २६ उपलब्ध ग्रन्थों को पुनः देखा, तो सचमुच उपरोक्त

कथित सब ग्रन्थों का सार मौजूद था, और कहीं वाहरीय ग्रन्थ देखने की आवश्यकता न थी। पढ़ कर मन को और समाधान हुआ, और इसका अनुभव ग्रन्थ देखने वालों ने स्वयं ही किया होगा।

एक बार महाराज जी लोठवा ग्राम (जनकपुर) में गये, वहाँ के महन्त जी ने उनका बड़ा सत्कार किया, और एकान्त स्थान में वास दिया वहाँ पर एक शास्त्रार्थी पण्डित रहता था, वह महाराज जी के पास आकर बोला क्या, आप लोग केवल सियाराम और सीताराम ही करते हैं? कुछ गीता भागवत इत्यादि आर्ष ग्रन्थों का भी अवलोकन करना चाहिए, जिससे शास्त्रीय ज्ञान और भेद भाव का भी बोध हो। पण्डित ऐसा कह कर चले गये। महाराज जी ने एकान्त में बैठ कर दो घण्टे में "श्री सीताराम नाम अनन्य शतक" नामक ग्रन्थ की रचना की। अगले दिन पण्डित जी फिर आये, महाराज जी ने वही ग्रन्थ उनके सामने रख दिया, पढ़ कर पण्डित जी बड़े आनन्दित हुए, रोमाँच हो गया, और आँखों से आश्रुधारा बहने लगी कहने लगे कि आपका भाव और विषय धन्य है, हम लोग झूठे ही, वेद पुराण शास्त्र उपनिषद् का भार ढोये फिरते हैं, जब कि इन रहस्य के विषयों को जानते भी नहीं। आपसे अपने अपराध की क्षमा कराई, और शरण में गये और अनुयायी हो गये।

कविताई :—इसके साथ साथ आप बहुत बड़े कवि भी थे, और समस्याओं की पूर्त्ति सहज में ही कर देते थे। आप जितने विषय लिखते सब पद्य में ही लिखते। वार्त्ता में आज तक कोई भी विषय नहीं लिखा। छन्द, सोरठा, दोहा, कवित्त, कुण्डलिया, सवैया, इत्यादि सभी का प्रयोग आपने अपने काव्य में किया है। पिंगलादिक के भेद का आपको पूर्ण ज्ञान था।

होली उत्सवः—मिथिला परिक्रमा से लौटने के बाद चैत्र बदी पँचमी के रोज अपने समाज के साथ नवाही वाले महन्त जी के यहाँ पहुँचते। ये बड़े उच्च कोटि के महात्मा और कृपा पात्र सन्त थे, और प्रति वर्ष आनन्द पूर्वक होली का उत्सव मनाया करते थे। उनकी होली सिद्ध हो चुकी थी। एक वर्ष महाराज जी ने रूपसखी जी की होली गाने के बाद यह पद बड़े आनन्द में विभोर होकर श्री युगल सरकार के श्रृङ्गारित मूर्त्ति के आगे गाया।

पद्यः—होरी खेलत राम सिया जोरी ॥ टेक ॥
इत सिय संग सखी बहु राजैं, रघुवर संग सखन जोरी ॥ १ ॥
कंचन बन मिथिला पुर माहीं, धूम मची अति चहुँ ओरी ॥ २ ॥
केशर रंग गुलाब पनारे, बहन लगे खोरी खोरी ॥ ३ ॥
अबिर गुलाल कुमकुमनि मारत, पिचकारिन तनु सरबोरी ॥ ४ ॥
प्रेमलता सुर लखत मुदित मन, बरषत सुमन सुभरि झोरी ॥ ५ ॥

यह पद से वड़ी धूम मची, दोनों सरकारों को आवेश आगया, और सब कोई को बड़ा आनन्द हुआ, मानों प्रत्यक्ष में ही महली होली हो रही है।

झूलन उत्सव :—आपका श्री अवध में लगभग तीस वर्ष तक प्रति वर्ष झूलन उत्सव में सम्मिलित होने का नियम रहा। यों तो प्रति वर्ष ही कुछ न कुछ अनुभव होते ही थे, एक वर्ष तो इनको प्रत्यक्ष महली झूलन की झाँकी का अनुभव हुआ। आप आनन्द में विभोर होकर यह पद गाने लगे।

पद गजल :—सुन्दर सलोना साँवरा दिलको चुरालिया ।
कहते बने न जैसा जुल्मी जुलुम किया ॥ टेक ॥
झूलें दिये गर बाँहि सिया संग रँग भरे,
बाँकी अदाँ दिखलाय के वौरी वना दिया ॥१॥
शिरपै किरीट कुण्डल कानों में, हल रहे,
जुल्फें युगल सु नागिन मेरा डसा जिया ॥२॥
भूषन वसन अनूप अमल अँग अँग सजे,
लाजै बिलोकि माधुरी रति काम की तिया ॥३॥
गावैं सुराग रागिनी अलि मोद मन भरा,
अवलोकि छटा छैल की शीतल करैं हिया ॥४॥
छाई घटा चहुँ ओर मोर शोर मचावैं,
बिरही फिरै पुकारता पपिहा पिया पिया ॥५॥
झूलन बिहार प्रेमलता नित्य ध्यान है,
निरखै सोई जिसके वसें उर में लली सिया ॥६॥

प्रभाती पद :—एक वार श्री संकट मोचन हनुमान जी में प्रातःकाल के कीर्त्तन के बाद सरकार के जगाने का पद गाना प्रारम्भ किया।

पद—"प्रात काल जागे सुख पागे स्वामिनि सिय रघुराई ॥ टेक ॥
जय जय कार करहिं ललना गण, आनन्द उर न समाई ॥१॥
हेम थार सब सौंझनि भरि भरि, कुंजन ते हरषाई ।
गावत गीत सहचरीं प्रमुदित, कनक भवन जुरि आई ॥२॥
नख शिख किये शृङ्गार शुभग तन, वरणि कवन विधि जाई ।
उमा, रमा, रति, शची, शारदा, जिन्हि के सम न तुलाई ॥३॥
दम्पति रूप रँगीं सब नागरि, जुगवत, रहहिं सदाई ।
निज निज सेवा लिये खड़ीं सब, उझकहिं झरफ उठाई ॥४॥
कीन प्रवेश पाइ रुख भीतर, करि प्रणाम गुणगाई ।
भूषण वसन सँभारि सेज दोउ, वैठारेउ सुर झाई ॥५॥
आलश वश चख झुकत परस्पर, पुनि पुनि लेत जम्हाई ।
प्रेमलता छवि निरखि अनूपम, जन्म लाभ अलि पाई ॥६॥"

मान ठानना :—एक बार सेवक के कान में सन् १९४० ई० में पीड़ा हुई। रात्रि भर "महाराज जी, महाराज जी" रटते हुए बीती। महाराज जी उन दिनों में संकट मोचन में विराज मान थे। भोर में धर्म पत्नी ने जाकर सब हाल कह सुनाया, और शान्ति अर्थ चरणामृत माँगा। महाराज जी यह हाल सुनकर बहुत दुखी हुए, सन्त का हृदय बड़ा दयालु होता है, और अपने जन के लिए तो सर्वस्व न्योछावर करने के लिए उद्यत रहते हैं। हनुमान जी से विनय किया, कि महाराज! भक्त की पीड़ा को हरिए, वरणा हम आप की आरती में आना बन्द कर देंगे। सेवक का दोनों समय दर्शन व सत्संग करने का नियम महाराज जी के काशी वास के समय में बना रहता था। जब अगले दिन भी दर्शन करने न पहुँचा, तो महाराज जी हाथ में छड़ी लेकर देखने को आने के लिए स्वयं उद्यत हुए। इतने में एक साँवला मन हरण दश वर्ष की अवस्था के बालक ने आकर छड़ी पकड़ ली, और कहा, कि बाबा कहाँ जाते हो? और मंदिर की आरती में क्यों नहीं जाते? महाराज जी ने सब प्रयोजन कहा। तब बालक बोला "बाबा! यह चार दिन का कष्ट आपके भक्त को मिला है। पाँचवें दिन वह स्वतः ही आपके दर्शन करेगा, आप चिन्ता न करें, आरती में जाया करें।" ऐसा कह कर वह बालक गायब हो गया। श्री महाराज जी को बड़ा आश्चर्य, और प्रसन्नता हुई। सच है, बड़ों का मान सरकार स्वतः रखते हैं। जब पाँचवें दिन रोग से मुक्त होकर सेवक दरबार में पहुँचा, तब श्री महाराज जी यह सब वृत्तान्त कह सुनाये।

एक बार महाराज जी गुदड़ी सी रहे थे, और नाम रटते हुए, पद-गान कर रहे थे। सरकार अपनी मधुर मूर्त्ति से आकर गुदड़ी के एक कोने पर विराजमान हो गये। श्री महाराज जी मुँह फेर कर बैठ गए, कि स्वामिनी जी कहाँ हैं? उनके बिना आपकी शोभा निस्तेज है। इसी प्रकार का हास विलास कुछ देर तक होता रहा, (सरकार ने इनको मनाया) फिर अन्तर्धान हो गए। फिर कभी अकेले इस प्रकार से न पधारे। अर्थात् जब कभी आये, तो युगल मूर्त्ति के दर्शन हुए।

श्री सीतामढ़ी की भूमि में छत्ता लगा कर महाराज जी, अपने शिष्य वर्ग तथा महात्मा किशोर दास जी, अपने शिष्य वर्ग, तथा महात्मा अवध किशोर दास जी के साथ विराज मान थे। आप बड़े चिन्तित थे, कि आश्रम ऐसे एकान्त स्थल पर लोग बनने देते, तो सर्वोत्तम होता। श्री किशोरी जी को विनय सुनाकर, मान ठानकर, छत्ता लगा कर, विराजमान हुए। रात्रि में जब सब सो गये, तो महाराज जी, इसी उधेड़ बुन में बैठे नाम जप रहे थे। श्री स्वामिनी जी का डोला आया, और अष्ट सखी साथ में थीं। मुस्करा कर महाराज जी से बोलीं, कि आप चिन्ता क्यों करते हैं, जिस भूमि में आप बैठे हैं, इसी में आपका दखल हो जावेगा। ऐसा कह कर सवारी लौट गई।

यह चरित्र श्री अवध किशोर दास जी, कपड़े से मुँह ढके हुए, देख रहे थे। अगले ही दिन उस भूमि की डिग्री होने का समय आ पहुँचा। यह बड़ी आश्चर्य जनक घटना हुई।

नन्द महरी में :—शिष्यों की इच्छा हुई कि माघ भर श्री कमला जी में स्नान किया जाये। आपको तो भजन करना ठहरा, जहाँ भी हो, तैयार हो गये। जनकपुर से यात्रा आरम्भ हुई। धनुषा के महात्मा के यहाँ आसन्न किया, खूब सत्सँग कीर्त्तन हुआ। वहाँ से कमला जी के किनारे विचरते, हुए नन्द महरी पहुँचे। वहाँ एक महात्मा की कुटिया में आसन किया। बड़ी भूख लगी थी, महात्मा ने एक वृक्ष के बीज इकत्रित कर रक्खे थे, पाँच-पाँच, सात-सात बीज प्रत्येक मूर्त्ति को दिए, कहे कि मुँह में डालकर पानी पीलो। सबने जल पीया, तो शर्बत का आनन्द बीजों के सम्पर्क से हुआ। सबकी थकान भूख और प्यास नष्ट हो गई। यह वही स्थल तो थी, जहाँ महाराजा जनकजी की नौ-लक्ष गऊ रहतीं थी, और नन्द और गोप लोग उनकी देख रेख करते थे। इन्हीं के वंशज वहाँ चले आते हैं। ढोलक-झाँझ खड़कने से रात्रि में शब्द बहुत दूर तक हुआ, जिससे गाँव २ में नवीन महात्माओं के आने के समाचार सूचित हुए। सब लोग चेते और दर्शन को आने लगे, खूब सेवा सत्कार हुआ, नाम वेष का प्रचार हुआ और आनन्द पूर्वक कमला जी का स्नान हुआ। यहाँ की बहुत सी गाथाएँ हैं, जिनको विस्तार भय से नहीं दिया जाता।

विद्रोहियों से रक्षा :—जब आपका वृहद उपासना रहस्य ग्रन्थ पूर्ण होकर प्रकाशित हुआ, तो तम्बाकू पीने वाले महात्मा वृन्द, तपसी, नागा, लोग अपनी इसमें निन्दा देख बहुत क्रोधित हुए। पहले तो कचहरी में दावा किया, वहाँ से मुकदमा खारिज हो गया। तो महाराज जी को मारने का इरादा किया। सब लाग रामनगर की लीला में एकत्र हुए, और एक रात्रि को अचानक, चीमटा, भाला, बाँस और डण्डा लेकर सहसा इनके ऊपर, इनको समाज सहित जान से मार डालने के लिए आक्रमण किया। स्वामिनी जी बड़ी दयालुनी हैं, अपने भक्त की हर जगह और हर समय रक्षा करती हैं। ज्योंही ये लोग क्षीर सागर के पास पहुँचे, तो देखते हैं, कि हजारों शक्तियाँ तीर, चक्र, त्रिशूल, भाला हाथ में लेकर इनकी रक्षा कर रही हैं और चारों ओर बड़ी सावधानी से तत्पर हैं। यह लोग भयभीत होकर भागे और कहा, कि यह कोई साधारण पुरूष नहीं हैं। कोई सरकार के परिकर हैं। अगले दिन उनके मुखिया उनसे क्षमा याचना कराने को उपस्थित हुए। महाराज जी बोले, महाराज! इसमें तो बुरा मानने की कोई बात ही न थी, जो मेरे अनुभव में आया मैंने लिखा, जो आप लोगों के अनुभव में आवे सो आप करें।"

आकाशवाणी :—सम्वत् १९६७ ई० विक्रमी में जब आप प्रथमबार राम नगर लीला में पधारे तो क्षीर सागर पर कुछ मल्लाहों को मछली मारते हुए देखा। मछलियों को जाल में फँसे देख आपको दया आई, और मल्लाहों से कहा कि इनको छोड़ दो। मल्लाह बोले "महाराज" अपना ज्ञान अपने पास रक्खो, आपको भजन करने का हुक्म है, आप भजन करो, हमको भगवान का मछली मारने का हुक्म है, सो हम अपना काम करते हैं। यदि हम यह काम न करें, तो हमारे बाल बच्चे क्या खायें, और कहाँ से ?" यह कह कर फिर मछली मारने लगे। महाराज जी को यह सुनकर बड़ा खेद हुआ और मन उदास हो गया। और बिना लीला देखे ही भोर में मिथिला जी लौटने का संकल्प कर लिया। रात्रि को नाम रटते हुए तन्द्रा आई, उसी में आकश-वाणी हुई आपने तुरन्त सचेत होकर पेन्सिल से उजाली रात में उसको छन्द बद्ध कर लिया, और उसका नाम "विश्व विलास बीसिका" रक्खा। उसी में का पद है—

"जो प्रभु रची मीन गो बकरी सोइ प्रभु मल्लाह कसाई है।
चिउँटी से ब्रह्मा लगि रचिकर संगइ मृत्यु लगाई है॥
करि निमित्त प्रभु प्रेरित मौति सु मारत अवसर पाई है।
प्रेमलता अति अटर कहहिं श्रुति हरि इच्छा प्रभुताई है॥"

इससे आपका समाधान हो गया, फिर आपने आनन्द पूर्वक लीला देखी।

इस प्रकार आप के सहस्रों दिव्य चमत्कारात्मक चरित्र हैं, जिनका कि लिखना कठिन भी है, और अत्यन्त आवश्यक भी। उदाहरणार्थ हर प्रकार की प्रभुता की कुछ घटनाओं का उल्लेख करने का प्रयत्न किया गया है।

कोढ़ छुड़ाना :—काशी के श्रीरामवल्लभ मारवाड़ी के प्रिय पुत्र गिन्नी प्रसाद जी को कोढ़ हुआ। महाराज जी के शरण को प्राप्त हुए महाराज जी फरमाये कि संकट मोचन हनुमान जी के मन्दिर का जीर्णोद्धार कर दो तुम्हारा मनोर्थ सफल होगा उन्होंने सहर्ष हनुमान जी के मन्दिर का जीर्णोद्धार किया और १ वर्ष के अन्दर ही लड़के का कोढ़ छूट गया। यह घटना सम्वत १९६७ वि० की है।

सर्वसिद्धियोग प्रयोग :—सौ बात की १ बात यह है कि सब साधन और उपायों को छोड़कर केवल भगवत नाम के परायण होने से सब मनोर्थों का सिद्धि होती है :—

अस विचार जो चहहु भलाई * रटहु रटावहु नामहिं भाई॥
विद्यारथी रटै जो नामहिं * पावहिं विद्या बिनु श्रम सामहिं॥
धन हित रटन करै जो कोई * मिलै विपुल कहुँ घटे न सोई॥
उभय लोक महँ जो चह जीती * रटै रटावै नाम सप्रीती॥

जो चह कोउ सुन्दर सुत नारी * रटै नाम नित होय सुखारी ॥
नारि चहहिं जो सुत पति भूषण * पावहिं सो रटि नाम अदूषण ॥
रोगी जो यह रोग नशावन * रटै नाम लय लाय सु पावन ॥
कोढ़ी चहै जो निर्मल काया * रटै नाम सियराम सुहाया ॥

रूजगारी रूजगार में, लाभ चहहिं जो कोय ।
रटै रटावै नाम नित, कबहुँ न हानी होय ॥ १ ॥

भयदायक अस्थलनि मसाना * रटत जाव सियराम सुजाना ॥
राजभवन जंगल जल माँहीं * प्रविसंहु नाम रटत भय नाहीं ॥
कालहु की गति नाहिन तहँवाँ * होत उचारन नाम सु जहँवाँ ॥
दुखप्रद जे सिंहादिक नाना * सुनत पराहिं नाम धुनि काना ॥
जे ग्रह ग्राम परै बीमारी * हैजा प्लेग बुखार तिजारी ॥
जय सियराम नाम धुनि कीजै * मिलि सुपरस्पर सब दुख छीजै ॥
जेहि ग्रह ग्राम सु प्रेत विराजै * सुनि सियराम नाम धुनि भाजै ॥
जो सीखन चह गुण चतुराई * सो सियराम रटै मनलाई ॥
जोग जुगति जो चाहहिं जोगी * रटै नाम सियराम निरोगी ॥

कहत सुनत गावत सुजन, राम कथादि पुराण ।
आदि अन्त श्री नाम धुनि, कीजै हित कल्याण ॥ २ ॥

नाम सुकीर्त्तन गाय बजाई * करहु करावहु हिलमिल भाई ॥
आरम्भौ जो कवनिहु काजा * करिय नाम धुनि सहित समाजा ॥
जो चह सिद्धि करन सब कामा * करिय नाम धुनि प्रद विश्रामा ॥
चाहहु जो सब सुख अनुकूला * करहु नाम धुनि मंगल मूला ॥
हनुमन्तहिं जो चहहु रिझाई * तौ रटि नाम सुनावहु भाई ॥
सकल वासना करिहैं पूरी * सुनि सियराम नाम धुनि रूरी ॥
जो चह प्रभु पद पंकज प्रेमा * करै नाम धुनि दायक क्षेमा ॥
सब विधि कुशल चहहु सबठामा * रटहु सदा सियराम सु नामा ॥
आकर्षण मारण मोहन मन * अस्तम्भन वश करन उचाटन ॥
जप तप योग विराग सुदाना * पूजन पाठ होम व्रत ध्याना ॥

अनुष्ठान शिधि होयँ सब, आदि सु षष्ट प्रयोग ।
रटै नाम हनुमान ढिग, बैठि सुतजि तिय भोग ॥ ३ ॥

रामनाम मही रटिलहिं; चहुयुग सिद्धि सब कोय ।
गावत संत पुराण श्रुति, प्रगट प्रभाव न गोय ॥ ४ ॥

सकल मंत्र नामानि के माहीं * शक्ति सु राम नाम सम नाहीं ॥
कोटिन माघ प्रयाग नहाई * राम नाम वारक रटु भाई ॥
कोटिन एकादशि का कीजै * राम नाम मुख वारक लीजै ॥
कोटिन विप्र सु न्यौति जिमावै * राम नाम वारक मुख गावै ॥

अटल सिद्धान्त :—

पद्य :—सन्तों शब्द सुनो सुखदाई ॥

कोटिन जन्म प्रयाग आदि सब तीरथ विधिवत जाई ।
मज्जन पान करै धरि धरि तनु देइ दान हरषाई ॥ १ ॥
मन वच कर्म कपट तजि सेवै साधु जन्म बहुताई ।
कर्म धर्म बहु अगणित युग जग करै सु श्रद्धा लाई ॥ २ ॥
सप्त पुरिनि महँ पद्म करोरनि निवसै मोद बढ़ाई ।
अर्ब खर्ब युग साधै साधन योग समाधि लगाई ॥ ३ ॥
कोटिन जन्म देवतनि अर्चै करै द्विजन सेवकाई ।
पढ़ै कोटि विधि कि भरि आयू वेद पुराण अघाई ॥ ४ ॥
कोटिन जन्म करै जप तप व्रत कन्द मूल फल खाई ।
अमर होय परिवार सहित जग त्रिभुवन प्रभुता पाई ॥ ५ ॥
जाति जनक जननी पद सेवा सहित सुहृद हित भाई ।
करै कल्प शत कोटि बढ़ाय सु प्रीति प्रतीति सुहाई ॥ ६ ॥
मिटत न आवागमन केर दुख अधिक अधिक अरुझाई ।
विनु सुमिरे सियराम नाम मुख द्रवत न सिय रघुराई ॥ ७ ॥
नाम रटे विनु भव भ्रम बन्धन कवनिउँ विधि न नशाई ।
अस विचारि सियलाल शरण होइ कीजै नाम रटाई ॥ ८ ॥

दो० :—जियै हलाहल पान करि, मरै पियत अमिमूरि ।
युगल नाम बिनु तदपि कलि, प्रेमलता गति दूरि ॥ १ ॥
पानी महँ पावक लगै, पश्चिम ऊगहि भानु ।
तदपि कठिन सियराम बिनु, प्रेमलता गति जानु ॥ २ ॥
तरु धावै, वापी उड़ै, खर शिर जमै विषान ।
नाम रटै विनु सुगति कलि, दुर्लभ प्रेमलतान ॥ ३ ॥
मूसा बाँचै वेद अरु, वानर छावै गेह ।
प्रेमलता, कलि नाम बिनु, सुगति होइ सन्देह ॥ ४ ॥
मोम तुरँग चढ़ि तूलगिरि, अनलहिं जीतै जङ्ग ।
प्रेमलता, गति नाम बिनु, यह आश्चर्य प्रसङ्ग ॥ ५ ॥
जूठी पातरि चाटि वरु, भरे पेट गजराज ।
प्रेमलता अति अगम पै, नाम बिना सुख साज ॥ ६ ॥

इति श्री प्रेमलता वृहद चरित्रायाम् चतुर्थ चमत्कार खण्ड समाप्तम् ॥

जय सियराम जय २ सियराम जय सियराम जय २ सियराम
जय सियराम जय २ सियराम जय सियराम जय २ सियराम

॥ श्री सद्‌गुरूवे नमो नमः ॥

पञ्चम खण्ड

संस्मरण

शिक्षा भरे विनोद

(ले० पं० श्री उपेन्द्र नाथ मिश्र "मन्जुल")

(१) तिलक से जलन

शरणागत हुए अभी कुछ ही दिन बीते थे, कि मेरे ललाट पर ऊर्ध्वपुंड्र श्री रामानन्दीय तिलक देखकर मेरे कुछ ब्राह्मण मित्र मुझसे जलने लग गये थे। मैं एक दिन महाराज जी से कह ही तो पड़ा, कि कुछ लोगों को मेरे तिलक से जलन है। तपाक से उत्तर मिला—सधवा के शृंगार को देखकर राँड़ें जलती ही हैं, उन्हें जलने दो। मेरे हृदय में नवीन शक्ति का संचार हुआ।

(२) तम्बाकू

१९३० ई० के अक्टूबर में मैं काशी रामनगर की लीला देखने गया था। लीला समाप्त होने पर अपने साथियों सहित संकट मोचन मन्दिर पर श्री गुरुदेव के चरणों में बैठा था। बैठे हुए व्यक्तियों में एक इलाहाबादी वकील शिष्य भी थे, जो तम्बाकू (खैनी) खाने के अभ्यासी थे, पर श्री महाराज जी को इसका पता नहीं था। संयोगवश उनकी चादर की खूँट में बँधा तम्बाकू सहसा सामने खुलकर गिर पड़ा। श्री महाराज ने पूछा, वकील यह क्या है? लज्जा भरे स्वर में शिर झुकाये वकील साहब ने कहा, सरकार, यह तम्बाकू है। सुनते ही गुरुदेव की वाणी गूँज उठी—कि यह तमाकू है? या "तमाम गू है! वकील साहब ने अपने कान पकड़े। वे बोल उठे सरकार, अब इसका सेवन कभी न करूँगा। फिर तो उन्होंने तमाकू को कभी छूआ भी नहीं! गुरुदेव के मुख से छूटे हुए शब्द ने जादू का सा काम किया।

आश्चर्य का प्रभाव

(३) (घातक कुत्ते से रक्षा)

उपर्युक्त श्री रामनगर लीला दर्शन की यात्रा के सिलसिले में ही जब मैं श्री रामनगर में क्षीर सागर के निकटवर्ती बाग में अपने श्री गुरुदेव तथा उनके दो विरक्त शिष्य (श्री सद्गुरुरामशरण और श्री सीताराम शरण जी) के साथ ही रह रहा था, कि एक दिन श्री व्यास महादेव के दर्शन की ठनी। श्री रामनगर के ईशान कोण में गाँव गिराँव से बिल्कुल अलग करीब डेढ़ कोश की दूरी पर उक्त महादेव जी का मन्दिर था, और उसी से सटा एक सुन्दर उद्यान। पुजारी के सिवा वहाँ कोई रहता नहीं था। जिस समय हम लोग वहाँ पहुँचे, दिन ढल चुका था। पुजारी सुदूर के झाड़ियों में कुछ फूल और लकड़ियों के लिये चला गया था, और था वहाँ एक विशाल काय मुक्त बन्धन खूँखार कुत्ता। महादेव जी का दर्शन कर ज्योंही हम लोगों ने उद्यान में पैर रक्खा, कि कुत्ते की भयानक आकृति और हम नवागन्तुकों पर टूट पड़ने वाली उसकी रोष भरी प्रकृत्ति ने गुरुदेव को छोड़ हम तीनों को भय विह्वल बना दिया। भय के मारे हम लोगों ने गुरुदेव के पीछे शरण ली, और आँखें मुद ली। पास में कोई दंड और सोटा भी नहीं था, जो उससे मुकावला भी किया जाता। दूर से पुजारी अलग चिल्ला रहा था, कि बाबा आप लोग वहाँ से भागिये, भागिये, नहीं तो छूटा हुआ कुत्ता काट खायेगा। किन्तु सहसा यह देखकर आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब श्री महाराज से यह कहते सुना, कि "भैया, हम कोई चोर उचक्के नहीं हैं, हम तो दर्शनार्थी यात्री हैं" फिर क्या था, कुत्ते ने जैसे बात मान ली, एक बार स्वामी जी की ओर देखकर शिर झुका ज़मीन पर अपनी पूर्ववत् सहज मुद्रा में वह बैठ गया। हम लोगों के जी में जी आया। एक महान् आत्मा का प्रभाव अन्य आत्माओं को किस प्रकार अभिभूत कर लेता है। यह उसी दिन हम लोगों ने आँखों देखा।

(४) बंगाली बाबू

इसी वर्ष जब कि हम लोग अभी श्री रामनगर की लीला समाप्त कर अभी संकट मोचन स्थान पर आये भी नहीं थे, कि इसी बीच दो कलकत्ते के बंगाली ब्राह्मण परिवार के दो सज्जन अपनी पत्नियों सहित, सियाराम बाबा (काशी में इसी नाम से प्रसिद्ध मेरे पूज्य गुरुदेव)की खोज में संकट मोचन काशी आये। इनके दो दिनों की प्रतीक्षा के बाद हम लोग संकट मोचन आ पहुँचे। बंगाली सज्जन श्री महाराज जी का दर्शन पाते ही जैसे पहले का परिचय हो वैसे, उनके चरणों में लोट गये। पूछने से पता चला, कि एक कलकत्ते के

शिक्षा विभाग के रजिष्ट्रार हैं, और दूसरे इञ्जिनियर। किसी सद्गुरू की खोज में ये बहुत दिनों से थे, इन्हें एक दिन श्री संकट मोचन हनुमान जी का स्वप्न हुआ, कि तुम काशी में मेरे स्थान पर आकर श्री सियाराम बाबा (श्री १०८ स्वामी श्री सियालाल शरण जी महाराज "प्रेमलता") से दीक्षा संस्कार लो, फिर तो स्वप्न में यह शुभादेश पाते ही, अवकाश ग्रहण कर काशी पहुँच, सपत्नीक शरणागत हुए। उधर उनके नेत्र अविरल प्रेमाश्रुओं की वर्षा कर रहे थे, इधर हम लोग सीतामढ़ी निवासी जिनमें मेरे प्रिय गुरुभाई मास्टर शुकदेव प्रसाद बी० ए० बी०टी और बाबू राजेन्द्र प्रसाद मैनेजर कोअपरेटिभ बैंक मुख्य थे—आश्चर्य के अथाह नद में गोते लगा रहे थे और उनके इस भूरि भाग्य पर ईर्षा कर रहे थे। परिचय से ज्ञात हुआ, कि आप दोनों सीतामढ़ी हाई स्कूल के प्रधानाध्यापक गोस्वामी सुशील कुमार जी के आप खास साढ़ू होते हैं, प्रसन्नता की सीमा न रही। उसके बाद तो आपके पत्र सीतामढ़ी सद्गुरु निवास में बराबर ही आते रहे।

(५) तार बाबू

सीतामढ़ी से पूर्व बाजपट्टी स्टेसन से लगभग ४ मील की दूरी पर हुमायूँ पुर प्रसिद्ध गाँव है। सम्पन्न कायस्थ परिवार अधिक संख्या में रहते हैं। भक्त केदार बाबू यहीं के वर-रत्न थे। सीतामढ़ी में श्री महाराज जी के प्रति आपकी बड़ी भक्ति थी। आप इन्हें अपना सिद्ध गुरु मानते थे। मुझ पर भी आपका अटूट प्रेम था। अपने कमरे में आपने श्री महाराज जी के कई छोटे बड़े चित्र लगा रखे थे, और नित्य उनकी पूजा आरती आदि आप किया करते थे। एक दिन एक अपने पड़ोसी बन्धु (उनका नाम मैं भूलता हूँ) रेलवे में कहीं तार बाबू थे। केदार बाबू ने प्रेमवश उन्हें श्री महाराज जी का एक छोटा सा चित्र पट दिया, किन्तु तार बाबू उन व्यक्तियों में थे, जिन्हें वेद शास्त्र ईश्वर और सन्तों में तनिक भी विश्वास नहीं होता। फलतः तार बाबू ने मज़ाक के रूप में श्री सद्गुरु के प्राप्त चित्र को अपने शयनागार में दीवाल घड़ी के नीचे उलटा लटका दिया, और उसे उसी रूप में केदार बाबू को भी दिखलाया। भक्त केदार बाबू की आँखों में आँसू छल छला आये, और कहा, 'इसका परिणाम शीघ्र ही प्राप्त होगा'। दूसरे ही दिन स्त्री सहित तार बाबू को स्वप्न में भयंकर श्री हनुमन्मूर्ति छाती पर चढ़ी दिखाई दी, और यह कठोर ध्वनि कानों में सुनाई पड़ी, कि क्या? अब भी महात्मा को उल्टा लटकायेगा? फिर तो तार बाबू के होश उड़ गये, स्त्री समेत वे भय से आर्तनाद कर उठे। जाग्रत् होने पर भी उनके हृदय से भय नहीं जा रहा था, वह उग्र मूर्ति भुलाये नहीं भूलती थी। प्रातः काल होते ही आप नंगे पैर केदार बाबू के घर दौड़े आये, और गिड़गिड़ा कर प्रार्थना की, जब तक आप श्री महाराज जी का दर्शन न करायेंगे, तब तक हम लोग अन्न जल भी ग्रहण

नहीं करेंगे। जैसे भी हो आप उनका दर्शन हमें कराइये। विस्मय और हर्ष से विभोर केदार बाबू अपनी मोटर लिये, सीतामढ़ी श्री महाराज जी के चरणों में उपस्थित हुए, और सारी बातें सुनाईं, पर भजन में बाधा के विचार से श्री महाराज ने जाना स्वीकार न किया, परन्तु हठी भक्त केदार बाबू कब मानने वाले थे, उनके दिन रात के पूरे सत्याग्रह ने महाराज के सहज दयालु हृदय को द्रवी भूत कर दिया। एक ही रात ठहर कर लौट आने की शर्त पर किसी तरह वे राजी हो गये, और साथ चलने की मुझे भी आज्ञा मिली। ठीक सन्ध्या समय हम लोग हुमायूँ पुर पहुँचे। वहाँ स्वागत की जितनी बड़ी तैयारी देखी, उतनी देश के किसी बड़े नेता के लिये ही संभव हो सकती थी। उसी रात को तार बाबू सपरिवार वैष्णव धर्म में दीक्षित हुए और अपने किये अपराध को अपने सौभाग्य का मूल माना। उस दिन अनेकों भूली भटकी वहाँ की कितनी आत्माओं को अपने अमूल्य उपदेशों से कृतार्थ कर दूसरे ही दिन अपने आश्रम को आये। यह अलौकिक घटना भुलाये नहीं भूलती।

(६) सद्यः रोग मुक्ति

उसी वर्ष की यह एक दूसरी घटना है, जब शिवहर (मुज़फ्फरपुर) निवासी आयुर्वेदाचार्य पं० राज नारायण मिश्र वैद्य जो मेरे विद्यार्थियों में हैं भयानक उदर रोग से पीड़ित थे। प्रान्त के बड़े बड़े वैद्य डाक्टरों की चिकित्सा हुई, पर कोई लाभ नहीं। "मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की" अभी व्याह के दो वर्ष भी नहीं बीते थे, कि इस दुश्चिकित्स्य व्याधि ने इनके जीवन में निराशा उत्पन्न कर दी थी। एक दिन मेरे पास आकर ये फूट फूट कर रोने लगे। उनकी कारुणिक अवस्था देख मेरा भी हृदय भर आया। सन्ध्या का समय था। नियमानुसार मैं श्री सद्गुरु निवास जाने को उत्सुक था। इन्हें भी इनके मनः शान्त्यर्थ मैं अपने साथ लेता गया। पहुँचा तो वहाँ सत्संग चल रहा था। कीर्तन आरंभ होने में अभी आधे घंटे की देर थी, श्री महाराज जी ने नवागन्तुक व्यक्ति का परिचय पूछा। मैंने संक्षेप में इनकी करुण कहानी सुनाई। रोगी व्यक्ति भी उनके श्री चरणों में रोता हुआ लिपट गया। यह देखकर मुझे आश्चर्य की सीमा न रही, कि श्री महाराज ने अपनी झोली में से नमक सुलेमानी चूर्ण निकाल कर खाने को दिया, और कहा, कि जाओ तुम अच्छे हो गये। केवल श्री हनूमान जी महाराज को पच्चीस हजार नाम (सियाराम) सुना देना। मैं मन ही मन श्री महाराज के इस भोलापन पर हँस रहा था, कि जहाँ बड़े बड़े वैद्य डाक्टरों की कुछ न चली यहाँ नमक सुलेमानी चूर्ण का एक खुराक इनका रोगी को क्या लाभ पहुँचा सकेगा? किन्तु सिद्ध पुरुष के आशीर्वाद रूप में प्राप्त उस तनिक चूर्ण ने सदा के लिये रोग को चूर्ण विचूर्ण कर

दिया। निरोग व्यक्ति आज भी मौजूद है, और स्वयं अच्छे वैद्यों में हैं। श्री महाराज की कृपा का स्मरण कर अब भी वे आनन्द विह्वल हो जाते हैं। इसी तरह एक दूसरा मारवाड़ी युवक जो मेरे ही मोहल्ले का है दमा रोग से वेदम हो रहा था। मेरे साथ श्री सद्गुरु निवास में श्री गुरुदेव के पास पहुँचते ही रोग मुक्त हो गया। तब से फिर कभी दमा ने उस पर आक्रमण नहीं किया, वह व्यक्ति अद्यापि श्री महाराज की अहैतुकी कृपा का ऋणी है।

(७) वर्षा रुकी

श्री गुरु पूर्णिमा (गुरु पुन्नो) की सन्ध्या को जब श्री महाराज स्वयं उपस्थित थे। श्री सद्गुरु निवास में लीला विग्रह की झाँकी समारोह से मनाई जाने वाली थी। दूर दूर के आये शिष्यों और प्रेमियों से निवास खचाखच भरा था। श्री लक्ष्मणा (नदी) आनन्द में फूली नहीं समाती थी। बाढ़ के कारण निवास में आने जाने का मार्ग अवरुद्ध सा था, फिर भी लोग नाव द्वारा आ जा रहे थे। निवास के बाहर वाले प्रांगण (मैदान) में झाँकी की तैयारी की गई। मेघों का अबाध दल उमड़ता घुमड़ता सहसा आ पहुँचा। चारों ओर से सजधज कर आने वाली यह घनघोर घटा अपनी अजस्र रस धारा बहाये विना मानने वाली नहीं थी। वेग से बूँदे टपाटप पड़ने लगीं। तब-हल्ला मच गया, कि अब झाँकी न हो सकेगी। श्री महाराज अलग से झाँकी का आनन्द लेने बैठे भजन कर रहे थे। घबड़ाई हुई जनता को आपने सुस्थिर झाँकी मनाने का आदेश दिया, और कहा "मेघ अभी रुक जाता है, झांकी शुरु करो" ऐसा कह आप पाँच सात अनुरागी शिष्यों को लेकर नाम धुन (कीर्तन) में भगवन्मूर्ति के सामने जुट गये। नाम धुन के आरम्भ होते ही वर्षा रुक गई, झांकी का काम निर्विघ्न मनाया गया। आरती होकर झाँकी समाप्त होते ही मूसलाधार पानी पड़ने लगा। लोग श्री महाराज का जय जयकार करने लगे। आज का यह दृश्य भी अपूर्व था।

(८) अनोखी सूझ

दिव्य प्रतिभावान् स्वामी जी की सूझें अनोखी हुआ करती थीं, और उन से बड़ी बड़ी पेचीली समस्यायें भी हल् होजाती थीं। महात्मा गान्धी के अछूतोद्धार का प्रचार चल रहा था। अछूतों को मंदिर प्रवेश कराने की चर्चा जोरों पर थी। अनेकानेक धार्मिकों का दल भी अछूतों के मन्दिर प्रवेश के पक्ष में था और उनमें कुछ ऐसे थे जो इसका घोर विरोध करते थे। सीतामढ़ी श्री जानकी मन्दिर में भी अछूतों के मन्दिर प्रवेश का हल्ला हुआ और एक दिन, प्रवेश कराया भी गया, पर दूसरे दिन विरोधी दल ने कस कर मुकाबला किया। फल स्वरूप इसके नगर के कुछ गण्य मान्य व्यक्ति जिनमें

बाबू श्री अयोध्या प्रसाद मुखतार आदि मुख्य के स्वयं भी मन्दिर में नहीं जाने की शपथ खाई। शर्त थी, जब तक अछूत मन्दिर में नहीं जाते हम लोग भी मन्दिर के हाते में पैर नहीं रख सकते। लोग आते मन्दिर के बाहरी फाटक से ही दर्शन कर लौट जाते। एक दिन दोनों दलों ने मिल कर निश्चय किया, कि श्री सद्गुरु निवास में श्रीमान् परमहंस जी से निर्णय कराया जाय, और वह निर्णय सबके लिये मान्य हो। सब इकट्ठे हुए। महाराज ने दोनों की बातें सुनी। सुन कर कहा इसमें झगड़ने की कौन सी बात है? जब ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र भगवान् के सक्षात् मुख, बाहु, उरू, और चरण रूप हैं तब बेचारे अन्त्यज (अछूत) भी तो भगवान् के कोई अंग होंगे? तो वह अंग है गुह्य (शिश्नादि)। फिर तुम्हीं निर्णय करो, कि और पूर्वोक्त प्रसिद्ध चार अंग तो खुले भी मन्दिर हो, या घर सर्वत्र आ, जा सकते हैं परन्तु खुले गुह्य अंगों से कोई कहीं नहीं जाता, उन्हें ढँक कर ही जाता है। ऐसी मर्याद है। इसके विपरीत आचरण (नग्न होकर जाना) असभ्यता है। कोई भद्र पुरुष इस नग्न व्यवहार को पसन्द नहीं करेगा। यह ध्यान रखो, कि मुख बाहु आदि खुले अंगों के साथ जैसे पर्दे के साथ गुह्य अंग जाता है, वैसे ही पर्दे के साथ अछूत भी मन्दिरों में सर्वत्र जाते ही हैं। कौन कहाँ उन्हें पूछता, और रोकता है! अतः सनातन शिष्ट आचरण ही श्रेयस्कर है, नग्नता का नाट्य अच्छा नहीं। इस उत्तर ने लोगों को निरुत्तर कर दिया। प्रसन्न हो सबों ने दंड के रूप में मिठाइयाँ बाँटी और प्रस्थान किया।

(९) देश सेवा क्यों नहीं करते?

अभी अधिक दिन नहीं हुए। आज से दश वर्ष पहले यहाँ सीतामढ़ी सबडिवीजन के प्रसिद्ध नेता ठाकुर श्री रामनन्दन सिंह एम० एन० नगरपालिका के अध्यक्ष (चेयरमैन) थे। आपकी गणना सच्चे कर्मवीर देश सेवकों में थी। सिद्धान्त के पक्के और स्वभाव में खरे थे। सन्त-महन्तों की वर्तमान दशा देख इन से आप की घोर घृणा थी। इनकी धारणा थी, कि देश में लाखों की संख्या में ये साधु सन्त नाम धारी जीव पृथ्वी के बोझ हैं, साधुता के वेश में देश सेवा से विमुख देश के ये पक्के दुश्मन हैं। यह पहला ही अवसर था, जब ये मेरे साथ सन्ध्या समय टहलते श्री सद्गुरु निवास में पहुँचे, और वहाँ एक विशाल तूँत वृक्ष के नीचे एक छोटे से काष्ठ मञ्च पर लँगोटी लगाये खुले शरीर बैठे नाम रटते श्री परमहँस जी (मेरे पूज्य गुरूदेव) को देखा, भक्ति से सहसा इनका शिर झुक गया। जियो, और जय हो, के मधुर आशीर्वाद से महाराज ने स्वागत किया। ठाकुर जी ने बैठते ही प्रश्न किया, कि बाबा देश सेवा क्यों नहीं करते कि निकम्मे बैठे बैठे केवल नाम रटा करते हो? स्वामी जी ने सहज भाव से

शीघ्र ही उत्तर दिया, वत्स, मैं तो बराबर देश सेवा ही किया करता हूँ। जब तुम लोग अपने तूं तूं मैं मैं और राजनीतिक दाँव पेंच के गन्दे वातावरणों से देश को दूषित करने लग जाते हो, तब मैं उन्हें श्री राम नाम की लोक पावन सम्मार्जनी से साफ़ कर दिया करता हूँ। तुम्हारे खादी आन्दोलन के पहले से ही मैं मोटा खादी की लँगोटी लगाता हूँ। महाराज की इन मर्मभरी बातों से आप प्रभावित हुए। फिर तो वहाँ एक बार जाकर स्वामी जी का दर्शन कर आना आप का दैनिक कार्यों में था। एकान्त में मुझ से कहते कि इनके दर्शन से मुझे बहुत बड़ी शान्ति मिलती है। बुढ़ापे में भी इनका प्रसन्न मुख मंडल मेरे हृदय में दूना उत्साह भर देता है। इन्हें कभी निठल्ले नहीं देखा, कुछ न कुछ काम में लगा पाया। स्वामी जी के प्रति आप की इतनी गहरी भक्ति हो गयी थी, कि आप इनके चित्र को अपने पास रखते, और उसकी सदैव मानसिक पूजा किया करते। यही नहीं एक बार जब पुनः १६४२ के आन्दोलन में आप ब्रीटिश सरकार द्वारा बन्दी बना लिये गये, और कारागार में आप के नौ महीने रहते हो गये थे श्री महाराज जी के पास आप ने नौ महीने की बात लेकर एक पत्र लिखा। पत्र के दोहाबद्ध उत्तर में महाराज ने जो लिखा उसे आजीवन उनके यन्त्रवत् छिपा कर रक्खा। उस में लिखा था कि बेटा, जब माता के गर्भ में उल्टे टँगे रह कर नौ महीने मजे में तुमने बिता दिये थे, फिर तो ये नौ महीने उसके सामने कुछ भी नहीं है। धैर्य रक्खो, शीघ्र ही तुम मुक्त हो कर मिलोगे, और हुआ भी ऐसा ही। स्वामी जी के कृपापत्र पाने के कुछ ही काल बाद आप जेल से रिहा हो गये।

(१०) हम अपने बादशाह की जय बोलते हैं

विगत भूकम्प के कुछ वर्ष पहले यहाँ (सीतामढ़ी) में एक अंगरेज मैजिस्ट्रेट शासक होकर आया। उसने अपने समय में शहर भर में दश बजे रात्रि के बाद और प्रातः काल छः बजे के पहले बाजे बजाने, कीर्तन और उच्च स्वर में बोलने तक की मनाही कर रक्खी थी। श्री जनक पुर की यात्रा से लौटते हुए श्री महाराज जी का अपने आश्रम में नियमानुसार तीन बजे रात्रि में उठ कर श्री सियाराम नाम का गर्जन, और चार बजे रात्रि से नाम कीर्तन ढोलक झाँझ के साथ शुरू हो गये। सवेरा होते ही मैजिस्ट्रेट का आदेश पत्र मिला, कि रात्रि में हल्ला करने वाला साधु साहब के सामने उपस्थित हो। कुटिया ठीक मैजिस्ट्रेट की कोठी के सामने थी। अतः उसका कोप-भाजन बनना स्वाभाविक था। कचहरी में कोलाहल मच गया। लोग काना फूँसी करने लगे, कि न जाने क्या होगा। एक पेशकार शिष्य दौड़ा हुआ आया, कि सरकार, आप कहीं छिप जाँयें, हम लोग कोई बचने का उपाय सोच निकालेंगे। श्री महाराज जी ने निर्भीकता पूर्वक कहा, कि डरने की

कोई बात नहीं है, मैं स्वयं चल कर साहब से मिलूँगा। देखने के लिये भीड़ उमड़ उठी। श्री महाराज जी साहब के सम्मुख अभय मुद्रा में खड़े हुए। साहब ने कड़कती आवाज़ में पूछा, कि तुम उतनी रात को क्यों हल्ला करता है? झट उसी की टोन में उत्तर मिला, हम हल्ला नहीं करता है। हम अपने बादशाह (राम) की जय मनाता है। साहब (आश्चर्य और हर्ष भरी मुद्रा में) बोल उठा, ओः तुम बादशाह की जय बोलता है? वेल, तुम बड़ा अच्छा आदमी है जाओ। तुम पर हम बहुत खुश हैं। तुम्हें किसी चीज की जरूरत हो कहना। उपस्थित जनता दंग थी। मुस्कुराते हुए महाराज अपने आश्रम पर लौट आये।

(११) वैष्णव धर्म कब से

काशी की घटना है, और इसके हुए अनेकों वर्ष हुए। स्वामी जी हाथ में तुम्बा लिये शौच जा रहे थे, कि एक वितण्डावादी सन्यासी जो विवाद करने की ही गरज से आ धमका, और मार्ग में ही परिहास के स्वर में पूछ बैठा, कि स्वामी जी, आपका यह वैष्णव धर्म कब से है? महाराज ने देखा कि इसके साथ इस समय व्यर्थ का विवाद बढ़ाना अच्छा नहीं। उत्तर प्रत्युत्तर बढ़ाता ही जायेगा, और मैं शौच भी न जा सकूँगा। झट बोले, मेरे हाथ में देखते हो क्या है? सन्यासी ने उपेक्षा बुद्धि से कहा केवल तुम्बा देख रहा हूँ। महाराज जी ने प्रत्युत्तर में कहा, बस जब से यह तुम्बा है, तभी से वैष्णव धर्म की सत्ता समझो। क्यों कि वैष्णवों के सिवा इसे कोई दूसरा धारण भी तो नहीं करता। सन्यासी इस हाजिर जबावी से हार मानकर चलता बना। इधर महाराज ने अपना पिंड छुड़ाया।

(१२) सत्संग—

गुरु ब्रह्म के समान या ब्रह्म से बड़ा क्यों

(१)

आप के सत्संग में अनिर्वचनीय आनन्द सुधा बरसती। आप के उस सुर दुर्लभ सत्संग की सुन्दर शान पर जो चढ़े, वे हीरे की तरह दमक उठे। यथा समय उनके सत्संग विटपी के विखरे सौरभ पूर्ण भाव-सुमन समर्पित किये जाते हैं। एक बार मेरे अनन्य मित्र डाक्टर श्री राजेन्द्र प्रसाद (जो अब की अयोध्या वास करते हैं) ने गुरुदेव के समक्ष कहा ईश्वर शास्त्रों में गुरु को ब्रह्म के समान और कहीं ब्रह्म से भी बड़ा कहा गया है, ऐसा क्यों? आखिर गुरु भी तो उसी ब्रह्म को भजते हैं। यह प्रसंग छेड़ दिया था। मैं चुप था। सोचा देखूँ क्या उत्तर मिलता है? गुरुदेव ने हम लोगों को सम्बोधित कर पूछा, पहले यह तो बताओ, कि माता और पिता इन दोनों में

किसकी श्रेष्ठता है ? मैंने कहा माता की। क्योंकि शास्त्रों में "पितुर्दश गुणा माता" और कहीं "शत गुणा भी कहा है। फिर तो महाराज ने कहा उत्तर स्पष्ट है, रूपक के द्वारा समझो। गुरु सक्षात् मातृ रूप है, और ब्रह्म था पितृरूप। माता की श्रेष्ठता तो इसी लिये है, कि वह पुत्र को गर्भ में धारण करती, उसके तमाम मलमुत्रों को धोती, एवं उसे बाबू बाबा मामा आदि का परिचय कराती है, ठीक इसी प्रकार गुरु रूप माता, अपने शिष्य के सभी मनोमल दूर कर उसे पवित्र रखती, और ईश्वर जीव तथा माया आदि का बोध कराती है, जो पितारूप ब्रह्म से संभव नहीं, अतः गुरु ब्रह्म से भी बड़ा है। डाक्टर ने प्रसन्न हो श्री गुरु के चरन छुए।

(२)

(१३) अन्तः शुद्धि अपेक्षित या वाह्य माला तिलकादि

मेरी इस जिज्ञासा के उत्तर में श्री गुरुदेव के श्री मुख–उपदेश संकीर्तन पत्र में अविकल प्रकाशित हुए थे। उपदिष्ट वचन इस प्रकार थे—यह सच है कि—

जप माला छापा तिलक, सरै न एकौ काम ।
मन काँचे नाचे वृथा, साँचे राँचे राम ॥

अन्तरंग शुद्धि के बिना जितने भी वहिरंग साधन (तिलक मालादि धारण) विशेष महत्त्व नहीं रखते। परन्तु ये दोनों ही विषय अन्योन्याश्रयी हैं। स्नान तिलक जप आदि वहिरंग साधन होते हुए भी अन्तरंग शुद्धि के कारण हैं। बल्कि इन्हें जिन्हें तुम बाहिरी (गौण) साधन समझते हो बिना इनके भीतरी शुद्धि कभी संभव नहीं। यह सहज सिद्ध है कि स्नान तिलक तथा शुद्ध वस्त्रादि के धारण करने से ही अस्वस्थ शरीर भी स्वस्थ और प्रसन्न जान पड़ता है। थोड़ी देर के लिये उसका अनात्म विषयक ध्यान आत्माभिमुखी हो जाता है। उसे एक प्रकार के आत्म गौरव और अपने शुद्ध स्वरूप की अनुभूति होती है। किसी सिपाही या किसी पहलवान को देखो, जब तक वह अपनी वेषभूषा (उर्दी पेटी आदि) और जाँघिया या लँगोट से सज्जित नहीं हो जाता, तब तक उसे अपने सच्चे स्वरूप का भाव अथवा गौरव भी नहीं होता, और न दूसरे ही उससे प्रभावित होते हैं। अतः बहिरंग कहकर तिलक मालादि उपयोगी साधन उपेक्षणीय नहीं सर्वदा ग्रहणीय हैं।

(१४) ईश्वर एक है या अनेक ?

यह एक उच्च अँगरेजी शिक्षा प्राप्त युवक का प्रश्न था। "यदि सचमुच ईश्वर एक है, तो श्री राम कृष्ण विष्णु शिव आदि अनेक रूपों से उसकी

उपासना क्यों ? और उसे यदि अनेक मानें तो "एक मेव द्वितीयं नेह ना नास्तिकिंचन" (ईश्वर एक है) यह श्रुति सिद्धान्त असत्य सिद्ध होगा" यही उनका जिज्ञास्य विषय था। श्री महाराज, ने समझाया, ईश्वर निःसन्देह एक है, किन्तु उसके कार्य, नाम, रूप और सम्बन्ध भिन्न २ हैं। तुम्हारा पिता किसी का भाई, भतीजा, भाञ्जा चाचा, मामा, दादा आदि है, और वह वकालत करने से वकील साहब, एवं जमीन्दारी में मालिक, तथा बाबू साहब के नाम से पुकारा जाता है, पर वह अनेक न होकर जैसे एक है वैसेही ईश्वर भी अनेक नाम रूप से सम्बन्धित होकर भी एक ही है। इसीलिये तो वेदों में "एकं सद् बहुधा विप्रावदन्ति कहा गया है। पूज्य पाद गोस्वामी श्री तुलसी दास जी भी तो अपनी 'विषय' में यही गाते दिखाई देते हैं कि "तोहि मोंहि नाते अनेक मानिये जो भावे" इस साधारण उदाहरण ने युवक के इस विशाल तर्क व्यूह को क्षण भर में ढाह दिया। युवक की जैसे आँखें खुल गईं।

(१५) सुख और दुःख को हम क्या समझें ?

यह एक सत्संग में आई माई का प्रश्न था। उसका कथन था, कि जब हमें सुख (पुत्र पौत्र धन-ऐश्वर्य आदि) प्राप्त होता है, तो हम बड़े आनन्दित हो, और जब हमें उपर्युक्त प्राप्त साधनों का अभाव (दुःख) होता है तो हम अत्यन्त विक्षुब्ध और विकल हो उठते हैं, ऐसी दशा में हम क्या करें ? और कैसे हम इन द्वन्द्वों से दूर होकर अपने ध्येय पथ की ओर अग्रसर हो सकते हैं ? श्री महाराज का उत्तर सरल और बोध गम्य था। बताया कि सुख और दुःख दोनों ही को तुम परमात्मा की दी हुई धरोहर (थाती) समझो। उसकी जब मर्जी हुई अपनी चीज लेली। इसके लिए फिर प्रसन्नता या विफलता कैसी ? उन्हें अपनी वस्तु ही नहीं समझो। फिर तो तुम इन द्वन्द्वों से स्वतः बच जाओगे। इस सुन्दर समाधान से जिज्ञासु वृद्धा का हृदय शान्त और प्रसन्न हो गया।

(१६) शुद्ध सीताराम नाम का छोड़ जप कर आप सदा सियाराम नाम जपा करते है, ऐसा क्यों ? क्या इसमें कोई खास विशेषता है ?

मेरी इस शंका के समाधान में आपने समझाया, कि सीताराम और सियाराम कोई भिन्न नहीं हैं। सीताराम ही तो सियाराम हैं। अन्तर इतना ही है, कि पहला ऐश्वर्य वाचक नाम है, तो दूसरा माधुर्य-वाचक। यही कारण है कि पूज्य मानसकार श्री गोस्वामी जी ने अपने मानस आदि ग्रन्थों में ऐश्वर्य

भाव के घोतन में सीता, और माधुर्य भावों का अभिव्यक्ति में सिया नाम का उल्लेख किया है। माधुर्य मीठा है। मीठा कौन नहीं चाहता ? अतः मेरा यही मीठा (मधुर) नाम अराध्य है। सच तो यह है कि कृष्ण से "कन्हैया" "कान्हा", दीपक से "दिया" और माता से "माँ" और "मैया" शब्द जैसे अधिक प्रेम भरे और मधुर प्रतीत होते हैं, वैसे ही सीता से सिया, नाम अधिक कोमल और मधुर है। श्री सदा शिव ने तभी तो "करतल होंहि पदारथ चारी। "तेइ सियराम" कहेउ कामारी" इसी युगल मधुर नाम को अपनाया है। इसमें एक और विशेषता यह हैं, कि जैसे "राम" सम्बध रहित आनुपूर्विक नाम है, वैसे ही "सिया" नाम भी सम्बन्ध रहित और आनुपूर्विक है। अतः इन दोनों नामों का मेल महत्वपूर्ण है। अन्य सीता, जानकी, भूमिजा, राघव रघुनन्दन आदि भी जितने भी नाम हैं, तत्तद् व्यक्ति विशेष और किन्हीं खास पदार्थों से ही सम्बन्ध रखते हैं। हम मधुर भाव के उपासकों के लिये सु मधुर नाम सियाराम तो सर्वस्व ही है। सीताराम नाम में दीर्घ ह्रस्व के उच्चारण भेद से अर्थ भेद भी हो जाते हैं, पर सियाराम नाम को दीर्घ या ह्रस्व जैसे भी चाहे ले, अर्थ भेद नहीं होता। यही नहीं घंटा में सात हजार नाम जहाँ सीताराम के ले सकते है, वहाँ घंटा में नौ हजार सियाराम नाम के जप होते हैं। आनु पूर्विक नाम के साथ उत्तर भी आनुपूर्विक ही था।

(१७) ठीक साइन बोर्ड है

एक दिन एक पढ़े लिखे व्यक्ति ने माथे पर लगे तिलक (चन्दन) पर कटाक्ष करते हुए पूछा, कि महाराज, इस साइन बोर्ड के लगाने से क्या लाभ ? प्रसन्नता प्रकट करते हुए, महाराज ने उत्तर दिया, तिलक तो ठीक साइन बोर्ड ही है, बेटा ? और यह कहीं ऊँची जगह ही लगाया जाता है ताकि लोग यह समझ सकें, कि यह अमुक बाबू का घर, या दवाखाना है अथवा यह सड़क अमुक स्थान को जायेगी! ऐसे ही साढ़े तीन हाथ के लम्बे चौड़े शरीर के ऊपर (ललाट पर) लगा तिलक यह शरीर किस स्वामी का निवास है, इसका परिचय कराने का सूचक देता है। साइन बोर्ड का काम हो तो तिलक कर रहा है ? हस्तपादादि अंग जहाँ अपने २ काम के लिये हैं वहाँ चार अँगुल की तख्ती रूप ललाट आखिर किस लिये है ? साइन बोर्ड ही के लिये तो !

(१८) गले में गर्दानी (चमौटी) बाँधना भी क्या आवश्यक है ?

यह एक दूसरा परिहास युक्त प्रश्न था, जिसमें गले में बंधी कंठी और माला को गर्दानी से तुलना की गई थी। श्री महाराज का माकूल उत्तर भी

हृदय ग्राही था। बोले, पहले यह तो बताओ, कि तुमने गाय, भैंस, और कुत्ते से लेकर खूंखार बाघ तक के गले भी गर्दानी अवश्य देखी होगी—पर क्या कभी सूअरी (शूकरी) के गले में कभी गर्दानी (चमौटी) देखी है? नहीं, तो समझ लो, कि सूअरी जैसे जीवों के गले में गर्दानी नहीं होती? गर्दानी वाला जानवर जैसे अनेरी नहीं होता, उसका कोई न कोई मालिक अवश्य होता है। उसी प्रकार वह भक्त जिसके गले में कंठी या माला है, वह खास भगवान् का है, यह सूचित करती है।

(१९) क्या लारी मोटर से भी कोई शिक्षा मिल सकती है

श्री जनक पुर जाते समय लारी पर चढ़ते चढ़ते उपर्युक्त जिज्ञासा की गई। जवाब जीभ पर था, बोले, ठीक तो है, भक्ति ही लारी या मोटर है सद्गुरु ही उसका ड्राइवर (संचालक) और जीव ही मुशाफिर (यात्री) है। फिर तो तुम श्रद्धारूपी टिकट लेकर भक्ति की मोटर पर आरूढ़ हो जाओ। गुरुड्राइवर तुम्हें निश्चित अभीष्ट स्टेसन (परमपद) पर पहुँचा ही देगा। अनुकूल और यथार्थ स्पष्ट उत्तर से उपस्थित शिष्य मंडली आनन्द विभोर हो उठी।

(२०) पतिव्रता की तरह एक भतारी बनो, सत भतारी नहीं ?

सत्संग के सिलसिले में मेरे साथी ने पूछा, सभी देवताओं में समान निष्ठा रखते हुए यदि हम उपासना करें, तो क्या हर्ज है? महाराज का विनोद पूर्ण उत्तर था, नहीं, "पतिव्रता की तरह एक भतारी बनो, सत भतारी नहीं"। पतिव्रता जैसे एक ही पुरुष को भजती है, वैसे ही तुम अपने किसी एक इष्ट देव की, चाहे वे श्री राम हों, या श्री कृष्ण, अथवा श्री शिव, एक निष्ठ हो उपासना करो। वह तो सत भतारी (छिनाल) औरत की तरह जो एक पति (इष्टदेव) की उपासना न करे, अनेक पतियों (उपास्य देवों) को भजता है। इसका यह अर्थ नहीं, कि हम किसी एक इष्ट देवता की आराधना करते हुए अन्य देवी देवताओं का तिरस्कार करें। बल्कि पतिव्रता जिस प्रकार अपने एक पति को भजती हुई शेष परिवार का पति का ही अंग मान उनके प्रति सद्भावना रखती है, उसी प्रकार अपने एकमात्र उपास्य देव का भजन करते हुए हमें अन्य देवताओं का उन्हीं का अंग भूत समझ उनके प्रति आदर का ही भाव रखना चाहिये। वे हमारे आदरणीय हो सकते हैं, पर उपास्य नहीं यही स्मरण रहे।

(२१) माँगना बुरा है

माँगना (याञ्चावृत्ति) कितना जघन्य कार्य है, इसी को लक्ष्य कर प्रसंग वश मैने एक बार कहा "माँगना बुरा है" हँसते हँसते श्री महाराज ने

कहा इस में क्या सन्देह? यह तो माँगना शब्द ही बता रहा है कि माँग ना— (माँ गो मत)। अथवा माँगने वाले की माँग (सौभाग्य) नहीं होता। सबके शिर अवनत होगें।

(२२) आप अवतारी पुरुष थे

आप की श्री साकेत यात्रा के एक सप्ताह पूर्व काशी में एक काशी वासिनी नैपाली वयोवृद्ध विदुषी महिला ने जो श्री महाराज को अपना सिद्ध गुरू मानती थी—एक विलक्षण स्वप्न देखा, जब कि यहाँ (सीतामढ़ी में) इस वार काशी हो कर श्री साकेत (श्री अवध) की यात्रा का प्रोग्राम श्री महाराज का बन चुका था। उसने देखा कि श्री महाराज सीतामढ़ी श्री सद्गुरू निवास वाली पर्णकुटी में शिर से पैर तक चादर तान चित्त लेटे हुए हैं, और यह महिला इस प्रतीक्षा में चरणों के पास बैठी हुई है, कि महाराज अब जगेगें। इसे सन्देह भी हो रहा था, कि दिन में इस तरह तो महाराज कभी शयन नहीं करते। इसने कुछ देर प्रतीक्षा करने के बाद श्री महाराज के मुख पर से चादर को जैसे हटाया देखा, कि सहसा एक काक (कौआ) उनके खुले मुख से उड़ कर कुटी के सामने वाले कूप पर लगे बाँस की फुनगी पर जा बैठा, और वहीं से बोला कि "मैं कागभूसुंड हूँ। मैं भगत्नाम प्रचारार्थ ही परमहंस श्री सियालाल शरण जी 'प्रेमलता' के रूप में अवतीर्ण हुआ था। मेरा काम पूर्ण हो गया, मैं अब अपने दिव्य धाम को जा रहा हूँ। चिन्ता न करना।" निर्जीव शरीर पड़ा था। महिला इस दिव्यात्मा के वियोग से फूट फूट कर रोने लगी कि स्वप्न भंग हो गया। महिला इस अद्भुत स्वप्न से आश्चर्य चकित थी, पर सप्ताह बाद ही जब श्री काशीपुरी में ही—जब उनकी श्री शाकेत धाम की सदा के लिये यात्रा हो गई, तब उस स्वप्न की बात से किसी को सन्देह नहीं रह गया। कोई कोई पहुँचे हुए सन्त इन्हें श्री हनुमान् जी का अंशावतार बताते, तो कोई श्री समर्थगुरू रामदास एवं स्वामी श्री रामकृष्ण परमहंस के रूप में इन्हें देखते। ऐसे महामहिमामय पुरुष अवतारी के सिवा दूसरा और हो ही क्या सकता है? महा पुरुषों की लीला अगम्य और अवर्णनीय है।

श्री सियारघुनाथ शरण जी संकट मोचन "काशी" का एक संस्मरण

श्री महाराज जी के श्री साकेत यात्रा के अनन्तर जब कि आप संकट मोचन के श्री राम जी के मन्दिर पर विराजते रहे। ५ वर्ष पहले की बात है, आप के निकट श्री हनूमान जी के पुजारी बेनीमाधव दौड़े हुए आप के पास आये, और बोले, महाराज जी? महाराज जी? चलिये, चलिये, आपके गुरुदेव श्री परमहंस जी, आये हैं। श्री हनूमान जी के निकट नाम सुना रहे

हैं। यह सुन आश्चर्यवत हो कर आप पुजारी जी के सहित दौड़े। आकर देखा तो, ठीक ही श्री महाराज जी जहाँ पर भीतर में बैठ कर नाम सुनाते रहे, वहाँ बैठे नाम सुना रहे हैं। आप दोनों को निकट आते देख कर श्री महाराज जी खड़े हुए, और चौखट लाँघ कर श्री हनूमान जी की भीतरी वाली कोठरी में घुस गये, फिर आप लोगों ने भीतर आकर बिजली जला कर देखा, परंतु कहीं भी कुछ पता नहीं चला, सम्भवतः श्री हनूमान जी के ही शरीर में अन्तर्भाव हो गये हों, इस तरह की आश्चर्यमयी घटना अनेक हैं। एक थोड़े दिनों की बात है, आप कोई कारण वश २॥ बजे रात में नहीं उठ सके, इतने में श्री महाराज जी एक कमंडल जल आप के शरीर में डाल दिया, और बोले, कि सारे इतना सोना चाहिये ? जल्दी उठ ! आप उठ बैठे सारा शरीर भींग गया, बड़े आश्चर्य हो कर अपराध क्षमा कराये, यह लीला महाराज जी के श्री साकेत प्रयाण के पीछे की है।

परमहंस श्री धनुषधारी शरण जी का एक संस्मरण

(श्री महाराज जी और जानकी सखी "एक लोमड़ी")

सर्व भूत स्थितं योमां भजत्येकत्व मास्थितः। सर्वथा वर्त्तमानोऽपि सयोगी मयि पवर्तते, उक्त गीता—शास्त्रोक्त प्रमाणानुसार श्री महाराज जी सभी भूतों में श्री युगल सरकार को ही भाव से दर्शन करते थे, इस पर एक अद्भुत कथा है। श्री सीतामढ़ी में श्री लक्ष्मण जी के तट पर विराजते हुए श्री महाराज जी नित्य नियमानुसार तीन बजे रात में जब परिकरों के सहित गर्जन करने के लिये खड़े होते, तो एक लोमड़ी भी सामने आकर खड़ी हो जाती, तथा गर्जन समाप्त होने पर भी महाराज जी के पीछे पीछे अनुगमन करती, स्नानादि नित्य नियम के समय भी पीछे पीछे चलती, तथा "सद्गुरू निवास" पर लौट कर संकीर्तन करने के समय तक बैठी रहती रात्रि को भी सत्संग के समय आकर सन्मुख ही कुछ दूरी पर बैठ जाती, तथा जब महाराज जी की आज्ञा से इसको प्रसाद मिलता तो पेट भर खा, लेने के पश्चात् अपने बच्चे के लिये भी मुख में लेकर चली जाती, नित्य का यही नियम रहा। यदि प्रसाद मिलने में देर हो जाता तो, निकट आकर परिकरों का कपड़ा मुख से पकड़ कर खींचने लगती, (इसको महाराज जी जानकी सखी कह कर पुकारते रहे) तब दयासमुद्र, श्री महाराज जी बोल उठते, अरे जानकी सखी को देर हो रही है। इसको प्रसाद देदो, खूब लड्डू पूरी मिठाई आदि उपलब्ध प्रसादी इसको दी जाती, नित्य के सत्संग में यह आकर सम्मिलित हो जाती, इसके भाव को देख कर लोग आश्चर्य चकित हो जाते, यह क्रम ४-५ वर्षों तक जारी रहा, भूकम्प के बाद नहीं देखी गयी, लोग कहते, कि यह कर्मच्युत योनि में कोई महात्मा ही थी।

श्री राम जगन्नाथ शरण जी का एक संस्मरण

सतगुरु निवास के वर्त्तमान महन्त श्री राम जगन्नाथ शरण, के पास, (कई वर्ष पहले की बात है) एक—लड़का आया, और कहा, कि हमको भगवत् शरणागत करिये, तब महात्मा जी बोले, तुम्हारा क्या नाम है? वह बोला, 'सियालाल, यह नाम सुनकर आपने भगवत् शरणागत करके उसका नाम, सियालाड़िली शरण, इसलिये रक्खा, कि, पूर्व नाम बड़े महाराज जी का है। वह नाम किसी साधारण मनुष्य का रहना ठीक नहीं, पञ्च संस्कार ग्रहण के पश्चात् वह लड़का महन्त जी से बोला कि महाराज जी एक बात पूछता हूँ। कि अभी मेरे मन में क्या बात आया है। वे बोले को भाई मैं तो कोई अन्तर्यामी परमात्मा नहीं हूँ, जो तुम्हारे मन की बात बताऊँ। वह बोला अच्छा तो मेरे से ही अपने मन की बात पूछिये? आप ने पूछा। और वह ठीक ठीक बता दिया, यह आश्चर्यमयी घटना देख कर आप बोले बच्चा, तुम यह बात किस तरह जानते हो। तब वह बोला कि बड़े महाराज श्री परमहंस जी हमारे पीठ ठोकर आशीर्वाद दिये हैं। कि तुम जिसके मन की बात—जानना चाहेगा। प्रभु कृपा से जब तक ब्रह्मचर्य रहेगा—जान सकेगा, तुझसे मैं प्रसन्न हूँ। क्योंकि जो हमारा नाम है वही तेरा है। पूछने से पता चला है, कि जब तक वह ब्रह्मचर्य रहा तब तक उसमें वह शक्ति रही, ऐसी निर्हेतु की कृपा की जयति जय।

(सालिग्राम शरण) इलाहाबाद का एक संस्मरण

(१)

दरबार है गुरुदेव का आला से भी आला।
सबका ही सुना जाता है फरियाद वो नाला॥

दास इट्रेंस की परीक्षा में असफल हो चुका था, हारा हुआ असहाय रूप में श्री सद्गुरुदेव के यहाँ गुरुमंत्र लेने गया। उन्होंने कहा कि बेटा यदि तू इस धार्मिक इम्तहान में पास हो जायगा, तो तेरा वह इम्तहान कोई चीज नहीं। "मृषा न होइ देव ऋषि-वाणी" के आधार पर गुरु की आज्ञानुसार नाम रटना प्रारम्भ कर दिया। घर वाले पागल का खिताब दे रुष्ट हो गए। भावी वश दूसरे साल भी छमाहीं परीक्षा में तीन तीन विषय में फेल हो गया। चिंता निरंतर बढ़ती ही गई। इसी उधेड़बुन में पड़ा हुआ था, कि एकाएक निद्रा आ गई—देखता क्या हूँ कि इस दास के सम्मुख श्री हनुमंत लाल जी प्रसन्न हो उठ रहे हैं, और श्री गुरुदेव जी सिर पर हाथ फेरकर कह रहे हैं कि 'जागो बेटा पास कर दिया'।

अभी वार्षिक परीक्षा के छः महीने बाकी थे। गुरुवचनों में विश्वास रख निरंतर नाम रटता रहा। जब प्रिपरेशन लीव (कोर्स तैय्यार करने की

एक माह की छुट्टी) हुई तो पढ़ाई होने की कौन कहे नित्य पचीस पचीस दस्त होते, हालत बुरी थी, किन्तु श्री सद्गुरुदेव पत्र द्वारा धैर्य्य बँधाते, तथा प्रोत्साहन देते रहते कि 'बेटा गुरु मेहरवान, तो चेला पहलवान" मस्त रहो, नाम रटो, हनुमान जी सुनवेही करेंगे, तू क्यों घबड़ाता है,"। मैं तो विल्कुल निराश हो चुका था, पर गुरु जी की आज्ञानुसार परीक्षा देने गया और उत्तर पुस्तिका पर प्रथम "श्री सद्गुरुवे नमः, श्री सीतारामनामाभ्यां नमः, श्री हनुमते नमः, जय सियाराम" लिख कर, जो आया उत्तर लिखा।

सच है—जे गुरु चरन रेनु सिर धरहीं * ते जनु सकल विभव वश करहीं॥

सरकारी दया से पास हो गया। अब "बिनु जाने न होय परतीती, बिन परतीति होय नहिं प्रीती"। अस्तु विश्वास इतना बढ़ा, कि तपेदिक, हार्निया, दमा, संग्रहणी और म्लेरिया ऐसे भीषण रोग भी विना दवा किए ही केवल गुरु की दया से दूर हो गए—

मुसीवत के दिन सब कटे जा रहे हैं,
श्री गुरु की कृपा से फतह पा रहे हैं।
नहीं कोई ऐसा कठिन से कठिन रुज,
जो आकर न धमकी दिखा जा रहे हैं॥
मगर है कृपा नाथ की इस कदर जो,
सभी मुँह की अपनी ही खा जा रहे हैं॥

(जय जय गुरुदेव दयालू की जय हो,)

॥ इति संस्मरण ॥

श्री साकेत यात्रा

अब आपके सब कार्य प्रायः सम्पादन हो चुके थे, सम्वत् १९९८ में श्री राम नवमी के उत्सव से ही महायात्रा करने की आप ने ठान ली। और तव से जहाँ कहीं आप पत्र डालते उसमें प्रायः यही संकेत करते कि "शरीर का अब कोई ठिकाना नहीं"। श्री जानकी नवमी के शुभ अवसर पर हम लोगों को भी दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सत्संग के अनन्तर हम लोग प्रार्थना किये, कि सरकार का सदैव की भाँति काशी जी में श्रावण, भाद्रपद मास में चरणार्विन्द पधारना चाहिये। तभी "श्री प्रेमलता शतक" नाम ग्रन्थ का निर्माण संभव होगा, जिसमें कि हर प्रकार के तत्त्व, निर्णय और निष्कर्ष हो, जिसके नित्य प्रति पाठ करने मात्र से ही जीव कल्याण पथ का पथिक बन सके। श्री महाराज जी उत्तर दिये "शरीर का कोई भरोसा नहीं भाई, यदि शरीर रहा तो दर्शन मेला होगा ही" इस प्रकार की वाणी सुनकर सब लोगों को अश्रु आगए और कहने लगे, ऐसा तो महाराज जी कभी न कहते थे, अब यह क्या बात है? श्री रघुपति शरण बंगाली गुरु भाई से बहस, गुरु पूर्णिमा के

अवसर पर पड़ी कि "पहले साकेत कौन जावेगा ? हम कि तुम ?" रघुपति शरण बोले कि "सरकार पहले तो मैं ही जाऊँगा, चाहे आप कैसा भी कहें"। मंगलवार तारीख २२-७-४१ श्रावण कृष्ण त्रयोदशी सम्वत ९८ को सीता मढ़ी से काशी होते हुए, (श्री राम कृपाल शरण जी गोला घाट अयोध्या के बार २ निमंत्रण के कारण) श्री अवध झूलन में जाने के यात्रा का निश्चय किया। चलते समय सदा की भाँति श्री सद्गुरुरामशरण इत्यादि किसी भी शिष्य को साथ नहीं लिया। प्रेमी कृपा पात्र शिष्य केवल सीताराम शरण जी को ही साथ चलने की अनुमति दी। पञ्चमाला और मृगचर्म भी जो कि सदा साथ रखते थे अब की बार छोड़ दिये थे। चलते समय कहा, कि झोपड़ी को उजाड़ देना। अगल-बगल की कुटिया के महात्माओं को बुला कर कहा, कि महाराज हम जाते हैं, कुटिया का ख्याल रखिएगा। सब लोग रेल में बिठलाने आये, सब को प्रेम पूर्वक विदा किया, और सद्गुरुरामशरण जी की पीठ ठोंकी, 'खूब आनन्द से भजन करना मस्त रहना।' यह विदाई का दृश्य बड़ा करुणा जनक था, सब लोग मन ही मन कहते थे, कि महाराज जी इस प्रकार से कभी सावधान करके यात्रा नहीं करते थे, अब की बार क्या विशेष बात है ? उसी दिन श्री रघुपति शरण जी का शरीर छूटगया, और वे महाराज जी से पहले ही अपने कथनानुसार साकेत यात्रा कर दिए।

गुरुवार श्रावण अमावस्या २४-७-४१ को ब्रह्म मुहूर्त्त में तीन बजे काशी पहुँचे। लक्ष्मी नारायण जी के मन्दिर तक पहुँचने के लिए एक कृपापात्र कुली साथ लिया, और तीनों मूर्ति ने भोर में पाँच बजे रेल की लाइन पर लक्ष्मी नारायण जी के मंदिर की ओर चलते हुए हनुमान जी के मंदिर के समीप सड़क के पुल के पास रेल से टक्कर खाने का मिस लेकर साकेत यात्रा की। इस का समाचार सारी काशी में बिजली की तरह फैल गया, और सब नेमी प्रेमी अनुयायी लोग सूर्योदय परही घटना क्षेत्र पर उपस्थित हो गये। तो देखा कि महाराज जी के काशी जी की तरफ चरण, वरूणा की तरफ मस्तक, दाँहिने हाथ की तरफ हनुमान जी का मंदिर, बाएँ हाथ की ओर लक्ष्मी नारायण जी का मंदिर विराजमान था। चेहरे पर बड़ी शान्ती और कान्ती बिराजमान थी, टक्कर की चोट मस्तक के दाहिने भाग में ऊपर की ओर थी। कानूनी कार्यवाही होने के बाद, कुली के शव का कुली लोगों ने अन्तिम संस्कार किया और महाराज जी तथा श्री सीतारामशरण जी का शरीर हनुमान जी के मंदिर पर लाया गया। स्नान करा कर वस्त्र पहना कर दो विमान सजा कर पधराये गये। और बाजे गाजे के साथ घंटा घड़ियाल बजाते हुए लग भग पाँच सौ सती सेवकों के समाज के साथ जयकारे और नाम ध्वनि के तुमुल शब्दों में, मणिकर्णिका घाट पर, मुख्य बाजारों में घुमाते हुए पुष्प तथा पैसों की वृष्टि होती हुई, रास्ते में जगह जगह पर सती सेवकों के स्थलों

पर आरती व फोटो होते हुए लाये गये। यह अपूर्व यात्रा का समारोह देखकर काशी की जनता आकर्षित हुई, और श्री महाराज जी शव के अन्तिम नमस्कार सबने हाथ जोड़ कर किये। घाट पर नाम ध्वनि होने के बाद जल प्रवाह कराया गया और बड़े धूम धाम से सीतामढ़ी, काशी में लक्ष्मी नारायण जी का मंदिर में श्री सद्गुरुरामशरण जी द्वारा और, संकट मोचन मंदिर पर श्री सिया रघुनाथ शरण जी द्वारा श्री-अवध में रामसखी जी के द्वारा भण्डारे किए गए। और आज भी वार्षिक उत्सव सद्गुरु निवास, सेवक के यहाँ, हनुमान जी में, व रामसखी जी के यहाँ व जनकपुर में आनन्द पूर्वक मनाया जाता है सब कोई उसमें महाराज जी के पधारने का अनुभव करते हैं। महाराज जी के शरीर छूटने पर प्रेमी लोग बहुत व्याकुल हुए, और सब की अभिलाषा महाराज जी ने नाना प्रकार के अनुभव करा के पूर्ण की। काशी वालों ने हनुमान जी के मंदिर में महाराज जी को प्रवेश करते हुए देखा। और सीतामढ़ी वालों ने सद्गुरु निवास में, व रामसखी जी ने अयोध्या जी में विराजते हुए, अनुभव किया। इसी पर जयपुर से सँग-मरमर की पाषाण मयी मूर्ति महाराज जी की बनवा कर रामसखी जी ने अपने यहाँ स्थापित की, जिसके द्वारा आज भी अनेक प्रकार के अनुभव प्राप्त हो रहे हैं। और कई बार श्री गुरु आर्चन पूजन इस मूर्ति द्वारा कराये गए। यद्यपि अब महाराज जी का स्थूल शरीर न रहा, परन्तु सूक्ष्म शरीर द्वारा सेवकों और कृपा पात्रों को नित्य प्रति नये अनुभव और दर्शन प्राप्त होते रहते हैं।

उपसंहार

श्री महाराज जी ने जन्म से ही अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन किया, इससे इनका नाम 'बाल-ब्रह्मचारी' पड़ा और परम विरक्त और वैराग्य वान वृत्ति होने से 'परमहंस' और देश के अधिकांश क्षेत्र में विशेषतः चारों धाम मिथिला, अवध, काशी और चित्रकूट तथा इनके बीच के क्षेत्रों में घूम २ कीर्त्तन व नाम का प्रचार किया व कीर्त्तन मंडलियों की स्थापना की इससे इनका नाम 'जय सियाराम, जय २ सियाराम नाम ध्वनि प्रचारक' पड़ा। और वैष्णव धर्म व वेष का प्रचार पुस्तकों, लेख, व्याख्यान, चरित्रों द्वारा व अनेक जीवों को प्रभु शरणागत, व प्रभु सन्मुख करने से 'धर्म प्रचारक' व वैष्णव धर्मावलम्बी' नाम पड़ा। आपके लगभग बीस या बाईस हजार अनुयायी व प्रेमी थे, जिनके हाथों में आपकी पुस्तक पहुँची, अथवा आपका उपदेश सुना, या सत्संग लाभ उठाया, और भगवत नाम के परायण हुए। और लगभग ६५० संस्कार वान शिष्य व शिष्या हैं। जिनमें से आपने लगभग २५० मूर्त्तियों की सम्बन्ध-पत्र प्रदान किया, व शृङ्गार भाव के भेद,

और भावना के रहस्य का ज्ञाता बनाया। उनमें से ५०-५५ परम विरक्त, तरण-तारण, आत्मज्ञानी व तत्त्वदर्शी हुए।

आप षट संपत्ति, षट शरनागति, द्वादश भक्ति अर्थ पंचक, रहस्य त्रय, तत्वत्रय-श्रृङ्गारादि पंचरस, त्रयपादादि प्रभु की विभूति-सरकारी नाम, रूप, लीला, धाम के भेद भाव, पूरक कुम्भक-रेचकादि ध्यान की क्रियायें प्रभु की नित्य नैमितिक लीला भेद, सगुन-निर्गुन ब्रह्म के विचार, और उपासना के अन्तरंग वहिरंग भेदों के भली भाँति ज्ञाता थे।

आपने ५६ वर्ष पर्यन्त घोर तपस्या की—तरुणाई में इन्द्रियों को कसा। कभी राखी छान कर पीकर रह जाते—कभी बेलपत्र ही पा लेते, कभी कन्दमूल फल ही पा लेते। वृद्धाई तक एक संध्या ही सूक्ष्म भोजन का नेम रखते। साधन अवस्था में कभी ३ घं० से अधिक नहीं सोये। बोलते तो आप बहुत ही कम थे। नाम का नियम भर पेट खूब किया, और कराते रहे। किशोरी जी की ओर से आपकी २) रोज वृति बँधी हुई थी। उसी से आप प्रयोजन रखते—शेष चढ़ावे इत्यादिको शिष्य लोग वर्तते थे, तथा पात्रों को दे देते। तरुणाई में वृक्षों के नीचे का वास—सब ऋतों में करते रहे—चाहे जितना जाड़ा ओला और पानी बरसे। जीव जन्तु भी सदा जंगलों में अनुकूल रहे 'अहिंसा प्रतिष्ठायाँ तत्सन्निधौ वैरत्यागः" को चरितार्थ करके दिखा दिया।

श्री महाराज जी बाल ब्रह्मचारी, अत्यन्त तेजस्वी,-शास्त्रवेत्ता,-पूर्ण तत्वदर्शी,-अनुभवी,-महाज्ञानी, दृढ़ निश्चयी,-गुण राशि, और महापुरुष थे। इनमें शौर्य, वीर्य, त्याग, तितिक्षा, क्षमा, दया, शम, दम, सत्य, अहिंसा, सन्तोष, शान्ति, वल, तेज, न्याय-प्रियता, नम्रता, उदारता, लोक प्रियता, स्पष्ट वादिता, साहस-ब्रह्मचर्य, विरति, ज्ञान, विज्ञान, गुरू प्रभु परम अनुरागी, तत्ववेत्ता, गुरू सेवा आदि प्रायः सभी सद्गुण पूर्ण रूप से विकसित थे। परम अनन्य नाम जापक श्री सीताराम जी महाराज के स्वरूप और तत्व को भली भाँति जानने वाले, और उनके एक निष्ठ पूर्ण श्रद्धा सम्पन्न और परम प्रेमी भक्त थे।

आप परम तपस्वी—वैरागी—परमहंस—भजनानन्द कट्टर—धर्मवान्—२४ दैवी सम्पत्ति गुणों से संयुक्त सिद्ध मूर्ति थे। सरकारी आज्ञा का पालन करते हुए। जीवों को आत्मज्ञान करा—निज स्वरूप का बोध बता—प्रभु सन्मुख करते कराते—धर्म व नाम का प्रचार करते—पैदल ही तीर्थ पर्यटन करते—इस लोक में आनन्द कर, और सती सेवकों को आनन्द देते, दुन्दुभी बजाते अपने नित्य परिकर स्वरूप को प्राप्त हुए।

बोलो भक्त और उनके भगवान की जय॥ गुरुदेव भगवान की जय॥

इति श्री प्रेमलता वृहद् चरित्रायाम् पञ्चम खण्ड समाप्तम्।

॥ परिशिष्ट ॥

परमहंस महाराज जी के परम कृपापात्र अन्तरङ्ग परिकर :—

श्री सिया सुन्दरी शरण जी

आप श्री महाराज जी के कृपापात्रों में से हैं। श्री महाराज जी की प्रेरणा से आपने श्री सीता मढ़ी धाम की वृहद् परिक्रमा की स्थापना की। और अब संत भगवन्त के सहयोग से ढोलक झांझ पर बड़े समारोह के साथ सती सेवक व गृहस्थों के संयुक्त कीर्तन करते हुए १५ दिन में वैसाख कृ० ८ से श्री जानकी नौमी पर्यन्त प्रति वर्ष सम्पादन करते हैं। यह लोक तथा धाम उपयोगी, महत कार्य्य सम्पादन हुआ है। आप बड़े उत्साह से नियम पूर्वक श्री मिथिला धाम की परिक्रमा ढोलक झाँझ पर कीर्तन करते हुए प्रति वर्ष करते हैं। श्री महाराज जी की रेक टेक को यथा शक्ति निभाये जाते हैं। आश्विन में रामनगर लीला-श्रावण में श्री अवध की झूलन, अगहन में विवाह पञ्चमी की आप नियम यथा विधि चला रहे हैं। गुरु कृपा की बलिहार।

श्री रघुपति शरण जी

आपकी भाव भरी दिव्य झाँकी जिन्होंने देखा वही जानते हैं। आपको श्री युगल सरकार साक्षात् दर्शन दिये रहे। आपकी गुरु निष्ठा की बलिहारी, आप श्री महाराज जी के साथ कई वर्ष तक रहे। अन्त में श्री महाराज जी के श्री साकेत प्रयाण का समय निश्चय जानकर सेवा के लिये श्री महाराज जी से पहिले ही दिन शरीर छोड़ कर साकेत पधारे।

श्री सुतीक्ष्ण जी "परमहंस"

आपके भाव को कौन कथन कर सकता है। आप ऐसे देहाध्यास को छोड़ चुके थे, कि स्थूल शरीर में तनिक भी ममता नहीं, अस्तु एक दिन सरकार के विरह में व्याकुल होकर सोचा, की इस शरीर को कछुवों को जीते जी खिलाना चाहिये, अस्तु मृतक प्राय होकर श्री सरयू जी में पड़ रहे। कछुवों ने सारे शरीर नोच डाला, परन्तु कुछ भी नहीं बोले। यह समाचार सुनकर एक गुरु भाई ने वहाँ से बलात्कार पूर्वक निकाला; और औषधि करना चाहा। आपने कहा, कि खबरदार हम कोई भी औषधि नहीं करा सकते, अन्त में कीड़े पड़ गये तो जमीन पर गिरने से उन्हें उठाकर उन्हीं घावों में यह कहते हुए छोड़ देते रहे, कि आप लोग नीचे क्यों जाते हैं। तकलीफ होगी

इस तरह के मुद्रा में कई दिनों तक रहकर सानन्द शरीर छोड़, श्री प्रिया प्रीतम से जा मिले, आपके ऊपर श्री गुरुदेव जू की कृपा की बलिहारी।

श्री सिया किशोरी शरण जी "पुजारी"

(गोलाघाट, अयोध्या जी)

आप भी पूर्व शिष्यों के तरह श्री महाराज जी के परम कृपापात्र हैं। आप के भाग्य की क्या सराहना की जावे, आप बीसों वर्ष से श्री सद्गुरु सदन में, पण्डित राज महर्षिवर अनन्त श्री सम्पन्न स्वामी श्री श्री जानकीवर शरण जी महाराज "परात्पर गुरुदेव" की सेवामें तन मन धन न्योछावर किये हुये हैं। समस्त गुरु भाई बहिनों से पूर्ण प्रेम बनाये रखते हैं।

अस्तु आपके ऊपर गुरुदेव भगवान की कृपा की बलिहारी।

श्री रामसखी देवी

(गोला घाट, अयोध्या जी)

आपके भाग्य को कौन सराहना करे, जो, कई वर्षों तक श्री महाराज जी के ही साथ २ रहीं। और काशी से श्री अयोध्या, "गोलाघाट" प्रत्यक्ष रूप से, रासकुञ्ज का निर्माण कर अष्टयाम सेवा में सिद्ध हुईं। आपने श्री महाराज जी की स्फटिक मूर्ति बनवाकर २००० सं० में प्रतिष्ठा करायी, और सदैव युगल सरकार को ही लाड़ लड़ाती हुई, अब तक स्वस्थान में विराजती हैं, इस वर्ष भी अषाढ़ शुक्ला ७ मी सं० (२००८) को अचल मूर्ति, भाई श्री राम राजेन्द्र शरण जी, सीतामढ़ी की प्रेरणा से संगमर्मर की प्राण प्रतिष्ठा बड़े धूमधाम से सम्पादन की, आप सरकारी अष्टयाम सेवा भाव पूर्वक करते हुए संस्कार का साक्षात्कार प्राप्त कर सद्य लीला स्वरूप को प्राप्त हुईं, अपाको श्री युगल सरकार तथा गुरुदेव की प्रत्यक्ष झाँकी का लाभ प्राप्त हो चुका है। आपके ऊपर श्री सद्गुरु कृपा की बार बार बलिहारी।

श्री प्रिया प्रीतम शरण जी

('मधुकरकुञ्ज, जनकपुर' धाम)

आपकी ऐसी २ लीलाएँ हैं, जो कहे नहीं जा सकते, आपने बाग तड़ाग से श्री जनकपुर आते समय दिव्य मिथिला जी का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त किया, तथा श्री ज्ञानकूप पर श्री महाराज जी के शरीर छूटने पर विरहाग्नि तीव्र होने पर श्री महाराज जी के दर्शन प्राप्त किये, आप अपना भाव छिपाये रखते, व्यवहार में बड़े साधारण तथा निष्कपट तथा गम्भीर मूर्ति हैं, श्री किशोरी जी की कृपा कटाक्ष साक्षात् रूप में प्राप्त कर चुके हैं, सदैव भावना में

लीन रहते हुए भी नाम और वेष के प्रचार करते हुए श्री गुरु महाराज जी की कीर्ति का डंका, जनकपुर धाम में आपने बजा रक्खा है, आपके ऊपर श्री गुरु कृपा की बलिहारी, आप तरण तारण रूप को प्राप्त कर चुके हैं।

"श्री सियानाथशरण जी" फलहारी

देखा गया है, कि श्री महाराज जी अपने परम कृपा पात्रों को, जिन्हें, चपेटा या बेत से ताड़न किये उनका उद्धार ही हो गया, कितने तो रोगो मुक्त हुए, और कितने—नाम जापक सिद्ध महात्मा—इस पर अनेक घटनाएँ हैं, स्थानाभाव से १—२ घटनाएँ दी जाती हैं। जब "फलाहारी" श्री महाराज जी के शरणागत हुए, तब, बड़े गुरू भ्राता श्री सियारघुनाथशरण जी, से मार्जनी लेकर झाड़ू लगाने की सेवा के लिये तत्पर होने के अपराध पर, (इसलिये की आप के गुरूभ्राता जी मार्जनी लगाने उठे, और आप संकोच वश उनसे मार्जनी लेकर स्वयं सेवा करना चाहते थे)। सहसा आसन से उठकर एक चपेटा बड़े जोरों से आपके कपोल पर जमा, इसका ऐसा प्रभाव पड़ा जो वर्णनातीत है। उसी दिन से आप सिद्ध हो गये, अखण्ड वृत्ति धारण कर सवालाख, श्री सियाराम नाम बारह वर्ष तक, फलाहार वृत्ति से जपकर श्री चित्रकूट के "बाँके सिद्ध" नामक स्थल पर २७ दिन पर्य्यन्त निराहार रहकर श्री प्रियाप्रीतम, के वियोग में संखिया विष खाकर शरीर छोड़ना चाहा, कि सच्ची प्रीति देखकर रात्रि के समय श्री युगल सरकार आय मिले, फिर क्या था, आप कृत कृत्य हो गये, इस तरह कुछ काल तक वहाँ नामानुष्ठान करने के अनन्तर सरकारी आज्ञा से युगल नाम व संकीर्तन प्रचार हेतु अपनी जन्म भूमि विहार प्रान्त राँची जिला पधारे, और जय सियाराम नाम का डंका बजाया। श्री हनुमन्त लाल जी का ध्वजा का प्रचार स्थान २ प्रति कराया, संकीर्तन के नेम कराये, इस तरह बहुतेरे जीवों का उद्धार कर अपनी शक्ति अपने परिकरों में देकर श्री साकेत पधारे।

श्री सतगुरु रामशरण जी "मधुरलता"

आप श्री महाराज जी के परम अन्तरङ्ग परिकर, थे सेवा में सदा रहते रहे, जब कुछ दिनों के सत्सङ्ग से ही लोगों को ये सिद्धि मिली है, तो जो उनके साथ रहने वाला होगा, उसकी महिमा कौन वर्णन करे। नामजप के प्रताप से आपने बहुत से ग्रन्थों की रचना की, आप कई भाषा के विद्वान रहे। आपके ही परिश्रम का फल श्री सद्गुरु निवास नामक स्थान, श्री सीतामढ़ी में विराजमान हैं। आपके बहुत से कृपापात्र शिष्य हुए, इस तरह तरण तारण होकर श्री महाराज जी के साकेत प्रयाणानन्तर ही आपका भी श्री

साकेत यात्रा हुई। आप ऐसे सहनशील रहे। कि कोई अपराध पर श्री महाराज जी के द्वारा भूरिशः ताड़ित होने पर भी सदा प्रसन्न रहते, श्री सद्गुरु निवास के श्री महान्तपद को आपने स्वीकार कर उक्त स्थान की उन्नति की, आपकी लीलाएं अनेक हैं, यहाँ विस्तार के भय से परिचय मात्र दिया गया, इस वक्त आपके स्थान में श्रीराम जगन्नाथ शरण जी, महान्त पद पर स्थित हैं। आपको साक्षात्कार लाभ, कई बार मिला, अपने समय के प्रसिद्ध रसज्ञ-पंडित-कवि-ग्रन्थ करता, और व्योहार कुशल महात्मा थे, आपके ऊपर सद्गुरु कृपा की बलिहारी।

॥ श्री सियाराम शरण जी परिब्राजक ॥

आपने कलि काल में श्री महाराज जी के दिये हुए नाम रूपी कलप तरु और अमोघ अस्त्र का देश के कोने कोने में डंका बजा दिया। श्री सीता मढ़ी जानकी महल में १ वर्ष अखण्ड कीर्तन सङ्गोपाङ्ग सम्पादन करके १४ वर्षीय अखण्ड कीर्तन का संकलप लेकर महाराज जी के धर्म ध्वजा को फहराया है। आपके नाम नेष्ठा की बलिहार।

॥ श्री अयोध्या शरण जी मधुकरिया ॥

आपने नाम वेष की रेख टेक रखते हुए मधुकरी वृति को अपनाया है। पन्ना में १ पर्ष का अखण्ड कीर्तन करके नाम का परत्व व महात्म्य कीर्तन कर दिखाया, धन्य है आप की दृढ़नेष्ठा।

॥ श्री सिया सहचरी जी ॥

(मुजफ्फररपु)

आपने श्री सद्गुरु निवास सीतामढ़ी में युगल सरकार की प्राण प्रतिष्ठा भोग राग के लिये भूमि तथा स्थान की उन्नति सहर्ष और उत्साह पूर्वक तन, मन, धन, से किया। आपके गुरु नेष्ठा की बलिहारी।

॥ सीताराम शरण जी प्रेमी ॥

यह नामके दो कृपा पात्र महाराज जी के हुए हैं। एक मूर्ति चित्र कूट में भजन भावना करके। सरकारी साक्षातकार प्राप्त कर परम रसज्ञ वृति को धारण कर पधारे। आप के हस्तलिखित पत्र बड़े प्रभाव शाली और उपदेशात्मक हैं।

दूसरे श्री महाराज जी की सेवा में रहते हुए, लीला के बड़े प्रेमी हुए हैं। श्री महाराज जी के साथ ही साकेत यात्रा काशी में की, आप के प्रेम तथा गुरुनेष्ठा की बलिहार।

श्री सियारघुनाथ शरण जी

संकट मोचन काशी

आपही वर्तमान समय में सर्व प्रधान शिष्य हैं, आपको श्री सद्गुरू कृपा प्रकाश ग्रन्थ की तीन हस्त लिखित लिपि तैयार करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। चित्रकूट तथा काशी में रामघाट पर नाव में एकान्त स्थल में रहकर अखण्ड भजन करने का आपको श्रेय है। आपको वहीं सिद्ध पुरुषों के दर्शन तथा युगल झाँकी तथा महाराज जी का साक्षातकार आपको प्राप्त हुआ है। आप पर गुरू कृपा की वलिहारी।

इसी प्रकार से महाराज जी के ५०-५५ शिष्य शिष्यागण आत्म ज्ञान प्राप्त कर, सरकारी कृपा का अनुभव कर, तरण तारण हो गये हैं। सबका उल्लेख करना कठिन है, और अनावश्यक भी। इसी प्रकार श्री दाशरथी शरण पं० उपेन्द्र मिश्र श्री परमहंस धनुषधारी शरण श्री सिया भुवनेश्वरी शरण सिया रघुनाथ शरण (पटना) परमानन्द शरण, सियाराम सरूप शरण, बंगाली भाई राम प्रिया, कौशिल्या देई, लक्ष्मणा देई आदि।

अमर कीर्ति :—

अर्थात्

श्री सद्गुरु चरित्र "श्री प्रेमलता चरितामृत :—

में सहर्ष सहयोग देनेवाले बड़भागी व्यक्तियों की नामावली"

(१) श्री किशोरी; श्री चन्द्रकला; सियाभुवनेश्वरी, अरुन्धती, जनक नन्दिनी शरण, रामजीवन शरण आदि प्रियपरिकरों के सहित—श्री जानकी नाथ शरण "प्रेम अली" मु० पिठौरिया-राँची ६००)

(२) श्रीराम भोला शरण उर्फ "भोलाराम मोदी तथा उनकी लड़की श्रीमती हँस कला देवी।" मु० ठाकुर गाँव (राँची) २१०)

(३) श्री शालिग्राम शरण जी तथा श्री रामबालक शरण जी सपरिकर इलाहाबाद ११०)

(४) श्री सियाराम स्वरूप शरण जी "सुहागलता" काशी १०५)

(५) श्री लक्ष्मण शरण "उर्फ लट्टूराम मोदी परिकर सहित। मु० ठाकुर गाँव (राँची) १०५)

(६) श्रीराम गङ्गा शरण, उर्फ गङ्गाराम, अस्सी, काशी १००)

(७) श्री रामगुलाम शरण ५१)

(८) श्री सियाराम शरण, उर्फ बालगोविन्द राम मोदी सपरिकर २५)

(९) देवी सिंह "मु० वालालोंग" जि० (राँची) २५)
(१०) श्री सियारघुनाथ शरण-पटना २५)
(११) श्री रामसाधू शरण २५)
(१२) श्री राममंगल शरण २५)
(१३) श्री रघुवीर शरण-काशी २०)

❀ सर्व व्याधि नाशक सिद्धि यन्त्र ❀

(१)
लाभ यन्त्र

८	१	६
३	५	७
४	९	२

ताम्र पत्र पर बढ़ियाँ लिखिकर नित्य नियम पूर्वक दर्शन करने से अभीष्ट दाता है।

(२)
रोग नाशक यन्त्र

सी	म	ऊ
र	स	रू
भ	ल	ह

ताम्र पत्र या भोज पत्र पर अनार की कली से लाल चन्दन से लिखिकर धूप दीप दिखाकर रोगी को ९ दिन तक भाव पूर्वक दिखाने से रोग मुक्त होता है। इसकी कुन्जी सत्संग द्वारा जानो।

(३)
हनुमत यन्त्र
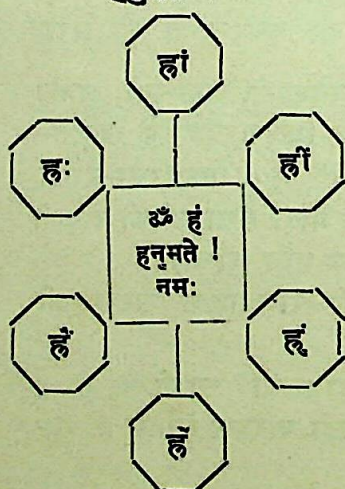
भूत प्रेत बाधा निवारणार्थ बच्चों के भय व मुखन्डी आदि निवारण अर्थात ग्रह-बाधा हटान हेतु इस जन्त्र को सिद्धि कर झाड़े तथा भोज पत्र में लिखिकर बाँध दे।

(४)
बीसा यन्त्र

६	३	६	५
२	९	२	७
४	५	४	७
८	३	८	१

गृहभूत पिशाच विनाश करम्।
विषम ज्वर रोग विपत्ति हरम्॥
अहिचोर निशाचर शत्रु हनम्।
नव नाथ समुच्चय यन्त्र मिदम्॥

(५)

सर्व सिद्धि दायक श्री राम विग्रह यन्त्र
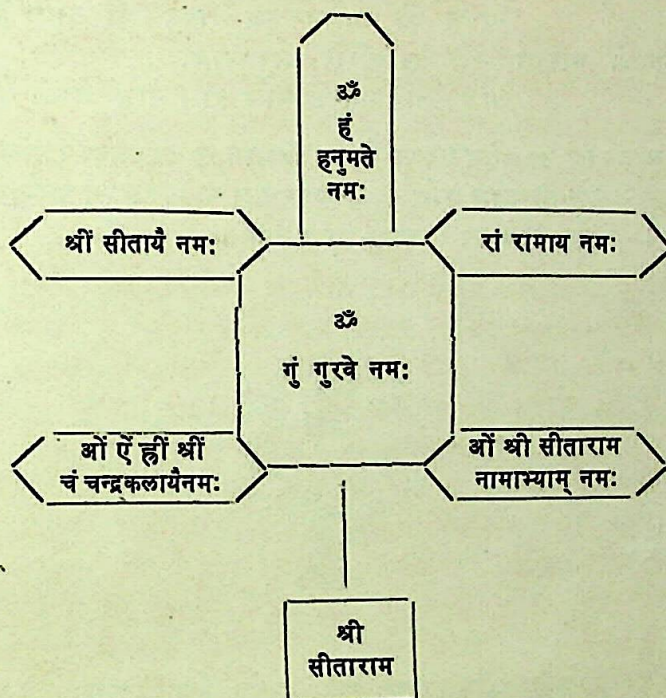
यह महामंत्र सर्व सिद्धि प्रदाता-यश लाभ-जय इष्ट दर्शन-भक्त कराने वाला है, भक्ति का मूल, और सर्व आधि व्याधि रोग शोक संताप दुःख दारिद्र का हनन करता है। सिद्ध करने पर विशेष सुखदाई है। कलिकाल में कलपतरु है।

उपरोक्त सर्व मन्त्रों को सिद्धि करने की विधि :— नित्य नियम से प्रातः शुद्ध होकर अन्तर्मुख वृति से श्री गुरु सन्मुख या श्री हनुमत सन्मुख बैठ कर (विशेषतः ग्रहण के समय श्री राम नवमी-श्री जानकी नवमी-नवरात्रि में विशेष सिद्धि देते हैं) ताम्र पत्र या भोज पत्र पर अनार की कलम लाल-चन्दन से लिखिकर मन्त्र को चौकी पर पधरावे। धूप दीप नैवेद्य दक्षिणा-नमस्कार कर २५००० हजार सियाराम नाम सुनावे, और इस मन्त्र का ७ वार पाठ करे :—

अद्भुत यह मंत्र सर्व तंत्र है स्वतंत्र जाके,
ऋद्धि सिद्धि दायक खल घायक सुर स्वामी हैं।

श्री सियारामनामाष्टक

जप तप संयम नेम अपारनि किये कठिन व्रत तीरथ धाम ।
नृत्य गान विज्ञान ध्यान बहु करि देखे अभ्यास तमाम ॥
दान धर्म शुभ कर्म कमाई करि करि वितयो जन्म ललाम ।
प्रेमलता पै सब विधि पाये सबते अच्छे जय सियराम ॥ १ ॥
मीन, वराह, कमठ, नरहरि, वलि, वामन, राम, कृष्ण, घनश्याम ।
बौद्ध, कलंकी, व्यास, पृथ्युहरि, हंस, धनवन्तरि, हयग्रिव नाम ॥
यज्ञ, ऋषभ ध्रुव धेनु धन्वन्तरि वद्री, कपिल, सनक, जित काम ।
प्रेमलता पै सब विधि पाये सबते अच्छे जय सियराम ॥ २ ॥
सेतुवन्ध, रामेश्वर, त्रपी लछिमन बाला जी सरनाम ।
श्री जगदीश्वर पूजनीयँ जग गङ्गा सागर सम्भल ग्राम ॥
पशुपति शङ्कर मुक्ति नारायण श्रीरणछोर द्वारिका धाम ।
प्रेमलता पै सब विधि पाये सबते अच्छे जय सियराम ॥ ३ ॥
तप्तकुण्ड गङ्गोत्तरि धारा हरिद्वार केदार ललाम ।
मान सरोवर पंपासर श्री लछिमन भूला कठिन सुठाम ॥
गिरि सुमेरु कैलास हिमाचल विन्ध्याचल आदिक अभिराम ।
प्रेमलता पै सब विधि पाये सबते अच्छे जय सियराम ॥ ४ ॥
काशीपुरी. अयोध्या मिथिला मथुरा चित्रकूट प्रद काम ।
रामराज श्री विष्णु काञ्ची पद्मनाभ उज्जैन ललाम ॥
निमिषारण्य सु कुरुक्षेत्र कल गोदावरी हरण अघधाम ।
प्रेमलता पै सब विधि पाये सबते अच्छे जय सियराम ॥ ५ ॥
मन्दोदरी, अहल्या, कुन्ती, द्रौपदि, तारा, आदि सु बाम ।
काम धेनु सुर भोग कल्पतरु सुखद पदारथ अपर तमाम ॥
ब्रह्म लोक वैकुन्ठ अमर पुर आनँदमय गावत श्रुति साम ।
प्रेमलता पै सब विधि पाये सबते अच्छे जय सियराम ॥ ६ ॥
योग, साधना, जादू, टोना, मौन, तपस्या, वन आराम ।
रवि शशि ग्रहा नक्षत्र लगन दिन निगमागम बुध जन विश्राम ॥
भूत प्रेत सुर साधु सिद्ध मुनि देखेउ विधि सिधि विद्या धाम ।
प्रेमलता पै सब विधि पाये सबते अच्छे जय सियराम ॥ ७ ॥
शैव शाक्त वैष्णव सन्यासी पट दर्शन अवधूत अठाम ।
मतवादी बहु वेष सम्प्रदा देखेउ मारग दाहिन वाम ॥
कर्म उपासन ज्ञानकाण्ड तिहुँ किरियाँ करतव किय वशुयाम ।
प्रेमलता पै सब विधि पाये सबते अच्छे जय सियराम ॥ ८ ॥

नोट :—२॥) निछावर पर 'गुप्ता बुकडिपो' लङ्का, काशी से भी यह ग्रन्थ मिलता है।

जय सियाराम जय जय सियाराम

श्री नाम महाराज जी की स्तुति

* छन्द *

जय जयति श्री सियराम नाम अकाम जन मन रञ्जनम् ।
जय जयति सब सुख धाम पूरन काम भव भय भञ्जनम् ॥
जय जयति अशरन शरन अभरन भरन अघ दल गञ्जनम् ।
जय जयति मानस मलिन के प्रभु अमल अनुपम मञ्जनम् ॥ १ ॥
जय जयति तारन तरन कलिमल हरन मोद बढ़ावनम् ।
जय जयति ब्रह्म परेश परतम सेव्य अग जग पावनम् ॥
जय जयति आनन्द कंद मति भ्रम फन्द द्वन्द नशावनम् ।
जय जयति जन गुन प्रकट कर अपराध अवगुन दावनम् ॥ २ ॥
जय जयति श्री महराज साहब नाम सब विधि लायकम् ।
जय जयति वारक जपत जीवनि सकल अभिमत दायकम् ॥
जय जयति रवि शशि अनल कारन कार्य पर निर्मायकम् ।
जय जयति ईश्वर ब्रह्म निर्गुन सगुन सुर मुनि नायकम् ॥ ३ ॥
जय जयति अचल प्रताप चहुँ युग काल तिहुँ कल राजतम् ।
जय जयति नाम निशान निर्भय सकल दिशि नित बाजतम् ॥
जय जयति जापक नाम के जिन्हि निरखि यम गन भाजतम् ।
जय जयति तिन्हि 'सियलाल' नाम सु शरन होत न लाजतम् ॥ ४ ॥

दोहा —जय करुनाकर प्रनत हित, समरथ स्वामी नाम ।
जय उदार रट देहु निज, 'प्रेमलतहिं' वसुयाम ॥

सियाराम सरूप शरण उपनाम 'सुहागलता' कृत प्रकाशित ग्रन्थों की सूची :—

(१) कल्याण की साधना
(२) श्री वैष्णव धर्म प्रश्नोत्तरी
(३) चतुष्ट गुटका (बड़े सरकार का)
(४) पद संग्रह (चाट)
(५) श्री हनुमत प्रार्थना
(६) श्री प्रेमलता शतक
(७) श्री सीता तत्व प्रकाश
(८) श्री बृहद सम्बन्ध पत्रम्
(९) श्री वैश्य कुल भूषण
(१०) श्री प्रेमलता बृहद चरित्रम्

पुस्तक मिलने का पता :—सङ्कट मोचन, काशी ।

जय सियाराम जय जय सियाराम

[illegible] काशी हिन्दू यूनिवर्सिटी प्रेस, बनारस ।

नये निबन्ध